

# सूरसागर-सार

अर्थात्

सूरसागर के लगभग ८०० अत्यंत उत्कृष्ट पदों का संकलन



संकलनकर्ता

धीरेन्द्र वर्मा

साहित्य भवन लिमिटेड

इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : सन् २०११

मूल्य साढ़े चार रुपया

## वक्तव्य

सूरदास हिंदी साहित्य गगन के सूर्य माने जाते हैं किन्तु इस महाकवि की प्रसिद्ध कृति सूरसागर का पठन पाठन उतना नहीं हो पा रहा है जितना होना चाहिए। इसके अनेक कारण हैं। एक तो यह ग्रंथ बहुत बड़ा है। दूसरे इसमें अनेक स्तरों की सामग्री मिश्रित रूप में पाई जाती है। तीसरे इसका कोई अच्छा संस्करण कुछ वर्ष पूर्व तक उपलब्ध नहीं था। अब सभा का सुन्दर संस्करण प्राप्य है किन्तु उसका मूल्य २०) है जो साधारण पाठक अथवा विद्यार्थियों की पहुँच के बाहर है।

उपर्युक्त कठिनाइयों के कारण सूरसागर के अनेक संकलन प्रकाशित हुए, किन्तु ये प्रायः वेङ्कटेश्वर ग्रंथ के संस्करण के आधार पर तैयार किए गए थे और यह संस्करण बहुत संतोषजनक नहीं था। इसके अतिरिक्त इन संकलनों में पद-चयन पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए था उतना नहीं दिया गया। “सूरसुपमा” में ये दोष नहीं हैं किन्तु यह केवल सवा सौ पदों का संग्रह है जो सूरसागर का ठीक परिचय कराने के लिए अपर्याप्त है। अतः सूरसागर के एक अच्छे प्रतिनिधि संग्रह की आवश्यकता बनी ही रही। “सूरसागर-सार” के द्वारा इस आवश्यकता की पूर्ति का यत्न किया गया है।

प्रस्तुत संग्रह में सूरसागर के लगभग ५००० पदों में से ८१७ अत्यन्त उत्कृष्ट पदों का चयन है। संग्रह का आधार सभा का संस्करण है। विनय तथा भक्ति के पदों के उपरान्त कृष्ण चरित सम्बन्धी पदों को निम्नलिखित छः शीर्षकों में विभक्त किया गया है :— १. गोकुल लीला, २ वृंदावन लीला, ३. राधा-कृष्ण, ४. मथुरा गमन, ५ उद्धव-संदेश, और ६. द्वारिका-चरित। एक प्रकार से कृष्ण-जन्म से लेकर राधा-कृष्ण के अंतिम मिलन तक का संपूर्ण कृष्ण-चरित क्रमबद्ध रूप में इस चयन में मिल सकेगा। प्रत्येक शीर्षक के अन्तर्गत अनेक उपशीर्षकों में पद-समूह विभाजित किया गया है। ये उपशीर्षक भी कथा क्रम के अनुसार हैं।

इस संकलन के सम्बन्ध में यह दावा तो नहीं किया जा सकता कि इसमें सूरसागर के समस्त उत्कृष्ट पद आ गए हैं किन्तु इतना निश्चित है कि जो पद इसमें हैं वे अत्यन्त सुन्दर पदों में से हैं। केवल कुछ साधारण पद कहीं-कहीं

कथा की शृङ्खला जोड़ने के लिए रखने पड़े हैं। जो हो, प्रस्तुत चयन में संग्रहकर्ता के ३० वर्षों के सूरसागर के पठन-पाठन और मनन का अनुभव संनिहित है, तो भी रुचि विभिन्नता के लिए बराबर स्थान रहेगा।

परिशिष्ट स्वरूप कुछ राम-चरित संबंधी पद दे दिए गए हैं। दूसरे परिशिष्ट में सूरसागर की द्वादश स्कंधी रूपरेखा भी दी गई है, विशेषतया यह स्पष्ट करने के लिए कि ग्रन्थ का यह रूप वास्तविक सूरसागर नहीं है। संग्रह के अन्त में समस्त पदों की अकारादि क्रम से अनुक्रमणी है।

सूरसागर के लोकप्रिय न हो सकने का एक कारण यह भी रहा कि इसे भागवत का रूपान्तर माना जाता रहा और इस रूप में ग्रन्थ अत्यन्त शिथिल और असंबद्ध दिखलाई पड़ता है। सूरसागर का कृष्ण-लीला संबंधी रूप, जो वास्तविक सूरसागर है, द्वादश स्कंधी रूपरेखा में छिप जाता है। यही कारण है कि प्रस्तुत संग्रह में कृष्ण-चरित को ही प्रमुख स्थान दिया गया है। सूरसागर की यह परम्परा अत्यंत प्राचीन है इतना निश्चित है।

महाकवि सूरदास की जीवनी तथा कृति की आलोचना से संबंधित प्रचुर साहित्य उपलब्ध है, किन्तु सूर की काव्यकला का सच्चा मूल्यांकन अभी नहीं हुआ है। इसमें संदेह नहीं कि ऐसे सहज कलात्मक रूप में इतनी रसानुभूति कहीं भी अन्यत्र नहीं मिलती। सहृदय पाठकाण स्वयं रसास्वादन करके इस मत के तथ्य की परीक्षा कर सकते हैं। सूरसागर वास्तव में रससागर है। आशा है कि प्रस्तुत चयन के द्वारा सूरदास की कृति का अधिक निकट परिचय हिंदी के पाठक और विद्यार्थी दोनों ही को सुलभ हो सकेगा। उसके फलस्वरूप वे जो आनन्द प्राप्त करेंगे उसी में मैं अपने परिश्रम की सफलता समझूँगा।

श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी ने पदानुक्रमणी तैयार करने का कष्ट उठाया इसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ। राधा-कृष्ण का अत्यन्त भावपूर्ण प्रसिद्ध चित्र श्री रायकृष्ण दास जी के सौजन्य के फलस्वरूप दिया जा रहा है। इस कृपा के लिए मैं उनका सदा कृतज्ञ रहूँगा।

प्रयाग

धीरेन्द्र वर्मा

श्री कृष्ण जन्माष्टमी, सं० २०११

१

७

गद्य  
रीठ

अप  
ःस  
दिक

श्री





## विषय-सूची

अंक पृष्ठ संख्या के चोतक हैं

वक्तव्य	३
विनय तथा भक्ति	६
भंगलाचरण ६, सगुणोपासना ६, भक्तवत्सलता ६, अविद्यामाया ११, गुरुमहिमा १२, नाममहिमा १२, विनती १३, भगवदाश्रय १५, भावी १५, वैराग्य १६, मनप्रबोध १८, चित्तबुद्धि संवाद २०, हरिविमुख निंदा २०, सम्संगमहिमा २१, स्थितप्रज्ञ २१, आत्मज्ञान २२	
गोकुल-लीला	२३
कृष्ण-जन्म २३, शैशवचरित २४, बालगोपाल २७, माखन चोरी ३२	
वृंदावन-लीला	४१
वृंदावन प्रस्थान ४१, गोदोहन ४१, गोचरण ४१, कालीदमन ४५, सुरली ४६, कमरी ५२, चीरहरन ५३, गोवर्द्धन- धारण ५५, रासलीला ५८, पनघटलीला ६४, दानलीला ६५, गोपिका अनुराग ७१, रूप-वर्णन ७२, नेत्रानुराग ७६	
राधा-कृष्ण	७६
प्रथममिलन ७६, गारुड़ी कृष्ण ८१, संबंध रहस्य ८३, राधा-सखी संवाद ८४, माता की सीख ८६, कृष्णदर्शन ८७, राधा का अनुराग ८६, उपहास ९३, सहसा भेंट ९४, व्याज मिलन ९६, भ्रम ९६, एकनिष्ठा ९६, लघु मानलीला १००, कृष्ण-गोपिका १०३, मानलीला १०५, खंडिता प्रकरण १०७, मध्यममान १०६, बड़ी मानलीला १११, वसंतोत्सव ११३	
मथुरागमन	११६
अक्रूर ब्रज आगमन ११६, मथुरा प्रयाण ११७, मथुरा प्रवेश तथा कंसबध ११६, नन्द का ब्रज प्रयागमन १२४, गोपी-बचन तथा ब्रज दशा १२७, गोपी-विरह १३०	

## उद्धव संदेश

१४३

उद्धव को ब्रज भेजना १४३, तीन पाती तथा संदेश १४६,  
उद्धव भ्रज आनामन १४८, उद्धव का गोपियों को पाती देना १५१,  
अमरगीत १५३, उद्धव-गोपी संवाद १५४, उद्धव हृदय परिवर्तन तथा  
गोपी संदेश १७७, पूर्ण परिवर्तन तथा यशोदा संदेश १८०, उद्धव  
मथुरा प्रत्यागमन तथा कृष्ण-उद्धव संवाद १८१, श्री कृष्ण वचन १८६

## द्वारिका चरित

१८८

द्वारिका प्रयाण १८८, रुक्मिणी परिणय १८८ बलभद्र भ्रजयात्रा  
१९०, सुदामा-चरित १९१, ब्रजनारी पथिष्ठ संवाद १९४, रुक्मिणी-  
कृष्ण संवाद १९६, कुरुक्षेत्र में कृष्ण ब्रजवासी भेंट १९७, राधा-कृष्ण  
मिलन २००

## परिशिष्ट

(क) राम-चरित

२०२

(ख) द्वादशस्कंधी रूपरेखा

२०८

पदानुक्रमणी

२०६



# विनय तथा भक्ति

मंगलानरस

वरन-कमल वंदौ हरि-राइ ।

जहाँ कृपा भंगु सिद्धि लखे, अंधे को सब कछु दरसाइ ।

अहिरो सुनै, गूंग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराइ ।

सूरदास स्वामी कखनामय, बार बार वंदौ तिहिं पाइ ॥१॥

मंगलानरस  
विनय

स्वामी

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

प्रविगत-भक्ति कछु कहत न आवै ।

जहाँ गूंग मीठे फल को रस अंतरगत ही भावै ।

मन-बानी को अगम-अगोचर, सो जानै जो पावै ।

रूप-रेख-गुन-जाति-जुगति-बिनु निरालंब कित थावै ।

सूरसगुन-पद गावै ॥२॥

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

वासुदेव की बड़ी बड़ाई ।

जगत-पिता, जगदीस, जगत-गुरु, निज भक्तनि की सहत डिठाई ।

भगु को चरन राखि उर उपर, बोले बचन सकल-सुखदाई ।

सिब-बिरंचि मारन को धाय, यह गति काहू देव न पाई ।

बिनु बदलै उपकार करत हैं, स्वारथ बिना करन मित्राई ।

रावन शरि को अलुज विभीषन, ताको भिजे भरत की नाई ।

बकी कपट करि मारन आई, सो हरि जू बैकुंठ पठाई ।

बिनु दीन्है ही देत सूर-भगु, ऐसे हैं जडुनाथ गुसाई ॥३॥

भगु को देखौ एक सुभाइ ।

अति-संभर-उदार-उदधि हरि, जान-सिरोमनि राइ ।

तिनका सौ अपने जनकौ गुन मानत मेरु-समान ।

सकुचि गनत अपराध-समुद्रहिं बूढ़-तुल्य भगवान ।

बदन-प्रसन्न कमल सनमुख हूँ देखत हौं हरि जैसे ।

बिमुख भए अकृपा न निमिषहूँ, फिरि चितथौं तौ तेसैं !

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस

मंगलानरस



भक्त-विरह-कातर कलनामय, जेकर पाँति काँ ।  
 सूरदास ऐसे स्वाजी कौं देखि प्रीति सो प्रसन्नो माने ॥१॥

ज्ञान भक्त-विरह निज

जाति, सोल, कुल, नाम, गणत भरे, एक हाह के र...  
 शिव-ब्रह्मादिक कौन जाति...  
 हुमना जदो तहो प्रभु पाँती, सो हुमना पराँ पाँती...  
 प्राह खंभ भोँ जगु दिखति, जयहि कुल कौं प्राँती ।  
 रघुकुल दासव कृप सदा ही गोकुल कौं प्राँती ।  
 जनि न जाह भक्त को अतिमा, पराँवार क्यारौ ।  
 भुव रजपूत, बिदुर दासी-मुत कौन कौन...  
 पुन पुन विरद बहै चलि अर्यौ, भक्तनि हृदा जेन...  
 रसना एग, अनेक स्पाम गुन, पाँते जनि जगैँ प्राँती ।  
 सूरदास-प्रभु की महिमा कति, साखी वेदपुरानी ॥१॥

कलनामय के अर्थ

काहू के कुल तन न दिचास ।

अविभात की राति कहि न परति है, व्याध प्रजाभिन्न तारन ।  
 कौन जाति अरु पाँति बिदुर की, ताही केँ पराँ धारन ।  
 भोजन करत मीनि घर उनकैँ, राज मान मइ दास ।  
 ऐसे जनम-करम के श्रोछेँ, श्रोछनि हूँ व्योहारन ।  
 यहै सुभाव सूर के प्रभु कौं, भक्त-प्रजान-दय पावन मीर ।  
 सरन गणु को को न उचार्यौ ।

जब जय भीर परी संतनि कौँ, चक्र सुदरशन तदाँ सेभार्यौ ।  
 भयौ प्रसाद जु अंघरीध कौँ, दुनवासा कौँ प्रीध निवार्यौ ।  
 ग्वालनि हेत धर्यौ गोबर्धन, अरुट हूँ को शर्ध प्रहार्यौ ।  
 कृपा करी प्रह्लाद भक्त पर, खंभ फारि हिरनाकुल मार्यौ ।  
 नरहरि रूप धर्यौ कश्नाकर, किनक माहिँ उर नयनि बिदार्यौ ।  
 प्राह प्रसत राज कौँ जल वृद्धत, नान जेत दाकौ दुख दार्यौ ।  
 सूर स्याम बिनु और करे को, रंग भूभि मैँ कंस पछार्यौ ॥१॥

स्याम गरीबनि हूँ के गाहक ।

दीनानाथ हमारे ठाकुर, साँवे प्रीति-निवाहक ।

कहा बिदुर की जाति-पाँति, कुल, प्रेम प्रीति के खाहक ॥१॥

कौन सीता के धन उडुवाई ? अरजुन के रथ-वाहक ।  
 कौन सुदामा के धन हों ? नौ सम्प-शक्ति के चाहक ।  
 कौन राम, लालि हरि भक्ति भारत के दुख-वाहक ॥१॥

जैसी तुम राज को पाऊँ बुझायो ।  
 अपने मन को लुखित जानि के पाऊँ पित्रादि धार्यो ।  
 नदों नदें शाद एही भक्तिये की, तहँ तहँ आयु जनायो ।  
 भक्ति नैस मन्त्राल उद्यान-यो, द्रौपदि-चौर बढायो ।  
 भक्ति जानि हरि नदु धिदुर के, नामदेवु घर धार्यो ।  
 भक्तिये द्विज दीन सुदामा, लिहँ वारिद्र नसायो ॥२॥

जागर दीनाशय धरे ।

लोक कुतूहल, यहाँ सुंदर मोड़, जिहँ पर कृपा करे ।  
 कौन विनीतन रंक निष्कावद, हरि हँसि छत्र धरे ।  
 राजा कोर यहाँ रावन तँ, शर्वाही-शर्ष गरै ।  
 रंकव कौन सुदामाहूँ तँ, आप समान करै ।  
 अश्वम कौन है अजासील तँ, जय तहँ जात करै ।  
 कौन विरक्त अधिक नारद तँ, निसि-दिन असत फिरै ।  
 पौसी कौन यहाँ लंकर तँ, ताकी काम छुरै ।  
 आश्रक डुरूप कौन छुविजा तँ, हरि पति पाइ तरै ।  
 अधिक सुरूप कौन सीता तँ, जनम विद्या भये ।  
 यह राति-भति जाँ भई कोक, किहँ रस रसिक धरे ।

सुदामा भक्त-भजन विद्यु फिरि फिरि पठर जरे ॥३॥

राम के माते  
के अरुकीठ  
भावी

जोगरूप  
पतिवै सरु  
स्वधाम

के को

विनया भाषा

विनय की  
फलदण्ड  
अविजा  
लोड-नीच  
अपनी  
पुत्रके  
न के  
उदाहरण  
अध्यात्म  
मोड

विनयी तू दीन की चित दे, कौसें तुव गुन गावै ?  
 तू ही तू ही कौन कोटिक नाच नचावै ।  
 तू ही तू ही कौन खिये डोलनि, नाना स्वर्ग द पावै ।  
 तुम को कपट करावति प्रभु ज, सेरी लुधि-सरमावै ।  
 मन अविजा-सरराने कवि कवि, दिग्गया तिरा जगावै ।  
 सोवत लपने में उखौँ संपति, त्यों दिग्वाइ बौरावै ।  
 महा मोहिनी मोहि आतमा, अरु नरगाहि लगावै ।  
 उखौँ दूती पर-पुत्र मोरे के, जै पर-पुरुष दिखावै ।

अपनी-काम

उपती अनन्तता  
नयन मे प्र

मिरे तो तुम पति, तुमही राति, तुमसमान को पावे ?  
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, को मो दुख बिसरावे ॥११॥  
हरि, तेरो भजन कियो न जाइ ।

कह करौ, तेरी प्रबल माया देति मन भरमाइ ।  
जबै आवाँ साधु-संगति, कहुक मन ठहराइ ।  
ज्यौँ रायद अन्हाइ सरिता, बहुरि बहै सुभाइ ।  
बेष धरि धरि हर यौ पर धन, साधु साधु कहाइ ।  
जैसे नटवा लोभ-कारन करत स्वाँरा बनाइ ।  
करौ जतन, न भजौँ तुमकोँ, कहुक मन उपजाइ ।  
सूर प्रभु की सबल माया, देति मोहि भुलाइ ॥१२॥

### गुरु महिमा

गुरु विनु ऐसी कौन करै ?  
माला-तिलक मनोहर बाना, लै सिर छत्र धरै ।  
भवसागर तैँ बूढ़त राखै, दीपक हाथ धरै ।  
सूर स्याम गुरु ऐसी समरथ, छिन मैँ ले उधरै ॥१३॥

### नाम महिमा

हमारे निर्धन के धन राम ।  
खोर न लेत, घटत नहिँ कबहूँ, आवत गाढ़ेँ काम ।  
जल नहिँ बूढ़त, अग्नि न दाहन, है ऐसी हरि-नाम ।  
बैकुण्ठाथ सकल सुख-दाता, सूरदास-सुख-धाम ॥१४॥  
बड़ी है राम नाम की ओट ।  
सरन गाएँ प्रभु काहिँ देत नहिँ, करत कृपा कैँ खोट ।  
वैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ी को खोट ?  
सूरदास पारस के परसैँ मिटाति लोह की खोट ॥१५॥

जो सुख होत गुपालहिँ गाएँ ।  
सो सुख होत न जप-तप कीन्हैँ, कोटिक तीरथ न्हाएँ ।  
दिष्टेँ लेत नहिँ चारि पदारथ, चरन-कमल चित लाएँ ।  
तीनि लोक तृन-सम करि लेखत, नंद-नंदन उर आएँ ।  
बंसीबट, बुदाबन, जमुना तंजि बैकुण्ठ न जावै ।  
सूरदास हरि कौ सुभिरन करि, बहुरि न आवै ॥१६॥

बंदों चरन-सरोज तिहारे । ✓

सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, ललित त्रिभंगी प्रान-पियारे ।  
 जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिंधु-सुता उर तैं नहिँ टारे ।  
 जे पद-पदुम तात-रिस-आसत, मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे ।  
 जे पद-पदुम-परस-जल-पावन-सुरसरि-दरस कटत अघ भारे ।  
 जे पद-पदुम-परस रिपि-पतिनी बलि, नृग, व्याध, पतित बहु तारे ।  
 जे पद-पदुम रमत वृंदावन अहि-सिर धरि, अरानित रिपु मारे ।  
 जे पद-पदुम परसि ब्रज-भामिनि सरबस दै, सुत-सदन विसारे ।  
 जे पद-पदुम रमत पांडव-दल दूत भए, सब काज सँवारे ।

सूरदास तेई पद-पंकज त्रिविध-ताप-दुख-हरन हमारे ॥१७॥

अब कैँ राखि लेहु भगवान ।

हौँ अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान ।  
 ताकैँ डर मैँ भाज्यौ चाहत, ऊपर दुख्यौ सधान ।  
 दुहँ भौँति दुख भयो आनि यह, कौन उबारै प्रान ?  
सुमिरत ही अहि डस्यौ पारधी, कर बूढ्यौ संधान ।  
 सूरदास सर लग्यौ सचानहिँ, जय-जय कृपानिधान ॥१८॥

आछौ गात अकारथ गारथौ ।

करी न प्रीति कमल-लोचन सौँ, जनम जुवा ज्यौँ हारथौ ।  
 निसि-दिन बिपय-बिलासनि बिलासत, फूटि गईँ तब चारथौ ।  
 अब लाग्यौ पछितान पाइ दुख, दीन, दर्ई कौँ मारथौ ।  
 कामी, कूपन, कुचील, कुदरसन, को न कृपा करि तारथौ ।  
 तातैं कहन दयाल देव-मनि, काहँँ मूर विसारथौँ ? ॥१९॥

तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत ।

लालच लागि कोटि देवन के, फिरत कपाटनि खोलत ।  
 जब लागि सरबस दीजै उनकोँ, तबहीँ लागि यह प्रीति ।  
 फल माँगत फिरि जात मुकर ह्यै, यह देवनि की रीति ।  
 एकनि कौँ जिय-बलि दै पूजे, पूजत नैँ कु न लूटे ।  
 तब पहिचानि सबनि कौँ छौँडे, नख-सिख लौँ सब भूटे ।  
 कंचन भनि तजि काँचहिँँ सैँ तत, या माया के लीन्हे ।  
 चारि पदारथ हँँ कौँ दाता, सु तौँ विसर्जन कीन्हे ।

सूरदास के गारथ  
 सुमिरत  
 पंभावी

लोग खपर  
 जगद सदा  
 लखदा

सूरदास के कौँ

जोति न  
 फलदा

तुम कुतज, इतनामय, केसय, अभिनन लोक के नायक ।

सूरदान तुम इद्र करे पकरे, अय ये चरन सहायक ॥२॥

आजु दें एक एक टरिहो ।

के नुमही, के हमही माधो, अपने भरोने लरिहो ।

हो पतित सात पीदिनि को, पतिते हू निस्तरिहो ।

अध हो उग्रि नच्यो चाहत हो, तुम्हें विरद बिन करिहो ।

कन अपनी पगतीति नसावन, पायो हरि हीरा ।

सूर/पतित तबहीं उठिहें, प्रभु जब हैंसि हैहो धीरा ॥२॥

प्रभु, हैं सब परितन को टीको ।

और पतित सब दिवस चारि के, हैं तो जनमत ही को ।

बधिक अजामिल, गनिका तारी और पूतना ही को ।

मोहिं छोंदि तुम और उधारे, भिटै सूल क्यों जी को ?

कोउ न समरथ अघ करिबे को, खैचि कहत हो लीको ।

सरियत लाज सूर पतितनि में, मोहूँ तैं को नीको ॥२॥

अब मैं नाच्यो बहुत गुवाल ।

काम-क्रोध को पहिरि चोलना, कंड विषय की माख ।

महामोह के नृपुत्र बाजत, निदा-सवद-रसाल

अन-भोयो जन भयो पखावज, चलत असंगत चाल ।

रुधना नाद करति घट भीतर, नामा विधि दें ताल ।

माया को कटि फेंडा बाँध्यो, लोभ-तिलक दियो भाल ।

कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिं काल ।

सूरदास की सबै अविद्या दूरि करौ नंदलाल ॥२॥

हमारे प्रभु, औगुन चित न धरौ ।

समदरसी है नाम तुम्हारी, सोई पार करौ ।

इक लोहा पूजा में राखत, इक वर बधिक परौ ।

सो दुबिधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरौ ।

इक नदिया इक नार कहावत, मैलौ नीर भरौ ।

जब मिलि गए तब एक वरन है, गंगा नाम परौ ।

तन माया, ज्यौ ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि विगारौ ।

के इनके निरधार कीजिये के प्रन जात टरौ ॥२॥

ओर रसाके उत्साह का प्रयोग के लिए दे दो काली के लिए

वैद्य काली सिद्धाचार्य जी प्रयोग

गुरु

गौरसी के जलुकी धरती में इतने

नाम

कि 2 वाक गोटके सांग एक

सूरके प्रहारे

धरि काली

## विनय तथा भक्ति

मेरी मन अतत कहाँ सुख पावे ।

जैसे उड़ि जहाज को पच्छी, फिरि जहाज पर आवे ।  
 कमल-नेत्र को झँडि महात्म, और देव को ध्यावे ॥  
 परम रंग को झँडि विद्यासौ, दुरमति रूप खनावे ।  
 जिहि मधुकर अंजुज-रस चारुयो, क्यों करील-पल भावे ।  
 सूरदास-अशु कामधेनु तजि, बेरी कौत दुहावे ॥२२॥  
 इसे नंदनंदन भोल लिये ।

जन्म के फंद काटि सुकराए, अमय अजाद किये ।  
 भाल तिलक, खवतनि तुलसीदल, मेरे अंक विये ।  
 मूँड्यो मूँड, कंठ बनभाला, मुद्रा-चक्र दिये ।  
 सज कोउ कहत गुलाम श्याम को, सुनत सिरात हिये ।  
 सूरदास को और बड़ी सुख, जूठनि खाइ जिये ॥२६॥  
 राखौ पति गिरिवर गिरि-धारी !  
 तौ नाथ, रह्यो कछु नाहिन, उबरत नाथ अनाथ पुकारी ।  
 सना सकल भूपनि की, भीषम-द्वोन-करन ब्रतधारी ।  
 न सकत कोउ वात वदन पर, इन पतितति सो अपति विचारी ।  
 पुनार पवन से डोलत, भीम गदा का तै महि डारी ।  
 न पैज प्रबल पारथ की, जब तै धरम-सुत धरती हारी ।  
 तौ नाथ न मेरो कोई, बिनु श्रीनाथ-मुकुंद-मुरारी ।  
 अस अदसर के चूकै फिरि पछितैहाँ देखि उधारी ॥

करी गोपाल की सब होइ ।

जो अपनौ पुरुषारथ मानत, अति मूढो है सोइ ।  
 साधन, मंत्र, जंत्र, उद्यम, बल, ये सब डारो धोइ ।  
 जो कछु लिखि राखी नंदनंदन, मोटि सकै नहीं कोइ ।  
 दुख-सुख, लाभ-अलाभ ससुक्ति तुम, कतहिँ भरत हैं रोइ ।  
 सूरदास स्वामी करुनामय, श्याम-चरन मन पोइ ॥२८॥

होत तो जो खुनाथ ठै ।

पचि-पचि रहै सिद्ध, साधक, मुनि, तऊ त अढ़-बटै ।  
 जोशी जोना धरत मन अपने, सिर पर राखि जटै ।  
 ध्यान धरत महादेवऽह अष्टा, तिनहुँ पै न छटै ।

जती, सती, तापस आराधै, पारौ बेद रहे ।  
 सूरदास भगवंत-भजम विनु, करम-फॉस न करे ॥२६॥  
 भावी काहू सो न टरे ।

कहँ वह राहु, कहाँ वै रवि ससि, आनि सँजोमा परे !  
 सुनि बसिष्ठ पंडित अति ज्ञानी, रचि-पचि लगन धरे ।  
 तात-भरन, सिय हरन, राम बन बपु धरि विपति भरे ।  
 रावन जीति कोटि तै तीसौ, त्रिभुवन राज करे ।  
 मृत्युहिँ बाँधि रूप में राखै, भावी-बस सो मरे ।  
 अरजुन के हरि हुते सारथी, सोऊ बन निकरे ।  
 द्रुपद-सुता कौ राजमभा, दुस्सासन चीर हरे ।  
 हरीभंद सो को जगदाता, सो घर नीच भरे ।  
 जौ गृह झॉड़ि देस बहु धावै, तउ वह संग फिरै ।  
 भावी कै बस तीन लोक हैं, सुर नर देह धरे ।  
 सूरदास प्रभु रची सु ह्वै है, को करि सोच मरे ॥२७॥

तानै सोइये श्री जदुराई ।

संपति विपति, विपति तै संपति, देह कौ यहै सुभाइ !  
 तखर फूलै, फरै, पतभरे, अपने कालहिँ पाइ ।  
 सरवर नीर भरे भरि, उमड़ै, सुखै, खेह उड़ाइ ।  
 दुतिया चंद बढ़त ही बाढ़ै, घटत-घटत घटि जाइ ।  
 सूरदास संपदा-आपदा, जिनि कोऊ पतिआइ ॥२८॥

वैराग्य

किले दिन हरि-सुमिरन विनु खोए ।

पर-निंदा रसना के रस करि, केतिक जनम बिगोए ।  
 तेल लगाइ कियो रचि-भदंन, बस्तर मलि-मलि धोए ।  
 तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै, विपथिनि के मुख जोए ।  
 काल बली तै सब जग काँप्यौ, ब्रह्मादिक ह्वै रोए ।  
 सुर अधम की कहौ कौन गति, उदर भरे, परि सोए ॥२९॥

नर तै जनम पाइ कह कीनो ?

उदर भर्यौ कूकर सुकर लौं, प्रभु कौ नाम न लीनौ ।  
 श्री भागवत सुनी नहिँ श्रवतनि, गुरु गोविंद नहिँ चीनौ ।  
 भाव-भक्ति कल्लु हृदय न उपजी, मन विषया में दीनौ ।

अपने  
 वचन

श्री  
 गुरु

गुरु

नाम

श्री  
 गुरु

श्री  
 गुरु



भूठी सुभ, अपनौ करि जान्यो, परस प्रिया कै भीनौ ।  
 अघ कौ मेह बढ़ाइ अधम तू, अंत भयौ बलहीनौ ।  
 लाख चौरासी जोनि भरमि कै, फिरि वाही मन दीनौ ।  
 सूरदास भगवंत-भजन विनु ज्यों अंजलि-जल छीनौ ॥३३॥

इत-उत देखत जनम गयौ ।

या भूठी माया कै कारण, दुहुँ दग अंध भयौ ।  
 जनम-कष्ट तै मातु दुखित भई, अति दुख ग्रान सद्यौ ।  
 वै त्रिभुवनपति बिसरि गए तोहिँ, सुमिरत क्यों न रह्यौ ।  
 श्रीभारावत सुन्यौ नहिँ कबहुँ, बीचहिँ भटकि मर्यौ ।  
 सूरदास कहै, सब जग बूझ्यौ, जुग-जुग भक्त तर्यौ ॥३४॥

सबै दिन गए विषय के हेत ।

तीनों पन ऐसै ही खोए, केस भए सिर सेत ।  
 आंखिनि अंध, खवन नहिँ सुनियत, थाके चरन समेत ।  
 गंगा-जल तजि पियत कूप-जल, हरि तजि पूजत प्रेत ।  
 मन बच-क्रम जाँ भजे स्थाम कौ, चारि पदारथ देत ।  
 ऐसौ प्रभू छोंडि क्यों भटकै, अजहुँ चेति अचेत ।  
 राम नाम विनु क्यों छुटौंगे, चंद गहँ ज्यौँ केत ।  
 सूरदास कछु खरच न लागत, राम नाम मुख लैत ॥३५॥

द्वै मैँ एकौ तौँ न भई ।

ना हरि भज्यौ, न गृह सुख पायौ, बृथा बिहाइ गई ।  
 ठानी हुती और कछु मन मैँ, औरै आनि ठई ।  
 अविगत-गति कछु समुझि परत नहिँ, जो कछु करत दई ।  
 सुत सनेहि-तिय सकल कुटुंब मिलि, निसि-दिन होत खई ।  
 पद नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अंगार मई ।  
 विषय-बिकार-दवानल उपजी, मोह-बहारि लई ।  
 अमत्-अमत् बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टँच गई ।  
 होत कहा अबके पछिताएँ, बहुत बेर बितई ।  
 सूरदास सेये न कृपानिधि, जो सुख सकल मई ॥३६॥

अब मैँ जानी, देह बुढ़ानी ।

सीस, पाउँ, कर क्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी ।  
 ज्ञान कहत जानै कहि आवत नैन-नाक बहै पानी ।

मिष्टि गड़ चमक-दमक अँग-अँग की, मति अरु दृष्टि हिरानी ।  
नाहिँ रही कछु सुधि तन-मन की, भई जु बात विरानी ।

देवी जो

सूरदास अब होत विगूचनि, भजि लै सारँगपानी ॥३७

मन प्रवे १

सब तजि भजिए नंद कुमार ।

५- देवी जो

और भजे तैँ काम सरे नहिँ, मिटे न भव जंजार  
जिहिँ जिहिँ जौनि जन्म धारयो, बहु जोरयो अघ कौ भार  
तिहिँ काटन कौँ समरथ हरि कौँ तीछन नाम-कुठार  
बेद, पुरान, भागवत, गीता, सब कौ यह मत सार  
भव समुद्र हरि-पद-नौका विनु कोउ न उतारै पार  
यह जिहँ जानि, इहीँ छिन भजि, दिन बीते जात असार  
सूर पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहै ।

ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात ऋरि जैहँ ।  
या देही कौ गरब न करियै, स्यार-काग-गिध खैहँ ।  
तीननि मैँ तन कृमि, कै विष्टा, कैहँ खाक उड़ैहै ।  
कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहै ।  
जिन लोगनि सौँ नेह करत है, तेई देखि घिनैहै ।  
घर के कहत सबारे काढ़ौ, भूत होइ धरि खैहँ ।  
जिन पुत्रनिहिँ बहुत प्रतिपातयी, देवी-देव मनैहँ ।  
तेई लै खोपरी बाँस दै, सीस फोरि बिखरैहै ।  
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति, संतनि मैँ कछु पैहै ।  
नर-वपु धारि नाहिँ जन हरि कौँ, जम की मार सो खैहै ।  
सूरदास भगवत-भजन बिनु वृथा सु जनम गँवैहै ॥३८

तिहारौ कृष्ण कहत कह जात ?

देवी जो  
(पाम १२५)

बिछुरैँ मिलन बहुरि है, ज्यौँ तरुवर के पात ।  
सीत-बात-कफ कंठ विरोधै, रसना टूटै बात ।  
प्राण लए जम जात, मूढ़-मति देखत जननी-तात ।  
छन इक माहिँ कोटि जुग बीतत, नर की केतिक बात ?  
यह जग-प्रीति सुबा-खेमर ज्यौँ, चाखव ही उड़ि जात ।

जमकें फंद पर्यौ नहिं जब लागि, चरननि किन लपटात ?  
कहत सूर विरथा यह देही, एतौ कत इतरात ॥४०॥

मन, तोसैं कित्ती कही समुक्ताइ ।

नंदनंदन के चरन कमल भजि तजि पाखंड-चतुराइ ।  
सुख-संपत्ति, दारा-सुत, हय-गाय, छूट सबै समुदाइ ॥  
छनभंगुर यह सबै स्याम बिनु, अंत नाहिं संग जाइ ।  
जनमत-मरत बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ ।  
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जैहै जनम गँवाइ ॥४१॥

धोखैं ही धोखैं डहकायौ देराल ॥४१॥

समुझि न परी, विषय-रस गीध्यौ, हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ ।  
ज्यौं कुरंग जल देखि अचनि कौ, प्यास न गई अहूँ दिसि धायौ ।  
जनम-जनम बहु करम किए हैं, तिनमै आपुन आपु वंधायौ ।  
ज्यौं सुक सेमर सेव आस लागि; निसि-बासर हटि चित्त लगायौ ।  
रीतौ पर्यौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयौ तूल, ताँवरौ आयौ ।  
ज्यौं कपि डोरि बाँधि बाजीगर, कन-कन कौ चौहटै नचायौ ।  
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, काल-व्याल पै आपु डसायौ ॥४२॥

भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ ।

बाखापन खेलतहीं खोयौ, तरुनाईं गरबानौ ।  
बहुत प्रपंच किए माथा के, तऊ न अधम अघानौ ।  
जतन जतन करि माथा जोरी, खै गयौ रंक न रानौ ।  
सुत-वित्त-बनिता-प्रीति लगाई, सूटे भरम मुलानौ ।  
लोभ-मोह तै चेत्यौ नाहीं, सुपनें ज्यौं डहकानौ ।  
बिरध भएँ कफ कंठ विरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ ।  
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम कैं हाथ विकानौ ॥४३॥

तजौ मन, हरि विमुखनि कौ संग ।

जिनकैं संग कुमति उपजति है, परत भजन मै भंग ।  
कहा होत पय-पान कराएँ; बिष नहिं तजत भुजंग ।  
कानाहिं कहा कपूर जुगाएँ, स्वान न्हवाएँ गंग ।  
खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन-अंग ।  
गज कौं कहा सरित अन्हवाएँ, बहुरि धरै वह दंग ।

पाहन पतित बान नहिँ ब्रेधत, रीतौ करत निपंग।  
सूरदास कारी कामरि पै, चढ़त न दूजौ रंग ॥४४

रे मन मूरख जनम गंवायौ ।

करि अभिमान विषय-रस ग्रीध्र्यौ स्याम-सरन नहिँ आयौ ।  
यह संसार सुवा-सेमर ज्यौँ, सुंदर देखि लुभायौ ।  
चाखन लाग्यौ रूई गई उड़ि हाथ कछू नहिँ आयौ ।  
कहा होत अब के पछिताएँ पहिलैँ पाप कमायौ ।  
कहत सूर भगवंत-भजन बिनु, सिर धुनि-धुनि पछितायौ ॥४५

चित्-बुद्धि-संवाद

चकई री, चलि चरन-सरोवर, जहाँ न प्रेम विप्रयोग ।  
जहँ अम-निसा होति नहिँ कबहूँ, सोई सायर सुख जोग  
जहाँ खनक-सिव हंस, मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास  
प्रफुलित कमल, निमिष नहिँ ससि-डर, गुंजत निगम सुवास  
जिहिँ सर सुभग-मुक्ति-मुक्ताफल, सुकृत-अमृत-रस पीजै  
सो सर छॉड़ि कुबुद्धि बिहंगम, इहाँ कहा रहि कीजै  
लक्ष्मी सहित होति नित क्रीडा, सोमित सूरजदास  
अब न सुहात विषय-रस-छीलर, वा समुद्र की आस

सुवा, चलि ता बन कौ रस पीजै ।

जा बन राम-नाम अश्रित-रस, खवन पात्र भरि लीजै ।  
को तेरौ पुत्र, पिता तू काकी, घरनी, घर कौ तेरौ ?  
काग-खगाल-स्वान कौ भोजन, तू कहे मेरौ मेरौ !  
बन बारानसि मुक्ति-चेत्र है, चलि तोकौँ दिखराऊँ ।  
सूरदास साधुनि की संगति, बड़े भाग्य जो पाऊँ ॥४६

इरिविमुख-निदा

अचंभौ इन लोगनि कौ आवै ।

छॉड़ैँ स्याम-नाम-अश्रित फल, माया-विष-फल भावै ।  
निंदत मूढ़ मलय चंदन कौँ, राख अंग लपटावै ।  
मानसरोवर छॉड़ि हंस तट काग-सरोवर न्हावै ।  
पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै ।  
चौरासी लख जोनि स्वोंग धरि, अमि-अमि जमहिँ हँसावै ।

## बिनय तथा भक्ति

२

मृगतृष्णा आचार-जगत जल, ता संग मन ललचावै ।  
कहतु जु सूरदास संतनि मिलि हरि जस काहे न गावै ! ॥४८॥

भजन बिनु कृकर-सूकर जैसे ।

जैसे घर बिलाव के मूसा, रहत विषय-बस वैसा ।  
बरा-बगुली अरु गीध-गीधिनी, आइ जनम लियो तैसा ।  
उन्हें कै गृह, सुत, दारा हैं, उन्हें भेद कहु कैसे ?  
जीव मारि कै उदर भरत हैं, तिनको लेखौ ऐसी ।  
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौ ऊँट-वृष-भैसा ॥४९॥

रमा  
जा दिन संत पाहुने आवत ।

तीरथ कोटि सनान करे फल जैसे दरसन पावत ।  
नयो नेह दिन-दिन प्रति उनकें चरन-कमल चित लावत ।  
मन-बच कर्म और नहिँ जानत, सुमिरत औ सुमिरावत ।  
मिथ्यावाद-उपाधि-रहित है, विमल-बिमल जस गावत ।  
बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत ।  
संगति रहै साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत ।  
सूरदास संगति करि तिनकी, जे हरि-सुरति करावत ॥५०॥

हरि-रस तौंश्च जाइ कहूँ लहियै ।

५. ६

गां सोच आं नहिँ आनंद, ऐसी मारग राहियै ।  
कोमल बचन, दीनता सब सौं, सदा अनंदित रहियै ।  
वाद-विवाद, हर्ष-आतुरता, इतौ द्वंद जिअ सहियै ।  
ऐसी जो आवै या मन मै, तौ सुख कहँ लौँ कहियै ।  
अष्ट सिद्धि, नव निधि, सूरज प्रभु, पहुँचै जो कछु चाहियै ॥५१॥

जौ लौँ मन-कामना न छूटै ।

तौ कहा जोग-जज्ञ-वन कीन्है, बिनु कन तुस को कूटै ।  
कहा सनान कियै तीरथ के, अंग भस्म जट जूटै ?  
कहा पुरान जु पढ़ै अठारह, ऊर्ध्व धूम के घूटै ।  
जग सोभा की सकल बढ़ाई इनतै कछु न खूटै ।  
करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि छूटै ।

काम, क्रोध, मद, लोभ सत्रु है, जो इतननि सौं छूटे ।  
सूरदास तबहीं तम नासै, ज्ञान-अग्नि-स्फुर फूटे ॥

आत्मज्ञान

आपुनपौ आपुन ही विसरयौ ।

जैसेँ स्वान काँच-मंदिर मैं, भ्रमि-भ्रमि भूकि परयौ ।  
ज्यौँ सौरभ मृग-नाभि बसत है, द्रम-तृन सूँधि फिरयौ ।  
ज्यौँ सपने मैं रंक भूष भयौ, तसकर अरि पकरयौ ।  
ज्यौँ केहरि प्रतिबिंब देखि कै, आपनु कूप परयौ ।  
जैसेँ राज लखि फटिकसिला मैं, दसननि जाइ अरयौ ।  
मकँट मूँडि छाँडि नहीं दीनी, घर-घर-द्वार फिरयौ ।  
सूरदास नखिनी कौ सुवटा, कहि कौनै पकरयौ ।

आपुनपौ आपुन ही मैं पायौ ।

सबदहि सबद भयौ उजियारौ, सतगुरु भेद बतायौ ।  
ज्यौँ कुरंग-नाभी कस्तूरी, दूँडत फिरत भुलायौ ।  
फिरि चितयौ जब चेतन हूँ करि, अपनै ही तन छायौ ।  
राज-कुमारि कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयौ कहुँ गाँवायौ ।  
दियौ बताइ और सुखियनि तब, तनु कौ ताप नसायौ ।  
सपने माहिँ नारि कौ भ्रम भयौ, बालक कहुँ हिरायौ ।  
जागि लख्यौ, ज्यौँ कौ त्यौ ही है, ना कहुँ गयौ न आयौ ।  
सूरदास ससुभे की यह गति, मनहीँ मन सुसुकायौ ।  
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौँ गंगौँ गुर खायौ ।

जैसेँ स्वान काँच-मंदिर मैं

यद्युक्त २२०

गुरु

1. In the first line, 'सूरदास' is written in a smaller font. The text continues with a detailed commentary in Hindi, explaining the metaphors used in the poem, such as 'स्वान काँच-मंदिर' (Swan's shell temple) and 'कुरंग-नाभी कस्तूरी' (Korang's navel gemstone). The commentary discusses the poet's self-reflection and the nature of love and devotion. It mentions that the poet is often criticized for being a 'madman' (मनहीँ मन) but that his poetry is a source of joy and enlightenment (सुखियनि). The text concludes with a reference to the poet's name 'सूरदास' and his work 'सूरसागर'.

श्रृंगार

मोड ३७      २ वा वर

## गोकुल लीला

५५

आनंदै आनंद बढ़यौ अति ।

देवनि दिवि दुंदभी बजाई, सुनि मथुरा प्रगटे जादवपति ।  
 विद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति ।  
 गावत गुन रांधर्व पुलकितन, नाचति सब सुर-नारि रसिक अति ।  
 बरपत सुमन सुदेस सूर सुर, जय-जयकार करत, मानत रति ।  
 सिव-बिरञ्जि-इन्द्रादि अमर मुनि, फूले सुख न समात मुदित मति ॥ १ ॥

देवकी मन मन चकित भई ।

नेखहु आई पुत्र-मुख काहे न, ऐसी कहूँ देखी न दई ।  
 [सिर पर मुकुट, पीत उपरैना, भृगु-पद उर, भुज चारि धरे ।  
 पूरब कथा सुनाइ कही हरि, तुम माँग्यौ इहिँ भेष करे ।  
 छोरे निगड़, सोआए पहरू, द्वारे कौ कपाट उधरयो ।  
 सुरत मोहिँ गोकुल पहुँचावहु, यह कहिकै तिसु वेष धर्यौ ।  
 तब बसुदेव उठे यह सुनतहिँ, हरपर्वत नंद-भवन गए ।  
 बालक धरि, लै सुरदेवी कौँ, आई सूर मथुरी ठए ॥ २ ॥

✓ गोकुल प्रगट भए हरि आई । ✓

अमर-उधारन, असुर-संहारन, अंतरजामी त्रिभुवन राइ ।  
 माथै धरि बसुदेव जु त्याए, नंद-महर-घर गए पहुँचाइ ।  
 जागी महारि, पुत्र-मुख देख्यौ, पुलिक अंग उर मैँ न समाइ ।  
 गदगद कंठ, बोलि नहिँ आवै, हरपर्वत ह्यै नंद बुलाइ ।  
 आवहु कंत, देव परसन भए, पुत्र भयौ, मुख देखौ धाइ ।  
 दौरि नंद गए, सुत-मुख देख्यौ, सो सुख मोपै बरनि न जाइ ।  
 सूरदास पहिलैँ ही माँग्यौ, दूध पियावन जसुमति माइ ॥ ३ ॥

हौँ इक नई बात सुनि आई ।

महारि जसौदा ढोटा जायौ, घर-घर होति बधाई ।  
 द्वारैँ भीर गोप-गोपिनि की, महिमा बरनि न जाई ।  
 अति आनंद होत गोकुल मैँ, रतन भूमि सब छाई ।

नाचत वृद्ध, तरुन अरु बालक, गोरस-कीच मचाई ।

सूरदास स्वामी सुख सागर, सुंदर स्याम कन्हाई ॥४॥

आजु नंद के द्वारै भीर ।

इक आवत, इक जात विदा ह्वै, इक ठाढ़े मंदिर कैं तीर ।

कोउ क्रेसरि कौ तिलक बनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर ।

एकनि कैं गौ-दान समर्पत, एकनि कैं पहिरावत चीर ।

एकनि कैं भूपन पाटंबर, एकनि कैं जु दंत नग हीर ।

एकनि कैं पुहुपनि की माला, एकनि कैं चंदन घसि नीर ।

एकनि माथै दूब-रोचना, एकनि कैं बोधति द्वे धीर ।

सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर ॥५॥

सोभा-सिंधु न अंत रही री ।

नंद-भवन भरि पूर उमंगि चलि, ब्रज की बांधिनि फिरति बही री

देखी जाइ आजु गोकुल में, घर-घर बँचति फिरति दही री

कहँ लागि कहौ बनाइ बहुत विधि, कहत न मुख सहसहुं निबही री

जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तै, उपजो ऐसी सबनि कही री ।

सूरश्याम प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री

शैशव चरित

जसोदा हरि पालनै भुलावै ।

हलरावै, दुलराइ भलहावै, जोड़-सोड़ कछु गावै ।

मेरे लाल कैं आउ निँदरिया, काहँ न आनि सुवावै ।

तू काहँ नहिँ वेगहिँ आवै, तोकैं कान्ह बुलावै ।

कबहुँक पलक हरि मँदि खेत हँ, कबहुँ अधर फरकावै ।

सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन बतावै ।

इहिँ अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरै गावै ।

जो सुख सूर अमर-मुनिदुरलभ, सो नँद-भामिनिपावै ॥७॥

कपट करि ब्रजहिँ पूतना आई ।

अति सुरूप, बिप अस्तन लाए, राजा कंस पठाई ।

मुख चूमति अरु नैन निहारति, राखति कंठ लगाई ।

भाग बड़े तुम्हरे नन्दरानी, जिहिँ के कुँवर कन्हाई ।

कर गहिँ छोर पिथावति अपनौ, जानत केसवराई ।

बाहर ह्वै कै असुर पुकारी, अब बलि लेहु छुड़ाई ।



## गोकुल लीला

गाइ सुरछाई, परी धरनी पर, मनौ सुवंगम खाई ।

सूरदास प्रभु तुम्हरी लीला, भक्तनि गाइ सुनाई ॥८॥

—काग-रूप इक दनुज धर्यौ—

नृप-आयसु लै धरि माथे पर, —हरपवंत उर-गरव-भर्यौ ।  
 कितिक बात प्रभु तुम आयसु तेँ, वह जानौ मो जात भर्यौ ।  
 इतनी काहि गोकुल उड़ आयौ, आइ नन्द-धर-छाज रह्यौ ।  
 पलना पर पौड़े हरि देखे, नुरत आइ बैननिहिँ भर्यौ ।  
 कंठ चापि बहुवार फिरायौ, नाहि पटक्यौ, —नृप-पास पर्यौ ।  
 तुरत कंस पूछत तिहिँ लाग्यौ, क्यौँ आयौ नहिँ काज कर्यौ ?  
 श्रीतैँँ जाय बोलि तब आयौ, सुनहु कंस, तब आइ सर्यौ ।  
 धरि अवतार महाबल कोऊ एकहिँ कर मेरौ रावँ हर्यौ ।  
 सूरदास प्रभु कंस-निकंदन, भक्त-हेत अवतार धर्यौ ॥८॥

—कर पग गाहि, अँगुठा मुख भेलत ।

प्रभु पौड़े पालनैँँ अकेले, —हरषि-हरषि-अपनैँँ—रङ्ग खेलत ।  
 सिव सोचत, बिधि बुद्धि विचारत, अट वाढ़्यौ सागर-जल भेलत ।  
 बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग दंतीनि सकेलत ।  
 मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेए सकुचि सहसौ फन पेलत ।  
 उन ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग टेलत ॥९॥

—महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी ।

चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, —मैँँ—भई सभागी ।

—एक पाख-त्रय-मास कौ मेरौ भयो कन्हारै ।

पटाके रान-उलटौ पर्यौ, मैँँ—करौँँ बधाई ।

नन्द-धरनि आनन्द भरी, बोलीँँ ब्रजनारी ।

यह सुख सुनि आईँँ सबै, सूरज बलिहारी ॥९॥

जसुमति मन अखिलाप करै ।

कब मेरौ लाल बुदुखनि रेँँगे, कब धरनी पग द्वैक धरै ।  
 कब द्वै दाँत दूध के देखौँँ, कब तोतरैँँ मुख बचन करै ।  
 कब नंदहिँ बाबा काहि बोलै, कब जननी काहि मोहिँँ ररै ।  
 कब मेरौ अँचरा गाहि मोहन, जोइ-सोइ काहि मोसौँँ मगरै ।  
 कब धौँँ तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौँँ मुखहिँँ भरै ।

कव हैंसि बात कहैगो सोसौं, जा छवि तैं दुख बूरि हरै ।  
 स्याम अकेले आंगन छौंड़े, आपु गई कछु काज घरै ।  
 इहि अंतर अंधवाह उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित धरै ।  
 सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहि डरै ॥३२॥

सुत मुख देखि जसोदा फूली ।

हरषति देखि दूधि की दँतियाँ, प्रेमभगन तन की सुधि भूली ।  
 बाहिर तैं तब नंद पुहाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई ।  
 तनक तनक सी दूध दँतुलिया, देखौ, नैन सकल करौ आई ।  
 आनंद सहित महर तब आए, सुख चितवत दोउ नैन अवाई । ३  
 सूर स्याम किलकट द्विज देख्यौ, मनौ कामल पर बिजु जमाई ॥३३॥

हरि किलकट जसुमति की कनियाँ ।

सुप्त मै तीते लोक दिखराए, लकेल भरै नंद-रनियाँ ।  
 घर धर हाथ दियावति डोलति, बाँधति गरै वचनियाँ ।  
 सूर स्याम की अदभुत लीला नहिँ जानत सुनिजनियाँ ॥३४॥

कान्ह कुँवर की फरहु पासनी, कछु दिन घटे षट भास गए ।  
 नंद महर वह सुनि पुजकित जिय, हरि अनप्रासन जोग भए ।  
 विप्र बुलाह नाम लै ब्रूम्यौ, रासि सोधे इक सुदिन धर्यौ ।  
 आठौ दिन सुनि महरि जसोदा, सखिनि बोलि सुभ गान कर्यौ ।  
 सुवति महरि कौं गारी गावति, और महर कौ नाम लिए ।  
 ब्रज-वर-धर आनंद बढ़्यौ अति प्रेम पुलक न समात हिए ।  
 जाकौं नेति-नेति लु ली गावत, ध्यावत सूर-सुनि ध्यान धरे ।  
 सूरदास तिहिँ कौं ब्रज-बनिता, भक्तमोरति उर अंक भरे ॥३५॥

बाल हैं धारी तेरे मुख पर ।

कुटिल अलक, मोहनि-मन बिहँसनि, भृकुटी बिकट ललित नैननि पर ।  
 दमकति दूध-दँतुलिया बिहँसत, मनु सीपज घर कियौ बारिज पर ।  
 लखु-लखु लंड सिर वूँधरवारी, लटकन लटकि रखौ माथै पर ।  
 यह उपमा कायै कहि आवै, कछुक कह्यौ संकुचति हैं जिय पर ।  
 नव-तन-चंद्र रेख-मधि राजत, सूरगुरु सुक-उदोत परसपर ।  
 लोचन लोल कपोल ललित अति, नासा कौ मुकता रदछद पर ।  
 सूर कदा न्यौझावर करिये अपने लाज ललित लखवर पर ॥३६॥

## गोकुल लीला

तीं ब्रजनारि सुभगा, कान्ह बरष-गाँठि उमंग, चाहति बरष बरषनि  
हे मंगल सुगान, नीके सुर नीकी तान, आनंद अति हरषनि  
। मनि जाटित-धार रोचन, दधि, फूल-डार, मिलिबे की तरसनि  
बरष गाँठि जोरति, दा छवि पर तून तोरति, सूर अरस परसनि ॥

माल -

✓ सोभित कर नवनीत-लिए ।

धुदुरुनि चलत रेनु तन मंडित, मुख दधि लेष किये ।  
चारु कपोल, लोल लोचन, गीरोचन-तिलक दिये ।  
लट-लटकनि मनु मत्त भधुष-गन भावक मधुहिँ पिए ।  
कहुला-काँठ, बज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए ।  
धन्य सूर एकौ पल इहिँ सुख, का सत कहर जिए ॥१८॥

✓ किलकत कान्ह धुदुरुनि आवत ।

मनिमय कनक नंद कैँ आँगन, बिब पकरिवैँ भावत ।  
कबहुँ निरखि हरि आपु छौँह कैँ, कर सौँ पकरन चाहत ।  
किलकि हँसत राजत द्वैँ दरियाँ, पुनि-पुनि तिहिँ अथगाहत ।  
कनक-भूमि पर कर-पग-झायाँ, यह उपमा इक राजति ॥  
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति ।  
बाल दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नन्द बुलावति ।  
-अँचरा तर लैँ ढाँकि, सूर के प्रभु कैँ दूध पियावति ॥१९॥

सिखवति चलन जसोदा मैया ।

अरबराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरे पैया ।  
कबहुँक सुंदर बदन बिलोकति, उर आनंद अरि लेति बलैया ।  
कबहुँक कुल देवता मनावति, चिरजीवहु मरौ कुँवर कन्हैया ।  
कबहुँक बल कैँ ऐरि बुलावति, इहिँ आँगन खेलौ दोउ मैया ।  
सूरदास स्वामी की लीला, अति प्रताप विलसत नँदरेया ॥२॥

चलत देखि जसुमति सुख पावै ।

डुमुकि-डुमुकि पग धरनी रँगत, जननी देखि दिखावै ।  
देहरि लौँ चलि जात, बहुरि फिरि-फिरि इतहीँ कैँ आवै ।  
गिरि-गिरि परत, बनत नहिँ नाँघत सुर-मुनि सोच करावै ।

'कोटि ब्रह्म' ड करत छिन भीतर, हरत बिलंब ना लावै ।  
 ताकोँ लिए नंद की रानी, नाना खेल खिलावै ।  
 तब जसुमति कर देखि स्याम कौ, क्रम-क्रम करि उतरावै ।  
 सूरदास प्रभु देखि-देखि, सुर-नर-मुनि बुद्धि भुलावै ॥ २१ ॥

नंद जू के बारे कान्ह, झोंड़ि दै मथनियाँ ।  
 बार-बार कहति भातु जसुमति नँदरनियाँ ।  
 नँकु रहौ भाखन देउँ मेरे प्राण-धनियाँ ।  
 आरि जनि करौ, बलि बलि जाउँ हौँ निधनियाँ ।  
 जाकौ ध्यान धरँ सबै, सुर-नर मुनि जनियाँ ।  
 ताकौ नँदरानी मुख नृषै लिए कनियाँ ।  
 सेष सहस आनन गुन गावत नहिँ बनियाँ ।  
 सूर स्याम देखि सबै भूलीँ गोप-धनियाँ ॥ २२ ॥

कहन लागे मोहन मैया-मैया ।

नंद महर सौँ बाबा बाबा, अरु हलधर सौँ मैया ।  
 ऊँचे घड़ि घड़ि कहति जसोदा, लै लै नाम कन्हैया ।  
 दूरि खेलन जनि जाहु लला रे, मारैगी काहु की गैया ।  
 गोपी ग्वाल करत कौतूहल, घर घर बजति बधैया ।  
 सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौँ, चरननि की बलि जैया ॥

गोपालराइ दधि माँगत अरु रोटी ।

भाखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक ससंगल मोटी ।  
 कत हौ आरि करत मेरे मोहन तुम आँगन में लोटी ?  
 जो चाहौ सो लेहु तुरतहीं, झोंड़ैँ यह मति खोटी ।  
 करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ, मुख सुपर्यौ अरु जोटी ।  
 सूरदास कौ ठाकुर ठाढ़ौ, हाथ लकड़िया छोटी ॥

बरनौँ बाल-बंध सुरारि ।

थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंद-लाल निहारि ।  
 केस सिर बिन बपन के चहुँ दिसा छिटके मारि ।  
 सीस पर धरि जटा, मनु सिसु-रूप कियौ त्रिपुरारि ।  
 तिलक ललित ललाट केसरिचिहु सोभाकारि ।  
 रोष-अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जादि ।

## गोकुल लीला

कंठ कटुला नील भनि, अंभाज-भाल-सँवारि ।  
 गरल ग्रीव, कपाल-उर-इहिँ भाइ-भए मदनारि ।  
 कुटिल हरि-नख हिएँ हरि के हराषे निरखति-नारि ।  
 ईस जनु रजनीस-राख्यौ-भाल तैँ-जु-उतारि ।  
 सदन-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिँ अनुहारि ।  
 मनहुँ अंग-बिभूति-राजित संभु सो मधुहारि ।  
 त्रिदस-पति-पति असन कौँ अति जननि सौँ करै आरि ।  
 सूरदास चिरंचि जाकौँ जपत निज मुख चारि ॥२५॥

भैया, कबहिँ बड़ैसी खोटी ?

कित्ती बार मोहिँ दूध पियत भई, यह अजहुँ है खोटी !  
 तू जो कहति बल की येनी ज्यौँ, हूँ है लौंजी-भोटी ।  
 काढ़त-गुहत न्हवावत जैहे नागिन सी भुइँ खोटी ।  
 काचौ दूध पियावति पचि-पचि, देति न माखन-रोटी ।  
 सूरज चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी ॥२६॥

हरि अपनैँ आँगन-कछु रावत ।

तनक-तनक चरनि सौँ नाचत, मनहिँ मनहिँ रिभावत ।  
 बाहँ उठाइ काजरी-धौरी गैयनि टेरि बुलावत ।  
 कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैँ आवत ।  
 माखन तनक आपनैँ कर लै, तनक बदन मैँ नावत ।  
 कबहुँक चितैँ प्रतिबिंब खंभ मैँ, लौनी लिए खदावति ।  
 दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरप अनंद बढ़ावत ।  
 सूर स्याम के बाल-चरित, नित नितही देखत भावत ॥२७॥

जसुमति जबहिँ क्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत री ।  
 तेल उबटनौ लै आगँ धरि, जालहिँ चोटत पीटत री ।  
 मैँ बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिनु काजैँ री ।  
 पाँड़ैँ धरि राख्यौ छपाइ कै उबटन-तेल-सभार्जैँ री ।  
 महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत नहीं कन्हैया री ।  
 सूर स्याम अतिहीँ बिरुझाने, सुर-सुनि अंत न पैया री ॥२८॥  
 ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनैँ, हरिहिँ लिए चंदा दिखरावत ।  
 रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी, देखौँ धौँ भरि नैन जुड़ावत ।

चित्तै रहै तब आपुन ससि-त्तन अपने कर लौ लौ जु बतावत ।  
 मोठी लगत किधौ यह खाद्यै, देखत अति सुन्दर मन भावत ।  
 मन ही मन हरि बुद्धि करत है माता सौ कहि ताहि मँगावत ।  
 लागी भूख, चंद मै खेहौ, देहि देहि रिस करि बिरहभावत ।  
 जसुमति कहति कहा मै कीनौ, रोवत मोहन अति दुख पावत ।  
 सूर स्थान कौ जसुमति बोवति, शरान चिरैया उड़त दिखावत ।

सुनि सुत, एक कथा कहौ प्यारी ।  
 कमल-नैन मन आनंद उपज्यौ, चतुर सिरोभनि देत हुँकारी ।  
 वलरथ नृपति हुलौ रघुवंसी, ताकै प्रगट भए सुत चारी ।  
 विगमै मुख्य राम जो कहियत, जनक सुता ताकी बर नारी ।  
 तात-बचन लगी राज तज्यौ तिर, अनुज धरनि संग गए बनचारी ।  
 धायत कमल-मृगा के पायँ, राजिद लोचन परम उदारी ।  
 रावन हरन स्त्रिया कौ कीन्हौ, सुनि नंद-नंदन नींद निवारी ।  
 चाप-चाप करि उठे सूर प्रभु, लछिमन देहु, जननि अम भारी ॥

जागौ जागौ हो गोपाल ।

नाहिँन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल ।  
 फिर-फिर जात निराखि मुख छिन छिन, सब गोपनि के बाल ।  
 बिन धिकसे कल-कमल-कोष ते मनु मधुपनि की माल ।  
 जो तुम मोहिँ न पत्याहु सूर प्रभु, सुन्दर स्थाम तमाल ।  
 तौ तुमही देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल ।

कमल-नैन हरि करौ कखेवा ।

माखन-रोठी, सद्य जग्यौ दधि, भाँति-भाँति के सेवा ।  
 खारिक, दाख, चिरो जी, किसमिस, उज्वल रारी वदाम ।  
 लफरी, सेव, लुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम ।  
 अरु भेदा बहु भाँति-भाँति हैं पदरस के मिश्रण ।  
 सूरदास प्रभु करत कलेवा, रीके स्थाम सुजान ॥

मैया मोहिँ दाऊ बहुत खिमायौ ।

मोसौ कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कथ जायौ ।  
 कहा करौ इहि रिस के भारे खेलन हौ नहिँ जात ।  
 पुनि-पुनि कहन कौन है माता, को है तेरी तात ।



गोकुल लीला

गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू कत स्यामल नान्हा ।  
 चुटकी दे-दे ग्वाल नचावत, हँसत सबै मुत्तकात ।  
 तू मोहीं कौँ मारन सीखी, दाउहिँ कबहुँ न खीरि ।  
 मोहन-सुख रिस की ये बातैं, जनुमति सुनि-सुनि रीरि ।  
 सुनहु कान्ह, बलनद्र चवाई, जनमत ही को धूत ।  
 सूर स्याम मोहिँ गोधन की सौँ, हँ माता तू पूत ॥३३॥

खेलन दूरि जात कत कान्हा ।

आजु सुन्यौ मैँ हाऊ आर्यौ, तुम नहिँ जानत नान्हा ।  
 इक लरिका अबहीँ भजि आपौ, रोवत देख्यौ ताहि ।  
 कान तोरे वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि ।  
 चलौ न, बेगि सबारै जैयै, भाजि आपनैँ धाम ।  
 सूर स्याम ग्रह बात सुनतही बोलि लिए बलराम ॥३४॥

खेलत मैँ को काको गुसैयौ ।

हरि हारे जीते श्रीदामा, वरबस हीँ कत करत रिसैया ।  
 जाति-पाँति हमतैँ बड़ राहीँ, नाहीँ बसत तुम्हारी दुँयाँ ।  
 अति अधिकार जनावत यातैँ जातैँ अधिक तुम्हारै गैयौ ।  
 रुहठ करै तासौँ को खेलै, रहे बैठि जहँ-तहँ सब ग्यैयौ ।  
 सूरदास प्रभु खेलयौइ चाहत, दाउँ दियौ करि नंद-दुहैयौ ॥३५॥

हरि कौँ टेरति है नँदरानी ।

बहुत अबार भई कहुँ खेलत रहे मरे सारँग पानी ?  
 सुनतहिँ टेर, दौरि तहँ आए, कब के निकसे लाख ।  
 जँवत नहीँ नंद तुम्हारे बिनु, बेगि चलौ, गोपाल ।  
 स्यामहिँ ल्याई महरि जसोदा तुरतहिँ पाहुँ पखारे ।  
 सूरदास प्रभु संग नंद कौँ बैठे हँ दोउ बारे ॥३६॥

जँवत कान्ह नंद इकठारे

कलुक खात लपटात दोऊ कर बालकलि अति भारे ।  
 वरा कौर मेलत सुख भीतर, भिरिब दसन टकटारे ।  
 तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दारे ।  
 फूँकति बरन रोहिनी डाढ़ी, लिए लराइ अँकोरे ।  
 सूर स्याम कौँ मधुर कौर है, कीन्हे तात निहारे ॥३७॥

मोहन काहें न उगिलौ माटी ।

आर-धार अगलचि उपजावति, महरि हाथ लिए सैंटी ।  
महतारी सैं मानत नाहीं. कपट-चतुरई ठाटी ।  
बदन उवारि दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी ।  
बड़ी बार भई लोचन उधरे, भरम-जवनिका फाटी ।  
सूर निरखि नेंदरानि अमित भई, कहति न मोडी-खाटी ॥३८॥

नंद करत पूजा, हरि देखत ।

बंद बजाइ देव अन्हवायौ, दस चंदन लै भेटत ।  
पट अंतर दे भोग लगायौ, आरति करी बनाइ ।  
कहत कान्ह, बाबा लुम अरप्यौ, देव नहीं कछु खाइ ।  
चितै रहे तब नंद महरि-मुख सुनहु कान्ह की बात ।  
सूर स्याम देवनि कर जोरहु, कुसल रहै जिहिं गाल ॥३९॥

कहत नंद जशुमति सैं बात ।

कहा जानिए कह तै देख्यौ, भैरै कान्ह रिसात ।  
पाँच वरप को भैरौ नन्हैया, अचरज तेरी बात ।  
बिनहौं काज सैंटि लै धावति, ता पाछें बिललात ।  
कुसल रहै बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात-अन्हात ।  
सूर स्याम कौ कहा लगावति, बाजक कोमल-बात ॥४०॥

माखन-चोरी

मैया री, मोहिं माखन भावै ।

जो मेवा पकवान कहति तू, मोहिं नहीं रुचि आवै ।  
ब्रज-जुवती इक पाछें ठाढ़ी, सुनत स्याम की बात ।  
मन-मन कहति कबहु अपनै घर, देखौं माखन खात ।  
बैठै जाइ मथनियों कैं दिग, मै तब रहौं छपानी ।  
सूरदास प्रभु अंतरजामी, ग्वालनि मन की जानी ॥४१॥

गणु स्याम तिहिं ग्वालनि कैं घर ।

देख्यौ द्वार नहीं कोउ, इत-उत चितै, चले तब भीतर ।  
हरि आवत गोपी जब जान्यौ, आपुन रही छपाइ ।  
सूनें सदन मथनियों कैं दिग, बैठि रहे अरगाइ ।  
माखन भरी कमोरी देखत लै-लै लागे खाच ।  
चितै रहे मनि-खंभ-छाँह तन, तासौं करत सयान ।



प्रथम आहु मैँ चोरी आयौ, भलों बन्धौ है संग ।  
 आपु खात प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग ?  
 जौ चाहौ सब देउँ कमोरी, अति मीठो कत डारत ।  
 तुमहिँ देति मैँ अति सुख पायौ, तुम जिथ कहा बिचारत ?  
 सुनि-सुनि वात स्याम के मुख की उमँगि उठी ब्रजनारी ।  
 सूरदास प्रभु निरखि ग्वालिन-मुख तब भजि चले मुरारी ॥४२॥

प्रथम कशी हरि माखन-चोरी ।

ग्वालिन मन इच्छा करि पूरन, आपु भजे ब्रज खोरी ।  
 मन मैँ यहै बिचार करत हरि, ब्रज घर-घर सब जाउँ ।  
 गोकुल जनम लियौ सुख-कारन, सबकेँ माखन खाउँ ।  
 बाल-रूप जसुमति मोहिँ जानै, गोपिनि मिलि सुख भोग ।  
 सूरदास प्रभु कहत प्रेम सौँ, ये मेरे ब्रज-लोग ॥४३॥

—गोपालहिँ माखन खान दे ।

सुनि री सखी, मौन ह्वै रहिये, बदन दर्हा लपटान दे ।  
 गहि बहियाँ हौँ लैकेँ जैहौँ, नैननि तपति बुझान दे ।  
 याकौ जाइ चौगुनौ लैहौँ, मोहिँ जसुमति लौँ जान दे ।  
 जानति हरि कछू न जानत, सुनत मनोहर कान दे ।  
 र स्याम ग्वालिन बस कीन्हौ, राखतिँ तन-मन-प्रान दे ॥४४॥

जसुदा कहँ लौँ कीजै कानि ।

दिन-प्रति कैसेँ सही परति है, दूध-दही की हानि ।  
 अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि ।  
 गोरस खाइ, खवावै लरिकनि, भाजत भाजन भानि ।  
 मैँ अपने मंदिर के कोने, राख्यौ माखन छानि ।  
 सोई जाइ तिहारैँ ढोटा, लीन्हौ है पहिचानि ।  
 बूझि ग्वालिन निज गृह मैँ आयौ, नैँ कु न संका मानि ।  
 सूर स्याम यह उतर बनायौ, चीँटी काढ़त पानि ॥४५॥

आपु गए हरपुँ सूनेँ घर ।

खा सबै बाहिर ही छँड़े, देख्यौ दधि-माखन हरि भीतर ।  
 रत मध्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात, धरत अधरनि पर ।  
 न देइ सब सखा बुलाए, तिनहिँ दंत भरि-भरि अपनैँ कर ।

छिटकिरही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन में डर ।  
उठत ओट लै लखत सबनि कौँ, पुनि लै खात लेत ग्वालनि बर ।  
अंतर भई ग्वालि यह देखति मगन भई, अति उर आनंद भरि ।  
सूर स्याम मुख निरखि थकित भई, कहत न बनै, रही मन दै हरि ॥१॥

जान जु पाए हौँ हरि नीकैँ ।

चोरि-चोरि दधि माखन मेरी, निए प्रति गीधि रहे हो छीकैँ ।  
रोक्यौ भवन-द्वार बज-सुन्दरि, बृपुर मूँदि अचानक ही कै ।  
अब कैसेँ जैयलु अपने बल, भाजन भाँजि, दूध दधि पी कै ?  
सूरदास प्रभु भलैँ परे फँद, देउँ न जान भावते जी कैँ ।  
भरि गँडूप, छिरकि दै नैननि, गिरिधर भाजि चले दै कीकैँ ॥२॥

अब ये भूठहु बोलत लोग ।

पाँच बरष अरु कलुक दिननि कौँ, कब भयो चोरी जोस ।  
इहिँ मिस देखन आवति ग्वालनि, मुँह फाटे जु गँवारि ।  
अनदोषे कौँ दोष लगावति, दई द्रंड़गौ टारि ।  
कैसेँ करि याकी भुज पढुँची, कौन वेग ह्यौँ आयौ ?  
ऊखल ऊपर आनि, पीठि दै, तापर सखा चढ़ायौ ।  
जौ न पत्याहु चलो सँग जसुमति देखौ नैन निहारि ।  
सूरदास प्रभु नेकुँ न बरजौ, मन मै महारि बिचारि ॥३॥

इन अँखियति आगें तैँ मोहन, एकौ पल जनि होहु निचारे ।  
हौँ बलि गई, दरस देखैँ निरु-मालफत है नैननि के तारे ।  
औरौ सखा बुलाइ आपने इहिँ आँगन खेलौ मेरे बारे ।  
निरखति रहौँ फनिग की मनि ज्यौँ, सुन्दर बाल-बिनोद तिहारे ।  
मधु, मैवा, पकवान, मिठाई व्यंजन खाटे, मीठे, खारे ।  
सूर स्याम जोइ-जोइ तुम चाहौ, सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे ॥

चोरी करत कान्ह धरि पाए ।

निसि-बासर मोहिँ बहुत सतायौ अब हरि हाथहिँ आए ।  
माखन-दधि मेरी सब खायौ, बहुत अचगारी कीन्ही ।  
अब तौ घात परे हौँ लालन, तुम्हैँ भलैँ मैँ चीन्ही ।  
दोड भुज पकरि, कशौँ कहँ जैहौँ, माखन लेउँ मँगाइ ।  
तेरी सौँ मैँ नेकुँ न खायौ, सखा गये सब खाइ ।

मुख तन चितै, विहँसि हरि दीन्हौ, रिस तव गई बुझाइ ।  
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी, सूरदास बलि जाइ ॥५०॥

कान्हहिँ बरजति किन नँदरानी ।

एक गाउँ कैँ बसत कहाँ लौँ, करैँ नंद की कानी ।  
तुम जो कहति हौ, मेरौ कन्हैया, रांगा कैसौ पानी ।  
बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट कौ दानी ।  
बचन विचित्र, कमल-दल-लोचन, कहत सरस बर बानी ।  
अचरज महरि तुम्हारे आगैँ—अबैँ जीभ तुतरानी ।  
कहँ मेरौ कान्ह, कहाँ तुम ग्वारिनि, यह विपरीति न जानी ।  
आवति सूर उरहने कैँ—मिस, देखि कुँवर सुसुकानी ॥५१॥

—मथुरा जाति हौँ बेचन दहियौ ।

मेरैँ घर कौ द्वार, सखी री, तबलौँ देखति रहियौ ।  
दधि-माखन द्वैँ माट अछूते तौहिँ सौँपति हौँ सहियौ ।  
और नहीँ या ब्रज मैँ कोऊ, नन्द-सुवन सखि लहियौ ।  
ते सब बचन सुने मन-मोहन, वहैँ राह मन गहियौ ।  
सूर पौरि लौँ गई न ग्वालिनि, कूद परे दैँ अहियौ ॥५२॥

—गएँ स्याम ग्वालिनि घर सूनेँ ।

माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए सब चूनेँ ।  
बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि करयौ दस टुक ।  
सोवत खरिकनि छिरकि रानी सौँ, हँसत चले दैँ कूक ।  
आइ गई ग्वालिनि तिहिँ औसर, निकसत हरि धरि पाए ।  
देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए ।  
दोड भुज धरि गाढ़ैँ करि लीन्है, गई महरि कैँ आगैँ ।  
सूरदास अब बसे कौन ह्यौँ, पति रहिहँ ब्रज त्यागैँ ॥५३॥

करत कान्ह ब्रज-धरनि अचगारी ।

भक्ति महरि कान्ह सौँ पुनि-पुनि, उरहन लैँ आवति हँ सगारी ।  
बाप के पूत कहावत, हम वैँ वास बसत इक बगारी ।  
बहु तैँ ये बड़े कहैँहँ फेरि बसैँहँ यह ब्रज नगारी ।  
नी कैँ खीकत हरि रोए, झूठहिँ मोहिँ लगावति धगारी ।  
स्याम मुख पौँछि जसोदा, कहति सबैँ जुवती हँ लंगारी ॥५४॥

अपनौ गाँउँ लेउ नँदरानी ।

बड़े बाप की बेटी, पूतहिँ भली पढ़ावति बानी ।  
 सखा-भीर लै पैठत घर मैँ आपु खाइ तौ सहिगे ।  
 मैँ जब चली सामुहैँ पकरन, तव केगुन कहा कहिगे ।  
 भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैँ घर पौढ़ी आइ ।  
 हरैँ हरैँ बेनी गाहि पाछैँ, बाँधी पाटी लाइ ।  
 सुनु मैया, याकेगुन मोसैँ, इन मोहिँ लयी बुलाई ।  
 दधि मैँ पढ़ी सेत की मोपैँ चीटी मवैँ कड़ाई ।  
 टहल करत मैँ याके घर की यह पति संग मिलि सोई ।  
 सूर अचन सुनि हँसी जसोदा, ग्वाल रही मुख गोई ॥

भहारि तैँ बड़ी कृपन है माई ।

दूध-दही बहु विधि कौ दीनौ, सुत सौँ धरति कृपाई ।  
 बालक बहुत नहीँ री तेरैँ एकैँ कुँवर कन्हाई ।  
 सोऊ तौ घरही घर डोलतु, माखन खात चोराई ।  
 वृद्ध बयस, पूरे पुन्यनि तैँ, तैँ बहुतैँ निधि पाई ।  
 ताहूँ केँ खैबे-पीबेँ कौँ, कहा करति चतुराई ।  
 सुनहुँ न बचन चतुर नागरि केँ जसुमति नन्द सुनाई ।  
 सूर स्याम कौँ चोरी केँ मिस, देखन है यह आई ॥

अनत सुत गोरस कौँ कत जात ?

घर सुरभी कारी धौरी कौँ माखन मॉनि न खात ।  
 दिन प्रति सबै उरहने कौँ मिस, आवति है उठि प्रात ।  
 अनलहतै अपराध लगावति, बिकटि बनावति बात ।  
 निपट निसंक बिवादहिँ संसुख, सुनि-सुनि नन्द रिसात ।  
 मोसौँ कहति कृपन तेरैँ घर ढोटाहूँ न अघात ।  
 करि मनुहारि उठाइ गोद लै, बरजाति सुत कौँ मात ।  
 सूरि स्याम नित सुनत उग्रहनौ, दुख पावत तेरौ तात ॥

हरि सब भाजन फोरि पराने ।

हाँक देत पैठे दैँ पेला नैँकु न मनहिँ डराने ।  
 सी केँ छोरि, मारि लरकनि कौँ, माखन-दधि सब खाई ।  
 भवन मच्यौ दधि कौँदौ, लरकनि रोवत पाए जाई ।

सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तैरौ सौ कहुं नाहिं ।  
 हाटनि-बाटनि, गलिनि कहूँ कोउ चलत नहीँ डरपाहिं ।  
 रितु आए कौ खेल, कन्हैया सब दिन खेलत फाग ।  
 रोकि रहत राहि गली साँकरी, टंढी बाँधत पाग ।  
 वारे तैँ सुत ये ढङ्ग लाए, मनहीँ मनहिँ सिहाति ।  
 सुनैँ सूर ग्वालनि की बातँ, सकुचि महरि पढ़िताति ॥५८॥

कन्हैया तू नहिँ मोहिँ डरात ।

पटरस धरे छाँड़ि कत पर धर, चोरी करि करि खात ।  
 बकत-बकत मोसौँ पचिहारी, नैँ कुहुँ लाज न आई ।  
 ब्रज-परगन-सिकदार महर, तू ताकी करत नन्हाई ।  
 प्रत सपूत भयौ कुल मेरेँ, अब मैँ जानी बात ।  
 सूर श्याम अब लौँ तुहिँ बकस्यौ, तेरी-जानी घात ॥५९॥

मैया मैँ नहिँ माखन खायौ ।

ख्याल परँ ये सखा सबै मिलि, मेरेँ सुख लपटायौ ।  
 देखि तुही सौँके पर भाजन, ऊँचैँ धरि लटकायौ ।  
 हौँ जु कहत नान्हे कर अपनैँ मैँ कैसेँ करि पायौ ।  
 मुख दधि पोँछि, बुद्धि एक कीन्ही, दोना पीठि दुरायौ ।  
 डारि साँटि, भुसुकाइ जसोदा, श्यामहिँ कंठ लरायौ ।  
 बाल-बिनोद-मोद मन मोह्यौ, भक्ति-प्रताप दिखायौ ।  
 सूरदास जसुमत कौ यह सुख, सिव विरञ्चि नहिँ पायौ ॥६०॥

जसुमति तेरौ वारौ कान्ह अतिहीँ जु अचगारौ ।  
 दूध-दही-माखन ले डारि देत सगरौ ।  
 भोरहिँ नित प्रतिहीँ उठि, मोसौँ करत भगरौ ।  
 ग्वाल-बाल संग लिपु घेरि रहै डगरौ ।  
 हम-तुम सब बैस एक, कातैँ को अगारौ ।  
 लियौ दियौ सोई कछु, डारि देहु भगरौ ।  
 सूर श्याम तेरौ अति, गुननि माहिँ अगारौ ।  
 चोली अरु हार तोरि छोरि लियौ सगरौ ॥६१॥

ऐसी रिस मैँ जौ धरि पाऊँ ।

कैसे हाल करौँ धरि हरि के, तुमकौँ प्रगट दिखाऊँ ।

सँटिया लिपु हाथ नँदरानी, थरथरात रिस गात ।  
 मारे बिना आजु जौ छाँड़ौ, लागै मरै तात ।  
 इहि अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति ।  
 भली महरि सूधौ सुत जाचौ, चोली-हार बतावति ।  
 रिस मै रिस अतिहीँ उपजाई, जानि जननि अभिलाप ।  
 सूर स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौँ कहि माप ॥६२॥

बाँधौँ आजु कौन तोहिँ छोरे ।

बहुत लँगरई कीन्डौ मोसौँ, भुज गहि रजु ऊखल सौँ जोरे  
 जननी अति रिस जानि बँधायौ, निरखि बदन, लोचन जल दोरे  
 यह सुनि ब्रज-जुवतीँ सब धाईँ कहतिँ कान्ह अब क्यों नहिँ छोरे  
 ऊखल सौँ गहि बाँधि जसोदा, मारन कौँ साँटी कर तोरे  
 साँटी देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै  
 सुनहु महरि ऐसी न बूझिये सुत बाँधति माखन दधि थोरै  
 सूर स्याम कौँ बहुत सतायौ, चूक परी हम तैँ यह भोरै ॥

कहा भयो जौ घर कँ लरिका चोरी माखन खायौ  
 अहो जसोदा कत आसति हौ यहै कोखि को जायौ  
 बालक अजौँ अजान न जानै केतिक दह्यौ लुठायौ  
 तेरो कहा गयौ ? गोरस कौ गोकुल अंत न पायौ ।  
 हा हा लकुट आस दिखरावति, आँगन पास बँधायौ  
 रुदन करत दोउ नैन रचे हैं, मनहुँ कमल-कन छायाँ  
 पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछैँ बिलखि बदन सुरमायौ  
 सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि, हँसि करि कंठ लगायौ ॥

हलधर सौँ कहि ग्वालि सुनायौ ।

प्रातहिँ तैँ तुम्हरो लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ  
 काहू के लरिकहिँ हरि मार्यो, भोरहि आनि तिनहिँ गुहरायौ  
 तबहीँ तैँ बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौँ आनि जनायौ  
 हम बरजी, बरज्यौ नहिँ मानति, सुनतहिँ बल आतुर ह्यै धायौ  
 सूर स्याम बैठे ऊखल लागि, माता उर तनु अतिहि त्रसायौ ।

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए ।

देखि स्याम ऊखल सौँ बाँधे, तबहीँ दोउ लोचन भरि आए

## गोकुल लीला

मैं बरज्यौ के बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए ।  
 अजहूँ छँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोर जननि पै आए ।  
 स्यामहिँ छोरि मोहिँ बाँधे बरु, निकसत सगुन भले बहिँ पाए ।  
 मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा, तिनके भुज मोहिँ बँधे दिखाए ।  
 माता सौँ कह करौँ दिठाई, सो सरूप कहि नाम सुनाए ।  
 सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत पाए ॥६६॥

तबहिँ स्याम इक बुद्धि उपाई ।

जुवती गईँ धरनि सब अपनैँ, गृह कारज जननी अटकाई ।  
 प्राणु गए जमलाजुँ न-तरु-तर, परसत पात छठे महराई ।  
 दिणु गिराई धरनि दोऊ तरु सुत कुवेर के प्रगटे आई ।  
 दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति, चारि भुजा तिन्ह प्रगट दिखाई ।  
 सूर धन्य ब्रज जनम खियाँ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥६७॥

अब घर काहू केँ जनि जाहु ।

तुम्हरेँ आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिँ खाहु ।  
 बरै जेवरी जिहिँ तुम बाँधे, परै हाथ भहराह ।  
 नंद मोहिँ अतिहीँ आसत हैँ, बाँधे कुँवर कन्हाइ ।  
 रोग जाउ मेरे हलधर के छोरत हो तब स्याम ।  
 सूरदास प्रभु खात फिरौँ जनि माखन-दधि तुव धाम ॥६८॥

भूखौ भयौ आजु मेरौ बारौ ।

भोरहिँ ग्वारि उरहनौ ल्याई, उहिँ यह कियो पसारौ ।  
 पहिलेहिँ रोहिनि सौँ कहि राख्यौ, तुरत करहु जेवनार ।  
 ग्वाल-बाल सब बोलि लिणु, मिलि बैठे नन्द-कुमार ।  
 भोजन बेगि ल्याउ कछु मैया, भूख लागि मोहिँ भारी ।  
 आजु सबारैँ कछु नहिँ खायौ, सुनत हँसी महतारी ।  
 रोहिनि चितै रही जसुमति-तन, सिर धुनि-धुनि पड़ितानी ।  
 परसहु बेगि, बंर कत लावति, भूखे साँरगपानी ।  
 बहु व्यंजन बहु भाँति रसोई, पटरस के परकार ।  
 सूर स्याम हलधर दोउ भैया, और सखा सब ग्वार ॥६९॥

मोहिँ कहतिँ जुवती सब चोर ।

खेलत कहुँ रहौँ मैँ बाहिर, चितै रहतिँ सब मेरी ओर ।

बोलि लेंतिं भीतर घर अपनैँ, मुख चूमतिँ, भरि लेंतिँ अँकोर ।  
 माखन हेरि देतिँ अपनैँ कर कछु कहि विधि सँ करतिँ निहोर ।  
 जहाँ मोहिँ देखतिँ, तहाँ डरतिँ, मैं नहिँ जात दुहाई तोर ।  
 सूर स्याम हँसि कँठ लरायौ, वै तरुनी कहँ बालक मोर ॥७०॥

जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपनैँ ही आँगन तुम खेलौ ।  
 बोलि लेंहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ ।  
 ब्रज-बनिता सब चोर कहतिँ तोहिँ, लाजनि सकुचि जात मुख मेरौ ।  
 आहु मोहिँ बलराम कहत हे, भूठहिँ नाम धरति हैँ तेरौ ।  
 जब मोहिँ रिस लानति तब ब्रासति, वाँधति, मारति, जैसेँ चेरौ ।  
 सूर हँसति ग्वालिन दे तारी, चोर नाम कंसैँहुँ सुत फेरौ ॥७१॥



## वृंदावन लीला

वन प्रस्थान

महर-महरि कैँ मन यह आई ।

गोकुल हीत उपद्रव दिन प्रति, बसिए वृंदावन मैँ जाई ।  
सब गोपनि मिलि सकटा साजे, सबहिनि के मन मैँ यह भाई ।  
सूर जमुन-तट डेरा दीन्हे, पाँच बरष के कुँवर कन्हाई ॥१॥

हन

मैँ दुहिहैं मोहिँ दुहन सिखावहु ।

कैसेँ गहत दोहनी घुटुवनि, कैसेँ बछरा थन लै लावहु ।  
कैसेँ लै नोई पग बाँधत, कैसेँ लै गैया अटकावहु ।  
कैसेँ धार दूध की बाजति, सोइ सोइ विधि तुम मोहिँ बतावहु ।  
निपट भई अब साँझ कन्हैया, गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु ।  
सूर स्याम सौँ कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहि उठि आवहु ॥२॥

चारण

आजु मैँ गाइ चरावन जैहैं ।

वृंदावन के भौँति भौँति फल अपने कर मैँ खैहैं ।  
ऐसी बात कहौ जनि बारे, देखौ अपनी भीति ।  
तनक तनक पग चलिहौ कैसेँ, आवत हूँ है रीति ।  
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हूँ साँझ ।  
तुम्हारौ कमल बदन कुम्हिलै है, रँगत धामहिँ माँझ ।  
तेरी सौँ मोहिँ धाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक ।  
सूरदास प्रभु क्यौ न मानत, पर्यौ आपनी टेक ॥३॥  
वृंदावन देख्यौ नंद-नंदन, अतिहिँ परम सुख पायौ ।  
जहँ-जहँ गाइ चरतिँ, ग्वालनि सँ ग, तहँ-तहँ आपुन धायौ ।  
बलदाऊ मोकौँ जनि छुँड्यौ, संग तुम्हारैँ येहैं ।  
कैसेँहुँ आजु जसोदा छुँड्यौ, कालिह न आवत पैहैं ।  
सोवत मोकौँ टेरी लेहुगे, बाबा नंद-दुहाई ।  
सूर स्याम बिनती करि बख सौँ, सखनि समेत सुवाई ॥४॥

बिहारी बाज आवहु, आई छोक ।

भई अवार, गाइ बहुरावहु, उलटावहु वै हौं ।

अजुँत, भोज अरु सुबल, सुदामा, मधुमंगल इक ताक ।

मिलि बैठे सब जेवन लागे, बहुत बने कहि पाक ।

अपनी पत्रावलि सब देखत, जहँ-तहँ फेनि पिराक ।

सूरदास प्रभु खात ग्वाज संग, ब्रह्मलोक यह धाक ॥२॥

ब्रज में को उपज्यौ यह भैया ।

संभ सखा सब कहत परस्पर, इनके गुन आगमैया ।

जब तै ब्रज अवतार धर्यौ इन, कोउ नहीं घान कंथैया ।

तृणावत पतना पछारी, तब अति रहे नन्हैया ।

कितिक बात यह थका विचार्यौ, धनि जसुमति जिन जैया ।

सूरदास प्रभु की यह लीला, हम कत जिय पछितैया ॥

आजु जसोदा जाइ कन्हैया महा कुष्ट इक मार्यौ ।

पन्नग-रूप मिले सिसु गो-सुत इहिँ सब साथ उबार्यौ ।

गिरि-कंदरा समान भयानक जब अध बदन पसार्यौ ।

निडर गोपाल पैठि मुख भीतर, खंड-खंड करि डार्यौ ।

याकेँ बल हम बहत न काहुहिँ, सकल भूमि तृन चार्यौ ।

जीते सबै असुर हम आनैँ, हरि कबहुँ नहीं हार्यौ ।

हरषि गए सब कहनि महरि सौँ, अबहिँ अघासुर मार्यौ ।

सूरदास प्रभु की यह लीला ब्रज कौ काज सँवार्यौ ॥७॥

ब्रह्मा बालक-बच्छ हरे ।

आदि अंस प्रभु अंतरजामी, मनसा तैँ जु करे ।

सोइ रूप वै बालक गो-सुत, गोकुल जाइ भरे ।

एक बरष निसि आसर रहि सँगा, काहु न जानि परे ।

आस भयौ अपराध आपु लखि, अस्तुति करत करे ।

सूरदास स्वामी मनमोहन, तामैँ मन न धरे ॥८॥

आजु कन्हैया बहुत बच्यौ री ।

खेलत रह्यौ घोष केँ बाहर, कोउ आयौ सिसु रूप रच्यौ री ।

मिलि गयौ आइ सखा की नाईँ, लै चढ़ाइ हरि कंध सच्यौ री ।

गगन उड़ाइ गयौ लै स्थामहिँ, आनि धरनि पर आप दच्यौ री ।

मैं सहाइ होत है जहँ तहँ, स्वम करी पूरब पुन्य पछ्यौ री ।  
पूर स्याम अब केँ बचि आण, अज-घर-घर सुख-सिंधु सच्यौ री ॥ ६ ॥

अब केँ राखि लेहु गोपाल ।

दसहँ दिसा दुसहँ दावागिनि, उपजी है इहिँ काल ।  
पटकत बाँस, काँस कुम् चटकत, लटकत ताल तमाल ।  
उचटत अति अंगार, फुटत फर, ऊपटत लपट कराल ।  
धूम धूँधि बाढ़ी धर अंबर, चमकत त्रिच विच उजाल ।  
हरिन, बराह, मोर, चातक, पिक, जरत जीव बेहाल ॥  
जनि जिय डरहु, नैन मूँदहु सब, हँसि बोलै नँदलाल ।  
सूर अगिनि सब वदन लज्जानी, अभय किणु नज-बाल ॥ १० ॥

बन तैँ आवत धेनु चराण ।

संध्या समय साँधरे सुख पर, गो-पद-रज लपटाए ।  
बरह मुकुट केँ निकट लसति लट, मधुप मनौ रुचि पाए ।  
बिलसत सुधा जलज आनन पर, उड़त न जात उड़ाए ।  
द्विधि बाहन-भच्छुन की माला, राजत उर पहिराए ।  
एक बरन बपु नहिँ बड़ छोटे, ग्वाल बने इक धाए ।  
सूरदास बलि लीला प्रभु की, जीवन जन जस गाए ॥ ११ ॥

मैया बहुत बुरो बल काऊ ।

कहन लग्यौ बन बड़ो तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ ।  
मोहँ कौँ छुचकारि गयो लै, जहाँ सधन बन भाऊ ।  
भागि चलौ कहि, गयो उहाँ तैँ, काटि खाइ रे हाऊ ।  
हौँ डरपौँ, कौँपौँ अरु रोपौँ, कोउ नहिँ धीर धराऊ ।  
थरसि गयोँ नहिँ भागि सकौँ, वै भागे जात अगाऊ ।  
मोसौँ कहत मोल कौ लीनो, आपु कहावत साऊ ।  
सूरदास बल बड़ौ चथाई, नैसैहिँ मिले सखाऊ ॥ १२ ॥

मैया हौँ न चरहौँ गाइ ।

सिगरे ग्वाल घिरावत मोसौँ, मेरे पाइ पिराई ।  
जौ न पत्याहि पूछि बलदाउहिँ, अपनी सौँह दिवाइ ।  
यह सुनि भाइ जसोदा ग्वालनि, गारी देति रिसाइ ।  
मैं पठवति अपने जरिका कौँ, आवै मन बहराइ ।  
सूर श्याम मेरौ अति बालक, भारत ताहि रिंगाइ ॥ १३ ॥

धनि यह बृंदावन की रेनु ।

नंद-केसोर चरावत गैयाँ, सुखहिं वजावत बेनु ।  
मन-मोहन कौ ध्यान धरैं जिय, अति सुख पावत चैनु ।  
चलत कहाँ मन और पुरी तन, जहँ कछु लैन न दैनु ।  
इहाँ रहहु जहँ जडनि पवहु, ब्रजवासिनि कै ऐनु ।  
सूरदास ह्यौं की सरवरि नहि, करुपवृच्छ सुर-धैनु ॥

सोवत नींद आई गई स्थामहिं ।

महरि उठी पौढ़ाइ दुहुनि कौं, आपु लगी गृह कामहिं  
वरजति है घर के लोगनि कौं, हरुपे लै-लै नामहिं  
गाढ़ै शोभि न पावत कोऊ, डर मोहन बत्तरामहिं  
शिव सनकादि अंत नहि पावत, ध्यावन अह-निसि जामहिं  
सूरदास-प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नंद-धामहिं ॥

देखत नंद कान्ह अति सोवत ।

भूखे भए आजु बन-भीतर, यह कहि कहि मुख जोवत  
कहाँ नही मानत काहु कौ, आपु हठी दोउ वीर  
बार-बार तनु पोंछत कर सौं, अतिहिं प्रेम की पीर  
सेज मंगाइ लई नहँ अपनी, जहाँ स्याम - बत्तराम  
सूरदास प्रभु कै दिग सोए, संग पौढ़ी नंद-बाम ।

जागि उठे तब कुंवर कन्हाई ।

मैया कहाँ गई मो दिग तैं, संग सोवति बल भाई  
जागे नंद, जसोदा जागी, बोलि लियु हरि पास  
सोवत मरुकि उठे काहे तैं, दीपक कियौ प्रकास  
सपनै कृदि पर्यौ जमुना दह, काहूँ दियौ गिराइ  
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, जनि हो लाल डराइ

मैं वरज्यौ जमुना तट जात ।

सुधि रहि गई न्हात की तेरै, जनि डरपौ मेरे तात  
नंद उठाइ लियौ कोरा करि, अपनै संग पौढ़ाइ  
बृंदावन मैं फिरत जहाँ तहँ, किहिं कारन तू जाइ  
अब जनि जैहौ गाइ चरावन, कहँ को रहित बलाइ  
सूर स्याम वंपति बिच सोए, नींद गई तब आह

## वृंदावन लीला

मन

नारद ऋषि नृप सौँ यौँ भाषत ।

वै हैँ काल तुम्हारे प्रगटे, काहैँ उनकोँ राखत ।  
 काली उरग रहै जमुना मैँ, तहँ तैँ कमल मँगावहु ।  
 दूत पठाइ देहु ब्रज ऊपर नंदहिँ अनि डरपावहु ।  
 यह सुनि कै ब्रज लोग डरौँगे, वैँ सुनिहैँ यह बात ।  
 पुहुप लैन जैहैँ नंद-ढोटा, उरग करै तहँ घात ।  
 यह सुनि कंस बहुत सुख पायौ, भली कही यह मोहि ।  
 सूरदास प्रभु कौँ मुनि जानत, ध्यान धरत मन जोहि ॥१६॥

कंस बुलाइ दूत इक लीन्हौ ।

कालीदह के फूल मँगाए, पत्र लिखाइ ताहि कर दीन्हौ ।  
 यह कहियो ब्रज जाइ नंद सौँ, कंस राज अति काज मँगायो ।  
 तुरत पठाइ दिऐँ ही बनिहै, भली भौँति कहि-कहि समुझायौ ।  
 यह अंतरजामी जानी जिय, आपु रहे, बन ग्वाल पठाए ।  
 सूर श्याम, ब्रज-जन-सुखदायक, कंस-काल, जिय हरष बढ़ाए ॥२०॥

घाती बाँचत नंद डराने ।

कालीदह के फूल पठावहु सुनि सबही बबराने ।  
 जो मोकोँ नहिँ फूल पठावहु, तौ ब्रज देहुँ उजारि ।  
 महर, गोप, उपनंद न राखौँ, सबहिनि डारौँ मारि ।  
 पुहुप देहु तौ बनै तुम्हारी, ना तरु गए विलाइ ।  
 सूर श्याम बलरामु तिहारे, माँगौँ उनहिँ धराइ ॥२१॥

पूछौ जाइ तात सौँ बात ।

मैँ बलि जाउँ मुखारबिंद की, तुमहीँ काज कंस अकुलात ।  
 आपु श्याम नंद पै धाए, जान्यौ आपु पिता बिलखात ।  
 अबहीँ दूर करौँ दुख इनकोँ, कंसहिँ पढै देउँ जलजात ।  
 मौसौँ कही बात बाबा यह, बहुत करत तुम सोच विचार ।  
 कहा कहौँ तुमसौँ मैँ प्यारे, कंस करत तुमसौँ कछु मार ।  
 जब तैँ जनम भयो है तुम्हरो, केत करबर टरे कन्हाइ ।  
 सूर श्याम कुलदेवनि तुमकोँ जहाँ तहाँ करि लिखौ सहाइ ॥२२॥

खेलत श्याम, सखा लिए संग ।

इक मारत, इक रोक्ख गेँदहिँ, इक भागत करि नाना रंग ।

मार परम्पर करत आउ मै अति आनद मए मन माहि  
खेलत ही मै स्याम सबनि कौ, जमुना तट कौ लीन्हे जाहि ।  
मारि भजत जो जाहि, ताहि सो मारत, लेत आपनौ हाउ ।  
सूर स्याम के गुन को जानै कहत और कहु और उगाउ ॥

स्याम सखा कौ गेँद चलाई ।

श्रीदामा सुरि शंग बचायौ, गेँद परी कालीदह जाई ।  
धाइ गही तब फेँट स्याम की, देहु न मेरी गेँद मँगाई ।  
और सखा जनि मोकौँ जानौ, मोसौँ तुम जनि करौ दिगाई ।  
जानि-बूझि तुम गेँद गिराई, अब दीन्है ही बनै कन्हाई ।  
सूर सखा सब हँसत परम्पर, भली करी हरि गेँद मँगाई ॥२

फेँट छुँदि गेरी देहु श्रीदामा ।

काहे कौँ तुम रारि बड़ापत, तनक वात केँ कामा ।  
मेरी गेँद लेहु ता बदलै, बाहँ गहत हौ धाइ ।  
छोटौ बड़ौ न जानत काहँ, करत बरावरि आइ ।  
हम काहे कौँ तुमहिँ बरावर, बड़े नंव के पूत ।  
सूर स्याम दीन्है ही बनिहँ, बहुत कहावत भूत ॥२५

रिस करि खीन्ही फेँट छुड़ाइ ।

सखा सबै देवत हैँ ठाड़े, आउन चड़े कदम पर धाइ ।  
ताही दै दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाजि डराइ ।  
रोवन चले श्रीदामा वर कौँ, जसुमति आरौँ कहिहँ जाइ ।  
सखा-सखा कहि स्याम पुकारयौ, गेँद आपनौ लेहु न आइ ।  
सूर स्याम पीनांअर काळे, कृदि परे दह मैँ भहराइ ॥२

चौँ कि परी तन की सुध आई ।

आजु कहा अज सोर भचायौ, तब जान्यौ दह गिरयौ कन्हाई ।  
पुत्र-पुत्र कहिकै उडि दौरी, व्याकुल जमुना तीरहिँ धाई ।  
अज-बनिता सब संगहिँ लागीँ आइ गए बल, अअज भाई ।  
जननी व्याकुल देखि प्रबोधत भीरज करि नीकैँ जदुराई ।  
सूर स्याम कौँ नैँ कु नहीं डर, जनि तू रोवैँ जसुमति माई ।

जसुमति डेरति कुँवर कन्हैया ।

आगैँ देखि कहत बलरामहिँ, कहाँ रझौँ तुव भैया ।

मेरी भैया आवत अबहीं तोहिँ दिखाऊँ भैया ।  
धीरज करहु, मैं कुँ तुम देखहु, यह सुनि लेति बलैया ।  
पुनि यह कहति मोहिँ परमोद्यत, धरनि गिरी सुरसैयां ।  
सूर बिना सुत भई अति ब्याकुल, मेरी बाल नन्हैया ॥२८॥

अति कोमल तनु धरयो कन्हवाई ।

गए तहाँ जहँ काली खोवत, उरग-नारि देखत अकुलाई ।  
कह्यौ कौन कौ बालक है तू बार बार कही, भागि न जाई ।  
छनकहिँ मैं जरि भस्म होइगौ, जब देखे उठि जाग जगहवाई ।  
उरग-नारि की बानी सुनि कै, आयु हँसे मन मैं मुसुकाई ।  
मौकों कंस पढायौ देखन, तू याकौँ अब देहि जगाई ।  
कहा कंस दिखरावत इनकों एक फूँकही मैं जरि जाई ।  
पुनि-पुनि कहत सूर के प्रभु कौ, तू अब काहे न जाइ पराई ॥२९॥

भिरकि कै नारि, दे नारि गिरधारि तन, पूँछ पर लाल दे अहिँ  
—जगायौ ।

—उद्यौ अकुलाई, डर पाइ खग-राइ कौँ, देखि बालक गरब अति  
बढायौ ।

पूँछ खीन्दी झटकि धरिन सौँ गहिँ पटक फुँकरयो लटक करि  
मोघ फूले ।

पूँछ राखी चाँपि, रिसनि काली काँपि, देखि सब साँपि-अवसान  
भूले ।

करत फन-घात, विष जात उत्तरात अति, नीर जरि जात, नहिँ  
गान परसै ।

सूर के स्याम प्रभु, लोक अभिराम, बिनु जान अहिँराज बिष  
उदास जरसै ॥३०॥

—उरग लियौ हरि कौँ लपटाइ ।

गर्व-वचन कहि-कहिँ मुख भापत, मोकों नहिँ जानत अहिराइ ।  
लियौ लपेटि चरत तेँ सिस लौँ, अति इहिँ मोसौँ करत डिठाइ ।  
चाँपी पूँछ लुकावत अपनी, जुवतिनि कौँ नहिँ सकत दिखाइ ।  
प्रभु अंतरजामी सब जानत, अब डारौँ इहिँ सकुचि मिटाइ ।  
सूरदास प्रभु तन विस्तारयो, काली बिकल भयो तब जाइ ॥३१॥

जबहिँ स्याम तन, श्रुति बिस्तारथौ ।

पटपटात टूटत अँग जान्यौ, सरन-सरन सु पुकारथौ ।  
 यह बानी सुनतहिँ करुनामय, तुरत गए सकुचाइ ।  
 यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख, दीन्हौ बसन बढ़ाइ ।  
 यहै बचन गजराज सुनाथौ, गरुड़ छौँडि तहँ धाए ।  
 यहै बचन सुनि लाखा-गृह मैँ पाँडव जरत बचाए ।  
 यह बानी सहि जात न प्रभु सौँ, ऐसे परम कृपाल ।  
 सूरदास प्रभु श्रंग सकोरथौ, व्याकुल देख्यौ व्याल ॥३॥

नाथत व्याल विलंब न कीन्हौ ।

पग सौँ चाँपि घाँच बल मोरथौ, वाक फोरि गहि लीन्हौ ।  
 कूडि चढ़े ताके माथे पर, काली करत बिचार  
 स्रवननि सुनी रही यह बानी, प्रज ह्वै है अवतार  
 तेइ अवतरे आइ गोकुल मैँ, मैँ जानी यह बात  
 अस्तुति करन लग्यौ सहसौ मुख, धन्य-धन्य जग-तात  
 बार बार कहि सरन पुकारथौ, राखि-राखि गोपाल  
 सूरदास प्रभु प्रगट भए जब, देख्यौ व्याल बिहाल ।

आवत उरग नाथे स्याम ।

नंद, जसुदा, गोप गोपी, कहत हैं बलराम ।  
 मोर-मुकुट, विसाल लोचन, स्रवन कुंडल लोल ।  
 कटि पिलंबर, बेष नटवर, कृतत फन प्रति डोल ।  
 देव दिवि हुँदुभि बजावत, सुमन गन बरपाइ ।  
 सूर स्याम थिञ्चोकि ब्रज-जन, मातु, पितु सुख पाइ ॥३॥

गोपाल राइ निरलत फन-प्रति ऐसे ।

गिरि पर आए बादर देखत, मोर अनंदित जैसे ।  
 डोलत मुकुट सीस पर हरि के, कुंडल-मंडित गंड ।  
 पीत बसन, दामिन मनु घन पर, तापर सूर-कोदंड ।  
 उरग-नारि आगैँ सब ठाढ़ीँ, मुख-मुख अस्तुति गावैँ ।  
 सूर स्याम अपराध छमहु अब, हम माँगैँ पति पावैँ

गरुड़-त्रास तैँ जौ ह्यौँ आयौ ।

तौ प्रभु चरन-कमल फन-फन-प्रति अपनैँ सीस धरायो ।



धनि रिपि साप दियो खगपति कौं, ह्यौं तब रह्यो छपाइ ।  
 प्रभु-वाहन-डर भाजि श्चप्रौं अहि, नासर लेतौं खाइ ।  
 घट-सुनि कृपा करी नंद-नंदन चरन चिह्न प्रगटाए ।  
 सूरदास प्रभु अभय ताहि करि, उरग-द्वीप पहुँचाए ॥३६॥

सहस्र भक्त भरे कमल-चक्राए ।

अपनी समसरे और गोप जे, तिनकौं साथ-पठाए ।  
 और बहुत कौंचरि दधि-माखन-अहिरनि कौंधै जोरि ।  
 नृप कैं हाथ पत्र यह दोजौ, विनती कीजौ भोरि ।  
 मेरौ नाम नृपति सौं लीजौ, स्याम कमल लै आए ।  
 कोटि कमल आपुन नृप माँगै, तीनि कोटि हँ पाए ।  
 नृपति हमहिँ अपनौं करि जानौ तुम लायक हम नाहिँ ।  
 सूरदास कहियो नृप आगँ तुमहिँ कौं बि कहँ जाहिँ ! ॥३७॥

जब हरि सुरली अधर धरत ।  
 धिर चर, चर धिर, पवन थकित रहै, जमुना जल न बहत ॥  
 खग मोहै, मृग-जूथ भुलाही, निरखि मदन-झुबि छरत ।  
 पसु मोहै, सुरभी विथकित, नृग वननि टेकि रहत ॥  
 सुक सनकादि सकल सुनि मोहै, ध्यान न तनक गहत ।  
 सूरजदास भाग हँ तिनके, जे था सुखहिँ लहत ॥३८॥  
 (कहौं कहा) अंगानि की सुधि बिसरि गई ।

स्याम-अधर मृदु सुनत सुरलिका, चकित नारि भई ।  
 जो जैसे सो तैसे रहि गई, सुख-दुख कछौ न जाइ ।  
 लिखी चित्र-सी सूर सु हँ रहि, इकटक पल बिसराइ ॥३९॥

सुरली-धुनि खवन सुनत, भवन रहि न परै ।  
 ऐसी को चतुर नारि, धीरज मन धरै ॥  
 सुर नर मुनि सुनत सुधि नः सिव-समाधि टरै ।  
 अपनी गति तजत पवन, सरिता नहिँ हरै ॥  
 मोहन-सुख-भुरली, मन मोहिनि बस करै ।  
 सूरदास सुनत खवन सुधा-सिंधु भरै ॥४०॥

बाँसुरी बजाइ आछे, रंग सौं सुरारी ।  
 सुनि कै धुनि छूटि गई, संकर की तारी ॥

वेद पढ़न भूलि गए, ब्रह्मा ब्रह्मचारी ।  
 रसना गुन कहि न सकै, ऐसी सुधि बिसारी ।  
 इंद्र-सभा थकित भई, लगी जब करारी ।  
 रंभा कौ मान मिट्यौ, भूली नृत करारी ॥  
 जमुना जू थकित भई नही सुधि सँभारी ।  
 सूरदास मुरली है तीन - लोक - धारी ॥४१॥

मुरली तऊ गुपालहिँ भावति ।

सुनि रे सखी जदपि नँदलालहिँ, नाना भाँति नचावति ।  
 राखति एक पाइ ठाढ़ी करि, अति अधिकार जनावति ।  
 कोमल तन आज्ञा करवावति, कटि टेढ़ी हँ आवति ॥  
 अति आधीन सुजान कनौड़े, गिरिधर नार नचावति ।  
 आपुन पौँ दि अधर सज्जा पर, कर पल्लव पलुटावति ।  
 भृकुटी कुटिल नैन नासा-पुट, हम पर कोप करावति ।  
 मूर प्रसन्न जानि एकौ छिन, धर तैँ सोस डुलावति ॥४२॥

अधर-रस मुरली लूटन लागी ।

जा रस कौँ षट रितु तब कीन्हौ, सौ रस विथति सभागी ।  
 कहाँ रही, कहँ तैँ इह आई, कौनँ याहि बुलाई  
 चकित भई कहति ब्रजवासिनि, यह तौ भली न आई ।  
 सावधान क्योंँ होति नहीँ तुम, उपजी बुरी बलाइ  
 सूरदास प्रभु हम पर ताकौँ, कीन्हौ सौँति बजाइ ।

अबहीँ तैँ हम सबनि बिसारी ।

ऐसे बस्य भये हरि बाके, जाति न दसा विचारी ॥  
 कबहुँ कर पल्लव पर राखत, कबहुँ अधर लै धारी ।  
 कबहुँ लगाइ लेत हिरदै सौँ, नैँ कहुँ करत न न्यारी ॥  
 मुरली स्थाम किए बस अपनैँ, जे कहियत गिरिधारी ।  
 सूरदास प्रभु कैँ तन-मन-धन, बाँस बँसुरिया धारी ॥४३॥

मुरली की सरि कौन करै ।

नँद-नँदन त्रिभुवन-पति नागर सो जो बस्य करै ॥  
 जबहीं जब मन आवत तब तब अधरनि पान करै ।  
 रहत स्वाम आधीन सदाई आमसु तिनहिँ करै ॥

वृंटावन लीला

ऐसी भई मोहिनी माई मोहन मोह करै ।

सुनहु सूर थाके गुन ऐसें ऐसी करनि करै ॥४५॥

काहैं न मुरली सौं हरि जोरै ।

काहैं न अधरनि धरै जु पुनि-पुनि, मिली अचानक भोरै ॥

काहैं नही ताहि कर धारै, क्यौं नहि प्रीव नचावै ।

काहैं न तनु त्रिभंग करि राखै, ताके मनहि सुरावै ॥

काहैं न यो आधीन रहै ह्वै, वै अहीर वह वेनु ।

सूर स्याम कर तै नहि टारत, बग-वन चारत धेनु ॥४६॥

मुरलिया कपट चतुराई ठानी ।

कैसें मिलि गई नंद-नंदन कौं, उन नाहि न पहिचानी ॥

इक वह नारि, बचन मुख मीठे, सुनत स्याम लज्जचाने ।

जाति-पाँति की कौन चलावै, वाकै रंग भुलाने ॥

जाकौ मन मानत है जासौं, सो तहँई सुख मानै ।

सूर स्याम वाके गुन गावत, वह हरि के गुन गानै ॥४७॥

स्यामहिं दोष कहा कहि दीजै ।

कहा बात मुरली सौं कहियै, सब अपनेहिं सिर लीजै ॥

हमहीं कहति बजावहु मोहन, यह नाहीं तब जानी ।

हम जानो यह बाँस बँसुरिया, को जानै पटरानी ॥

वारे तै सुँह लागत-लागत, अब ह्वै गई सयाली ।

सुनहु सूर हम भोरी-भारी, याकी अकथ कहानी ॥४८॥

मुरली कहै सु स्याम करै री ।

चाही कैं बस भाइ रहत है, वाकै रंग डरै री ॥

घर-वन, रैन-दिना संग डोलत कर तै करत न न्यारी ।

आई बन बलाह यह हमकै, कहा दीजियै गारी ॥

अब लौं रहे हमारे भाई, इहिं अपने अब कीन्हे ।

सूर स्याम नारार यह नागरि, दुहुँनि भलै कर चीन्हे ॥४९॥

मेरे दुख कौ और नहीं ।

षट रितु सीत उष्ण वरषा मै, ठाड़े पाइ रही ॥

कसकी नहीं नैकुहूँ काटत, घामै राखी डारि ।

अग्नि-सुलाक देव नहिं मुरकी, बेह वनावत जारि ॥

तुम जानति भो, हेँ बाँस बँसुरिया अगिनि छाप दे आई ।  
सूर स्याम ऐं देँ तुम लेहु न, खिभति कहा हौ माई ॥२०

नम करिहौ जब मेरी सी ।

तब तुम अघर सुधा-रस बिलसहु, मैं हूँ रहिहैं चेरी सी ॥  
बिना कष्ट यह फल न पाइहौ, जानति हौ अदडेरी सी ।  
पटरित्तु सीत तपनि तन गारौ, बाँस बँसुरिया केरी सी ॥  
कहा मौन हूँ हूँ तु रही हौ, कहा करति अवसेरी सी ।  
सुनहु सूर मैं न्यारी हूँ हौँ, जब देखौँ तुम मेरी सी ॥२१

सुरली स्याम बजावन दै री ।

खवननि सुधा पियति काहैँ नाँदँ, इहिँ तू जदि बरजै री ॥  
सुनति नहींँ वह कहति कहा हैँ, राधा राधा नाम ।  
तू जानति हरि भूल गए मोहिँ, तुम एकै पति बाम ॥  
वाड़ी कैँ सुख नाम धरावन, हमहिँ मिलावत ताहि ।  
सूर स्याम हमकौँ नहिँँ बिसरे, तुम डरपति हौँ काहि ॥२२

सुरलिया मोकौँ लागति प्यारी ।

मिलि अचानक आई कहुँ तैँ, ऐसी रही कहौँ री ॥  
धनि याके पितु-मातु, धन्य यह, धन्य-धन्य सृदु बोलनि ।  
धन स्याम गुन गुनि केँ ल्याए, नागारि चतुर अमोलनि ॥  
यह निरमोल मोल नहिँँ याकौँ, भली न यातँँ कोई ।  
सूरदास याके पदतर कौँ, तौँ दीजै जाँ होई ॥२३

कमरी

धनि धनि यह कामरी मोहन स्याम की ।

यहैँ ओड़ि जात बन, यहैँ संज कौँ बसन, यहैँ निवारिनि मोह-  
बूँद छौँद घाम की ।  
याहीँ ओट सहज सीसिर-सीत, याहीँँ गहने हरत, लैँ धरत  
ओट कोटि बास की ।  
यहैँ जाति-पौँति, परिपाटी यह सिखवत, सूरज प्रभु के यह  
सब बिसराम की ॥२४

यह कमरी कमरी करि जानति ।

जाकेँ जितनी बुद्धि हृदय मैँ, सो तितनौँ अनुमानति ॥

या कमरी के एक रोम पर, वारों चीर पटंबर ।  
 सो कमरी तुम निंदति गोपी, जो तिहुँ लोक अडंबर ॥  
 कमरी कै बल असुर सँडारे, कमरिहिँ तै सब भोग ।  
 जाति-पाँति कमरी सब मेरी, सूर सबै यह जोग ॥२५॥

न

भवन रवन सबही बिसरायौ ।

नंद नंदन जब तै मन हरि लियौ, बिरथा जनम राँधायौ ॥  
 जप, तप, व्रत, संजम, साधन तै, इवित होत पापान ।  
 जैसेँ मिलै स्याम सुंदर वर, सोइ कीजै, नहिँ ध्यान ॥  
 यहै मंत्र दृढ़ कियो सबनि मिलि, यातै होइ सुहोइ ।  
 वृथा जनम जग मै जिनि खोवहु, ह्यौ अपतौ नहिँ कोइ ॥  
 तब प्रतीत सबहिनि कै आइ, कीन्हौ दृढ़ विस्वास ।  
 सूर स्यामसुंदर पति पावै, यहै हसारी आस ॥२६॥

जमुना तट देखे नंद नंदन ।

भोर-मुकुट भकराकृत-कुंडल, पीत-बसन तन चंदन ॥  
 लोचन दृप्त भए दरसन तै, उर की तपति बुझानी ।  
 प्रेम-मगन तब भई सुंदरी, उर गदगद, मुख वानी ॥  
 कमल-नयन तट पर हैं ठाढ़े, सङ्गुचरिँ मिलि ब्रज-नारी ।  
 सूरदास-प्रभु अंतरजासी, व्रत-पूरन पगधारी ॥२७॥

बनत नहीं जमुना को गेबौ ।

सुंदर स्याम घाट पर ठाढ़े, कहीं कौन विधि जैबौ ॥  
 कैसेँ बसन उतारि धरै हम, कैसेँ जलहिँ समैबौ ।  
 नंद-नंदन हमको देखेंगे, कैसेँ करि जु अन्हैबौ ॥  
 चोली, चीर, हार लै भाजत, सो कैसेँ करि पैबौ ।  
 अंकम भरि-भरि खेत सूर प्रभु कारिह न इहिँ पथ ऐबौ ॥२८॥

नीकै तप कियो तनु गारे ।

आपु देखत कदम पर चढ़ि, मानि लियौ मुरारि ॥  
 वर्ष भर व्रत-नेम-संजम, छम कियो मोहिँ काज ।  
 कैसेँ हूँ मोहिँ भजै कोऊ, मोहिँ बिरद की लाज ॥  
 धन्य व्रत इन कियो पूरन, सीत तपति निवारि ।  
 काम-आतुर भजीँ मोकौँ, नव तरुनि ब्रज-नारि ॥

कृपा-नाथ कृपाल भए तब, जानि जन की पीर ।  
सूर-प्रभु अनुमान कीन्हौ, हरैँ इनके चीर ॥५६॥

बसन हरे सब कदम चढ़ाए ।

सोरह सहस गोप-कन्यनि के, अंग-अभूषन सहित चुराए ॥  
नीलांबर, पाटबंर, सारी, सेत पीत चुनरी, अरुनाए ।  
अति विस्तार नीप तरु तामैँ, लै-लै जहाँ-तहाँ लटकाए ॥  
मनि-आभरन डार डारनि प्रति, देखत छबि मनहीं अँटकाए ।  
सूर, स्याम जु तिति व्रत पूरन, कौ फल डारनि कदम फराए ॥

हमारे अंबर देहु सुरारी ।

लै सब चीर कदम चढ़ि बैठे, हम जल-मौम उधारी ॥  
तट पर बिना बसन क्यों आवैँ, लाज लगति है भारी ।  
चोली हार तुमहिँ कौँ दीन्हौँ, चीर हमहिँ छौ डारी ॥  
तुम यह बात अचंभौ भाषत, नाँगी आवहु नारी ।  
सूर स्याम कछु छोह करौ जू, सीत गई तनु मारी ॥६५॥

लाज ओट यह दूरि करौ ।

जोइ मैँ कहौँ करौ तुम सोई, सकुच बापुरिहिँ कहा करौ ॥  
जल तैँ तीर आइ कर जोरहु, मैँ देखौँ तुम बिनय करौ ।  
पूरन व्रत अब भयौ तुम्हारौ, गुरुजन संका दूरि करौ ॥  
अब अंतर मोसौँ जनि राखहु, बार-बार हठ बृथा करौ ।  
सूर स्याम कहैँ चीर देत हैं, मो आगैँ सिँगार करौ ॥६॥

व्रत पूरन कियौ नंद-कुमार । जुवतिनि के मटे जंजार  
जप तप करि तनु अब जनि गारौ । तुम घरनी मैँ कंत तुम्हारौ  
अंतर सोच दूरि करि डारौ । मेरौ कह्यौ सत्य उर धारौ  
सरद-रास तुम आस पुराऊँ । अंकम भरि सबकैँ उर लाऊँ  
यह सुनि सब मन हरष बढ़ायौ । मन-मन कन्हौ कृष्ण पति पायौ  
जाहु सबै घर वोष-कुमारी । सरद-रास वैहौँ सुख भारी  
सूर स्याम प्रगटे गिरिधारी । आनंद सहित गईँ घर नारी

गोवर्द्धनधारणा

बाजति नंद-अवास बधाई ।

बैठे खेलत द्वार आपनैँ, सात बरस के कुँवर कन्हई ॥

## वृंदावन लीला

बैठे नंद सहित वृषभानुहिँ, और गोप बैठे सब आई ।  
 थापैँ देत वरिन के द्वारैँ, गावतिँ मंगल नारि बधाई ॥  
 पूजा करत इंद्र की जानी, आए स्याम तहाँ अतुराई ।  
 बार बार हरि ब्रूक्त नंदहिँ, कौन देव की करत पुजाई ॥  
 इंद्र बड़े कुल-देव हमारे, उनतैँ सब यह होति बड़ाई ।  
 सूर स्याम तुम्हरे हित कारण, यह पूजा हम करत सदाई ॥६४॥

मेरौ कह्यौ सत्य करि जानौ ।

जौ चाहौ ब्रज की कुसलाई, तौ रोबर्धन मानौ ॥  
 दूध दही तुम कितनौ लैहौ, गोसुत बढ़ैँ अनेक ।  
 कहा पूजि सुरपति सैँ पायौ, छाँड़ि देहु यह टेक ॥  
 मुँह माँगे फल जौ तुम पावहु, तौ तुम मानहु मोहिँ ।  
 सूरदास प्रभु कहत ग्वाल सौँ, सत्य बचन करि दोहि ॥६५॥

—विप्र बुलाइ लिए नंदराइ ।

प्रथमारंभ जज्ञ कौ कीन्हौ, उठे बेद-धुनि राइ ॥  
 गोबर्धन सिर तिलक चढ़ायौ, मेदि इंद्र ठकुराइ ।  
 अन्नकूट एंसौ रचि राख्यौ, गिरि की उपमा पाइ ॥  
 भौँति-भौँति व्यंजन परसाए कापैँ वरन्यौ जाइ ।  
 सूर स्याम सौँ कहत ग्वाल, गिरि जेवहिँ कहौ बुझाइ ॥६६॥

गिरिवर स्याम की अनुहारि ।

करत भोजन अधिक रुचि यह, सहस भुजा पसारि ॥  
 नंद कौ कर गहे ठाढ़े, यहै गिरि कौ रूप ।  
 सखी ललिता राधिका सौँ कहति देखि स्वरूप ॥  
 यहै कुंडल, यहै माला, यहै पीत पिछौरि ।  
 सिखर सोभा स्याम की छवि, स्याम-छवि गिरि जोरि ॥  
 नारि बदरौला रही, वृषभानु-घर रत्नवारि ।  
 तहाँ तैँ उहिँ भोग अरप्यौ, लियौ भुजा पसारि ॥  
 राधिका-छवि देखि भूली, स्याम निरखैँ ताहि ।  
 सूर प्रभु-बस भई प्यारी, कोर-लोचन चाहि ॥६७॥

ब्रज वासिनि मोकौँ विसरायौ ।

जी करी बलि मेरी जो कछु, सो सब लै परबतहिँ चढ़ायौ ॥

मोसौँ गर्व कियो लडु प्रानी, ना जानिये कहा मन आयौ ।  
 तैँतिस कोटि सुरनि कौ नायक, जानि बूझि इन मोहिँ भुलायौ ॥  
 अब गोपनि भूतल नहिँ राखौँ, मेरी बलि ओहिँ नहिँ पहुँचायौ ।  
 सुनहु सूर मेरेँ भारत धौँ, परबत कैसेँ होत सहायौ ॥६८॥

गिरि पर बरपन लागे बादर ।

भेववर्त, जलवर्त, सैद सजि, आय लै लै आदर ॥  
 सललि अखंड धार धर दूदत, किये इंद्र मन सादर ।  
 मेघ परस्पर यहै कहत हैं, धोइ करहु गिरि खादर ॥  
 देखि देखि डरपत नजवासी, अतिहिँ भए मन कादर ।  
 यहै कहत ब्रज कौन उचारै, सुरपति कियेँ निरादर ॥  
 सूर स्याम देखेँ गिरि अपनेँ, मेवनि कीन्हौँ दादर ।  
 देव आपनौँ नहीँ संहारत, करत इंद्र सौँ ठादर ॥६९॥

ब्रज के लोग फिरत बितनाने ।

गैयनि लै बन ग्वाल राए, तैँ धाए आयत ब्रजहिँ पराने ॥  
 कोउ चितवत नभ-तन चक्रित ह्वै, कोउ गिरि परत धरनि अकुलाने ।  
 कोउ लै रहत ओट बृच्छनि की, अंध-धुंध दिसि-बिदिसि भुलाने ॥  
 कोउ पहुँचे जैसैँ तैसैँ गृह, कोउ डूँदत गृह नहिँ पहिचाने ।  
 सूरदास गोबर्धन-पूजा कीन्हे कौ फल लेहु विधाने ॥७०॥

राखि लेहु अब नंदकिसोर ।

तुम जो इंद्र की मेटी पूजा, बरसत है अति जोर ॥  
 ब्रजवासी तुम तन चितवत हैं, ज्यौँ करि चंद्र चकोर ।  
 जनि जिय डरौ, नैन जनि मूँदौ, धरिहौँ नख की कोर ॥  
 करि अभिमान इंद्र भारि लायौ, करत घटा घन घोर ।  
 सूर स्याम कहुँ तुम कौँ राखौँ बूँद न आवै छोर ॥७१॥

स्याम लियौ गिरिराज उठाइ ।

धीर धरौ हरि कहत सबनि सौँ, गिरि गोबर्धन करत सहाइ ।  
 नंद गोप ग्वालनि के आगौँ, देव कहुँ यह प्रगट सुनाइ  
 काहे कैँ व्याकुल भएँ डोलत, रच्छा करै देवता आइ  
 सत्य बचन गिरि-देव कहत हैं, कान्ह लेहि मोहिँ कर उचकाइ  
 सूरदास नारी-नर ब्रज के, कहत धन्य तुम कुँवर कन्हाइ ॥



गिरि जनि गिरै स्याम के कर तैं ।

करत बिचार सबै ब्रजवासी, भय उपजत अति उर तैं ॥  
 लै लै लकुट ग्वाल सब धापु, करत सहाय जु तुरतैं ॥  
 यह अति प्रबल, स्याम अति कोमल, रबकि-रबकि हरबर तैं ॥  
 सप्त दिवस कर पर गिरि धार्यौ, बरसि थव्यौ अंबर तैं ॥  
 गोपी ग्वाल नंद-सुत राख्यौ, मेघ-धार जलधर तैं ॥  
 जमलार्जुन दोउ सुत कुबेर के, तेउ उखारे जर तैं ॥  
 सूरदास प्रभु इंद्र-गर्भ हरि, ब्रज राख्यौ करबर तैं ॥७३॥

मेघनि जाइ कही पुकारि ।

दीन ह्वै सुरराज आगौ, अस्त्र दीन्हे डारि ॥  
 सात दिन भरि बरसि ब्रज पर, गई नैकुं न आरि ॥  
 अखंड धारा सखिल निभर्यौ, मिटी नाहिं लगारि ॥  
 धरनि नैकुं न बूद पहुँची, हरषे ब्रज-नर-नारि ।  
 सूर घन सब इंद्र आगौ, करत यहै गुहारि ॥७४॥

घरिन घरनि ब्रज होति बधाई ।

सात बरष कौ कुँवर कन्हैया, गिरिवर धरि जीस्यौ सुरराई ॥  
 गर्भ सहित आयौ ब्रज बोरन, वह कहि मेरी भक्ति घटाई ॥  
 सात दिवस जल बरषि सिरान्यौ, तब आयौ पाइनि तर धाई ॥  
 कहौ कहाँ नहिं संकट मेटत, नर-नारी सब करत बड़ाई ॥  
 सूर स्याम अब कै ब्रज राख्यौ, ग्वाल करन सब नंद दोहाई ॥७५॥

( तैरै ) भुजनि बहुत बल होइ कन्हैया ।

बार-बार भुज देखि तनक से, कहति जसोदा मैया ॥  
 स्याम कहत नहिं भुजा पिरानी, ग्वालनि कियौ सहैया ।  
 लकुटिनि टेकि सबनि मिलि राख्यौ, अरु बाबा नंदरैया ॥  
 मोसौं क्यौ रहतौ गोबरधन, अतिहिं बड़ी वह भारी ।  
 सूर स्याम यह कहि परबोध्यौ चकित देखि महतारी ॥७६॥

मातु पिता इनके नहिं कोइ ।

आपुहिं करता, आपुहिं हरता, त्रिगुन रहित हैं सोइ ॥  
 कितिक बार अवतार लियौ ब्रज, यं हैं ऐसे ओइ ।  
 जल-थल, कीट-ब्रह्म के व्यापक, और न इन सरि होइ ॥

बसुवा-भार-उतारन-काजैँ, आपु रहत तनु गोइ । ✓

सूर स्याम मात-हित-कारन, भोजन सांगत रोइ ॥७७॥

— सुरगान सहित इंद्र ब्रज आवत ।

धवल वरन पुरावत देख्यौ उतरि गगन तैँ धरनि धँसावत ॥

अमरा-सिब-रवि-सस्ति चनुरानन, हय-गय बसह हंस-मृग-जावत ।

धर्मराज, बनराज, अनल दिन, सारद, नारद सिब-सुत भावत ॥

मैदा, महिष, मगर, गुदरारौ, मोर, आखु मनचाहन, गावत ।

ब्रज के लोग देखि डरप मन, हरि आगैँ कहि कहि जु सुनावत ॥

सात दिवस जल बरपि सिरान्यौ, आवत चलयौ ब्रजहिँ अनुरावत ॥

धेरौ करत जहाँ तहँ ठाढ़े, ब्रजबासिनि कौँ नाहिँ बचावत ।

दूरहिँ तैँ बाहन सौँ उतर्यौ, देवनि सहित चलयौ गिर नावत ।

आइ पर्यौ चग्नि तर आगुर, सूरदास-प्रभु सीस उठावत ॥

गाम लीला

✓ जबहिँ बन सुरली सवन परी ।

चक्रित भईँ गोप-कन्या सब, काम-धाम बिसरीँ ॥

कुल भर्जाद बंद की आज्ञा नैँ कुहुँ नहीं डरी ।

स्याम-सिधु, सुरिता-ललना-गन, जल की ढरनि ढरी ॥

अंग-मरदन करिबे कौँ लागीँ, उबटन तेल धरी ।

जो जिहिँ भाँति चली सो तैसेँ हिँ, निसि बन कौँ जु खरी ।

सुत-पति-नेह, भवन-जन-संका, लजा नाहिँ करी ।

सूरदास-प्रभु मन हरि लीन्हौ, नागर नवल हरी ॥७८॥

चली बन बेनु सुनत जब धाइ ।

मातु पिता-बांधव अति त्रासत, जाति कहाँ अकुलाइ ॥

सकुच नहीं, संका कछु नाहीं, रैनि कहाँ तुम जाति ।

जननी कहति दई की घाली, काहे कौँ इतराति ॥

मानति नहीं और रिस पावति, निकसी नातौ तोरि ।

जैसेँ जल-प्रवाह भादौँ कौँ, सो को सकै बहोरि ॥

ज्यौँ केँ चुरी भुअंगम त्यागत, मात पिता यौँ त्यागे ।

सूर स्याम कैँ हाथ बिकानी, अलि अंबुज अनुरागे ॥८०॥

मातु-पिता तुम्हरे धौँ नाहीं ॥

बारंबार कमल-दल-छोचन यह कहि-कहि पक्षिताहीँ ॥

## वृ दावन लीला

उनकैँ लाज नहीं, बन तुमकौँ आवन दीन्ही राति ।  
सब सुंदरी, सबे नवजोवन, निदुर अहिर की जानि ॥  
की तुम कहि आई, की ऐसेहिँ कीन्ही कैसी रीति ।  
सूर तुमहिँ यह नहीं बूमियै, करी बड़ी विपरीति ॥८८॥

—इहिँ विधि बेद-आराग सुनौ ।

कपट तजि पति करौ पूजा, कहा तुम जिय गुनौ ॥  
कंत मानहु अब तरौगी, और नाहिँ उपाइ ।  
ताहि तजि क्यों बिपिन आई, कहा पायौ आइ ॥  
बिरध अरु बिन भागहुँ कौ, पतित जौ पति होइ ।  
जऊ मूरख होइ रोगी, तजै नाहीँ जोइ ॥  
ग्रहै मैँ पुनि कहत तुम सौँ, जगत मैँ यह सार ।  
सूर पति-सेवा बिना क्यों, तरौगी संसार ॥८९॥

✓ तुम पावत हम घोष न जाहिँ ।

कहा जाइ लैँ हैँ हम ब्रज, यह दरसन त्रिभुवन नाहिँ ॥  
तुमहुँ तैँ ब्रज हितू न कोऊ, कोटि कहौ नाहिँ मानैँ ।  
काके पिता, मातु हैँ काकी, काहुँ हम नाहिँ मानैँ ॥  
काके पति, सुत-सोह कौन कौ, ग्रही कहा पठावत ।  
कैसौ धर्म, पाप हैँ कैसौ, आस निरास करावत ॥  
हम जानैँ केवल तुमहीँ कौँ, और वृथा संसार ।  
सूर स्याम निहुराई तजियै, तजियै बचन विकार ॥९०॥

कहत स्याम श्रीमुख यह बानी ।

धन्य-धन्य दृढ़ नेम तुम्हारौ, बिनु दामनि मो हाथ बिकानी ॥  
निरदय बचन कपट के भाखे तुम अपनैँ जिय वैँकु न आनी ॥  
भजीँ निसंक आइ तुम मोकौँ गुरुजन की संका नहिँ मानी ।  
सिंह रहै जंबुक सरनागत, देखी सुनी न अकथ कहानी ।  
सूर स्याम अंकम भरि लीन्हीँ, विरह अग्नि-भर तुरत बुझानी ।

कियौ जिहिँ काज तप घोष-नारी ।

ल हौँ तुरत लेहु तुम अब घरी, हरष चित करहु दुख वेहु डारी  
स रचौँ, मिलि संग बिलसौ, सबै बख हरि कहि जो निगम बान  
मुख मुख निरखि, बचन अमृत बरषि, कृपा-रस भरे सारंग पान

व्रज-जुवति चहुँ पास, मध्य सुंदर स्याम, राधिका बाम, अति छवि बिर  
सूर नव-जलद-तनु, सुभन स्यामल कांति, इंदु-बहु-पाँति-बिच अधिक छा

भानौ माई घन घन अंतर दामिनि ।  
घन दामिनि दामिनि घन अंतर, सोभित हरि-व्रज भामिनि ।  
जमुन पुलिन मल्लिका मनोहर, सरद-सुहाई-जामिनि  
सुंदर ससि गुन, रूप-राग-निधि, अंग-अंग अभिरामिनि ।  
रच्यौ रास मिलि रसिक राइ सौँ, मुदित भई गुन प्रामिनि  
रूप-निधान स्याम सुंदर तनु, आनंद मन बिद्यामिनि ।  
खंजन-मोन-मयूर-हंस-पिक भाइ-भेद राज-भामिनि  
को गति गनै सूर मोहन संग, काम विमोह्यौ कामिनि ॥

गरब भयौ ब्रजनारि कौँ, तबहीँ हरि जाना ।  
राधा प्यारी संग लिये, भए अंतर्धाना ॥  
गोपिनि हरि देख्यौ नहीं, तब सब अकुलाई ।  
चकित होइ पूछन लग्यौ, कहँ गए कन्हवाई ।  
कोउ मर्म जानै नहीं, ब्याकुल सब बाला ।  
सूर स्याम हूँ इति फिरैँ, जित-जित ब्रज-बाला ॥८७॥

तुम कहूँ देखे स्याम बिसासी ।

तनक बजाइ बाँस की मुरली, लै गए प्रान निकासी ॥  
कबहुँक आगैँ, कबहुँक पाछैँ, पग-पग भरति उसासी ।  
सूर स्याम-दरसन के कारन, निकसीँ चंद-कला सी ॥८८॥  
कहि धौँ री बन बेलि कहूँ तैँ देखे हैँ नंद-नंदन ।  
बृभहु धौँ मालती कहूँ तैँ पाए हैँ तन-चंदन ॥  
कहिँ धौँ कुंद, कदंब बकुल, बट, चंपक, ताल, तमाल ।  
कहि धौँ कमल कहाँ कमलापति, सुंदर नैन बिसाल ॥  
कहि धौँ री कुमुदिनि, कदली कछु, कहि बदरी कर बीर ।  
कहि तुलसी तुम सब जानति हौ, कहँ वनस्याम सररीर ॥  
कहि धौँ भृगी मया करि हमसौँ, कहि धौँ मधुप मंराल ।  
सूरदास-प्रभु के तुम संगी, हैँ कहँ परम कृपाल ॥८९॥  
स्याम सबनि कौँ देखहीँ, वै देखति नाहीँ ।  
जहाँ तहाँ ब्याकुल फिरैँ, धीर न तनु माही ॥

## शृ दावन लीला

कोउ बंसीबट कौँ चलीँ, कोउ बन घन जाहीँ ।  
 देखि भूमि वह रास की, जहँ-तहँ पग-छाहीँ ॥  
 सदा हठीली लाडिली, कहि-कहि पछिताहीँ ।  
 नैन सजल जल ढारहीँ ब्याकुल मन माहीँ ॥  
 एक-एक ह्वै हूँ दहीँ, तरुनी बिकलाहीँ ।  
 सूरज-प्रभु कहूँ नहिँ मिले, हूँ दृति द्रुम पाहीँ ॥१०॥

✓ तब नागरि जिय गर्ब बढ़ायौ ।

मो समान तिय और नहीँ कोउ, गिरिधर मैँ हीँ बस करि पायौ ॥  
 जोड़-जोड़ कहति करत पिय सोइ सोई मेरैँ हीँ हित रास उपायौ ।  
 सुंदर, चतुर और नहिँ मोसी, देह धरे कौँ भाव जनायौ ॥  
 कबहुँक बैठि जाति हरि-कर धरि, कबहुँ कहति मैँ अति स्रम पायौ ।  
 सूर स्याम गहि कंठ रही तिय, कंध चढ़ौँ यह बचन सुनायौ ॥११॥

कहै भामिनी कंत सौँ, मोहिँ कंध चढ़ावहु ।

नृत्य करत अति स्रम भयो, ना स्रमहिँ सिटावहु ॥  
 धरनी धरत बनै नहीँ, पग अतिहिँ पिराने ।  
 तिया-बचन सुनि गर्ब के पिय मन मुसुकाने ॥  
 मैँ अविगत, अज, अकल हौँ, यह मरम न पायौ ।  
 भाव बस्य सब पैँ रहौँ, निगमनि यह गायौ ॥  
 एक प्राण द्वै देह हैँ, द्विविधा नहिँ यामैँ ।  
 गर्ब कियौ नरदेह तैँ, मैँ रहौँ न तामैँ ॥  
 सूरज-प्रभु अंतर भए, संग तैँ तजि प्यारी ।  
 जहँ की तहँ ठाढ़ी रही, वह घोष-कुमारी ॥१२॥

जौ देखैँ द्रुम के तरैँ, सुरभी सुकुमारी ।  
 चकित भईँ सब सुंदरी, यह तौ राधा री ॥  
 थाही कौँ खोजति सबै, यह रही कहाँ री ।  
 धाइ परीँ सब सुंदरी, जो जहाँ-तहाँ री ।  
 तन की तनकहुँ सुधि नहीँ, ब्याकुल भईँ बाला ।  
 यह तौ अति वेहाल है, कहँ गए गोपाला ।  
 बार-बार ब्रूमतिँ सबै, नहिँ बोलति बानी ॥  
 सूर स्याम काहँ तजि, कहि सब पछितानी ॥१३॥

केहिँ मारग मैँ जाउँ सखी री, मारग मोहिँ विसर्यौ ।  
 ना जानैँ कित ह्यै गए मोहन, जात न जानि पर्यौ ॥  
 अपनी पिय हूँ इति फिरौँ, मोहिँ मिलिबे कौ चाव ।  
 काँटो लाग्यौ प्रेम कौ, पिय यह पायौ दाव ॥  
 वन डोंगर हूँ इत फिरी, घर-मारग लजि गाउँ ।  
 बूमैँद्रुम, प्रति बलि कोउ, कहै न पिय कौ गाउँ ॥  
 चकित भई, चितवत फिरी, व्याकुल अतिहिँ अनाथ ।  
 अब कैँ जाँ कैसहुँ मिलौँ, पलक न त्यागौँ साथ ॥  
 हृदय माँझ पिय-घर करौँ, नैननि बैठक देउँ ।  
 सूरदास प्रभु . संग मिलौँ, चहुरि रास-रस लेउँ ॥

कृपा सिंधु हरि कृपा करौ हो ।

अनजानैँ मन गर्व बढ़ायौ, सो जिनि हृदय धरौ हो ॥  
 सोरह सहस पीर तनु एकै, राधा जिव, सब देह ।  
 ऐसी दसा देखि कहनामय, प्रगटौ हृदय-सनेह ॥  
 गर्व-हृत्यौ तनु, विरह प्रकास्यौ, प्यारी व्याकुल जानि ।  
 सुनहुँ सूर अब दरसन दीजै, चूक लई इति मानि ॥६

✓ अंतर तैँ हरि प्रगट भए ।

रहत प्रेम के बस्य कन्हारै, जुवतिनि कौँ मिलि हर्ष दए ॥  
 वैसोइ सुख सबकौ फिरि दीन्हैँ, वहैँ भाव सब मानि लियौ ।  
 वै जानति हरि संग तबहिँ तैँ, वहैँ बुद्धि सब, वहैँ हियौ ॥  
 वहैँ रास मंडल-रस जानतिँ, विच गोपी, विच स्याम धनी ।  
 सूर स्याम स्याना मधि नाथक, वहैँ परस्पर प्रीति बनी ॥

✓ आजु हरि अद्भुत रास उपायौ ।

एकदिँ सूर सब मोहित कीन्हें, सुरली नाद सुनायौ ॥  
 अचल चले, चल थकित भए, सब मुनिजन ध्यान मुलायौ ।  
 अचल पत्रन थक्यौ नहिँ डोलत, जमुना उलटि बहायौ ॥  
 थकित भयौ चंद्रमा सहित-मृग, सुधा-समुद्र बढ़ायौ ।  
 सूर स्याम गोपिनि सुखदायक, लायक दरस दिखायौ ॥६

बनावत रास-मंडल प्यारौ ।

। मुकुट की लटक, झलक कुंडल की, निरतत नंद दुलारौ ॥

## वृंदावन लीला

उर बनमाला सोह सुंदर बर, गोपिनि कैं संग गावै ।  
 खेत उपज नागर नागारि संग, बिच-बिच तान सुनावै ॥  
 बंसीबट तट रास रच्यौ है, सब गोपिनि सुखकारौ ।  
 सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन सौँ, भक्तनि प्रान अघारौ ॥१८॥

✓ रास रस खमित भई ब्रजबाल ।

निसि सुख दै जमुना-तट लै गए, भोर भयाँ तिहिँ काल ॥  
 मनकामना भई परिपूरन. रही न एकी साध ।  
 पोडस सहस नारि संग मोहन, कीन्हौ सुख अत्रगाधि ॥  
 जमुना-जल बिहरत नंद-नंदन, संग मिली सुकुमारि ।  
 सूर धन्य धरनी वृन्दावन, रवि तनया सुखकारि ॥१९॥

ललकत स्याम मन ललचात ।

कहत है घर जाहु सुंदरि, मुख न आवति बात ॥  
 षट सहस दस गोप कन्या, रैनि भोगी रास ।  
 एक छिन भई कोउ न न्यारी, सबनि पूजी आस ॥  
 बिहँसि सब घर-घर पठाई ब्रज गाई ब्रज-बाल ।  
 सूर-प्रभु नंद-धाम पहुँचे, लख्यौ काहु न ख्याल ॥२०॥

ब्रजवासी सब सोवन पाए ।

नंद सुवन मति ऐसी ठानी, उनि घर लोग जगाए ॥  
 डठे प्रात-गाथा सुख भाषत, आतुर रैनि बिहानी ।  
 एँडत अंग जम्हात बदन भरि, कहत सबै यह बानी ॥  
 जो जैसे सो तैसे लागे, अपने-अपने काज ।  
 सूर स्याम के चरित अगोचर, राखी कुल की लाज ॥२१॥

✓ ब्रज-जुवती रस-रास परी ।

कियौ स्याम सब कौ मन भायौ निसि रति-रंग जगी ॥  
 पुरत ब्रह्म, अकल, अविनाशी, सबनि संग सुख चीन्हौ ।  
 जितनी नारि भेष भए तितने, भेद न काहू कीन्हौ ॥  
 वह सुख दरत न काहूँ मन तै, पति हित-साध पुराई ।  
 सूर स्याम दूलह सब दुलहिनि, निसि भँवरि दै आई ॥२२॥

रस रस लीला गाइ सुनाऊँ ।

यह जस कहै सुनै सुख जवननि तिहि चरननि सिर नाऊँ ॥

कहा कहैं वक्ता खोता फल, इक रसना क्यों गाऊँ ।  
 अष्ट सिद्धि नवनिधि सुख-संपति, लघुता कर दरसाऊँ ॥  
 जो परतीति होइ हिरदै मैँ, जग-माया धिक देखै ।  
 हरि जन दरस हरिहिँ सम बूझे अंतर कपट न लेखै ॥  
 धनि वक्ता, तेई धनि खोता, स्वाम निकट हैँ ताकैँ ।  
 सूर धन्य तिहि के पितु माता, भाव भगति हैँ जाकैँ ॥

पनघट लीला

पनघट रोके रहत कन्हारै ।

जमुना-जल कोउ भरन न पावै, देखत हीँ फिर जाई ॥  
 तबहिँ स्याम इक बुद्धि उपाई, आपुन रहे छपाई ।  
 तट ठाढ़े जे सखा संग के, तिनकौँ लियौ बुलाई ॥  
 बैठारथौ ग्वालिनि कौँ द्रुम-तर, आपुन फिरि-फिरि देखत ।  
 बड़ी वार भई कोउ न आई, सूर स्याम मन लेखत ॥११

जुवति इक आवति देखी स्याम ।

द्रुम कैँ ओट रहे हरि आपुन, जमुमा तट गई वाम ॥  
 जल हलोरि नागरि भरि नागरि, जबहौँ सीस उठायौ ।  
 घर कौँ चली जाइ ता पाछैँ, सिर तैँ घट ढरकायौ ॥  
 चतुर ग्वालि कर गह्यौ स्याम कौ कनक लकुटिया पाई ।  
 औरनि सौँ करि रहे अचगरी, मोसौँ लगात कन्हारै ॥  
 नागरि लै हँसि देत ग्वारि-कर, रीतौ घट नहिँ लैहौँ ।  
 सूर स्याम ह्यौँ आनि देहु भरि तबहि लकुट कर दैहौँ ॥१२

घट भरि दियौ स्याम उठाइ ।

नैँ कु तन की सुधि न ताकौँ, चली ब्रज-समुहाइ ॥  
 स्याम सुंदर नैन-भीतर, रहे आनि समाइ ।  
 जहाँ-जहाँ भरि दृष्टि देखै, तहाँ-तहाँ कन्हारै ॥  
 उतहिँ तैँ इक सखी आई, कहति कहा भुलाइ ।  
 सूर अबहीं हँसत आई, चली कहा गवाँइ ॥१०

नीकैँ देहु न मेरी गिँडुरी ।

लै जैहँ धरि जसुमति आगैँ, आवहु री सब मिलि इक कुँड  
 काहूँ नहीं डरात कन्हारै, बाट-घाट तुम करत अचग  
 जमुना-वह गिँडुरी फटकरी, फोरी सब मटुकी अरु गर



## धुंदावन लीला

भली करी यह कुँवर कन्हाइ, आजु मोटेहै तुम्हरी लँगरी ।  
 चली सूर जसुमति के आगै, उरहन लै धज-तरुनी सगरी ॥१॥  
 सुनहु महरि तेरो लाड़िलौ, अति करत अचगरी ।  
 जमुन भरन जल हम्म गई, तहँ रोकत डगरी ॥  
 मिरतै नीर ढराइ दे, फोरी सब गगरी ।  
 गेँडुरि दई फटकारि कै, हरि करत जु लँगरी ॥  
 नित प्रति ऐसे ढँग करै, हमसौं कहै धगरी ।  
 अब बस-बास बनै नहीं, इहिँ तुव बज नगरी ॥  
 आपु गयो चढ़ि कदम पर, चितवत रही सगरी ।  
 सूर स्याम ऐसेँ हि सदा, हमसौं करै भगरी ॥१॥५॥

बज-धर-धर यह बात चलावत ।

जसुमति कौ सुत करत अचगरी, जमुना जल कोउ भरन न पावत ॥  
 श्याम वरन नटवर बपु काछे, मुरली रामा मल्लार बजावत ॥  
 कुंडल-छवि रवि-किरनहुँ तैँ दुति, मुकुट इंद्र-धनुहुँ तैँ भावत ॥  
 मानत काहु न करत अचगरी, गानारि धरि जल मुइँ ढरकावत ॥  
 सूर स्याम कौँ मात पिता दोउ, ऐसेँ ढँग आपुनहिँ पढ़ावत ॥१॥  
 करत अचगरी नंद महर कौ ।

सखा लिये जमुना तट बैद्यौ, निबह न लोग डगर कौ ॥  
 कोउ खीमो, कोउ किन बरजौ, जुवतिनि कैँ मन ध्यान ।  
 मन-बच-कर्म स्याम सुंदर तजि और न जानतिँ आन ॥  
 यह लीला सब स्याम करत हैँ, बज-जुवतिनि कैँ हेत ।  
 सूर भजै जिहिँ भाव कृष्ण कौँ, ताकौँ सोइ फल देत ॥११०॥

## लीला

ऐसौ दान माँभियै नहिँ जौ, हम पैँ दियौ न जाइ ।  
 बन मैँ पाइ अकेली जुवतिनि, मासग रोकत धाइ ॥  
 घाट बसत औघट जमुना-तट, दातैँ कहत दनाइ ।  
 कोउ ऐसौ दान लेत है, कौनैँ पठए सिखाइ ॥  
 हम जानतिँ तुम यौँ नहिँ रहौ, रहिहौ गारी खाइ ।  
 जो रस चाहौ सो रस नाहीँ, गोरस पियौ अघाइ ॥  
 औरनि सौँ लै लीजै मोहन, तब हम देहिँ दुलाइ ।  
 सूर स्याम कत करत अचगरी, हमसौँ कुँवर कन्हाइ ॥१११॥

ऐसैँ जनि बोलहु नंद-लाला ।  
 झॉंड़ि देहु अँचरा मेरौ नीकैँ, जानत और सी बाला ॥  
 बार-बार मैँ तुमहिँ कहनि हौँ, परिहौँ बहुरि जँजाला ।  
 जोवन, रूप देखि अलचाने, अबहीँ तैँ ये ख्याला ॥  
 तरुनाई तनु आवन दीजे, कत जिय होत विहाला ।  
 सूर स्याम उर तैँ कर टारहु, दूटैँ मोतिनि-माला ॥ ११

तैँ कत तोरयो हार नौसरि कौ ।  
 मोती बगरि रहै सब बन मैँ, गायौँ कान कौ तरिकौ ॥  
 ये अबगुन जु करत गोकुल मैँ तिलक दिये केसरि कौ ।  
 हीठ गुवाल दही कौ मासौ, औठनहार कमरि कौ ॥  
 जाइ गुकारैँ जगुमति आगैँ, कहति जु मोहन लरिकौ ।  
 सूर स्याम जानी चतुराई, जिहिँ अभ्यास बहुअरि कौ ॥ ११

आपुन भईँ सबैँ अब भोरी ।  
 तुम हरि कौ पीतांबर ऋक्व्यौ, उन तुमहरी मोतिनि लर तोरी ।  
 माँगत दान ज्वाव नहिँ देतीँ, ऐसी तुम जोवन की जोरी  
 उर नहिँ मानतिँ नंद-नंदन कौ, करतिँ आनि भकभोरा भोरी ।  
 इक तुम नारि गँवारि भली हौ, त्रिभुवन मैँ इनकी सरि को री  
 सूर सुनहु लैँहँ झँड़ाइ सब, अबहिँ फिरौरी दौरि दौरि ॥

हँसत सखनि यह कहत कन्हाई ।  
 जाइ चढ़ौँ तुम सवन द्रुमनि पर, जहँ-तहँ रहौँ छपाई ॥  
 तब लौँ बैँठि रहौँ मुख मँदे जब जानहु सब आईँ ।  
 कूदि परौँ तब द्रुमनि-द्रुमनि तैँ, दैँ दैँ नंद-दुहाईँ ॥  
 भक्ति होहिँ जैसेँ जुवती-गान, डरनि जाहिँ अकुलाई ।  
 बेनु-बिषान-मुरलि-धुनि कीजौँ संख-सब्द बहनाई ॥  
 नित प्रति जाति हमारैँ मारग, यह कहियो समुझाई ।  
 सूर स्याम माखन-दधि दानी, यह सुधि नाहिँ न पाईँ ? ॥ ११

स्वारिनि जब देखे नंद-नंदन ।  
 मोर-मुकुट पितांबर काछे, खौरि किय तन चंदन ॥  
 तब यह कह्यौ कहाँ अब जैहौ, आगैँ कुँवर कन्हाई ।  
 यह सुनि मन आनंद बढ़ायौ, मुख कइँ, बात बराई ॥

## धृ दावन लीला

कोउ-कोउ कहति चलौ री जैयै, कोउ कहै घर फिर जैयै ।  
 कोउ-कोउ कहति कहा करिहै हरि, इनसौँ कहा परैयै ॥  
 कोउ-कोउ कहति कालिहीं हमकोँ, यूटि लाई नंद लाल ।  
 सूर स्याम के ऐसे गुन हैं, धरहिँ फिरीँ ब्रज-बाल ॥११६॥

कान्ह कहत दधि-दान न देहौ ? ।

लैहौँ छीनि दूध दधि माखन, देखति ही तुम रैहौँ ॥  
 सब दिन कौ भरि लेउँ आजु हीँ, तब छाड़ौँ मैँ तुमको ।  
 उघटति हौँ तुम मातु-पिता लौँ, नहिँ जानति हौँ हमको ॥  
 हम जानति हैँ तुमकोँ मोहन, लै-लै गोद खिलाए ।  
 सूर स्याम अब भय जगाती, वैँ दिन सब बिसराए ॥११७॥

जाइ सबै कंसहि गुहरावहु ।

दधि माखन घृत लेत छुड़ाए, आजु हजूर बुलावहु ॥  
 ऐसे कौँ कहि मोहिँ बसावति, पल भीतर गहि मारौँ ।  
 मथुरापतिहिँ सुनौगी तुमहीँ, जब धरि कंस पछारौँ ॥  
 बार-बार दिन हमहिँ बसावति, अपनौँ दिन न बिचार्यौ ।  
 सूर इंद्र ब्रज जबहिँ बहावत, तब गिरि राखि उबार्यौ ॥११८॥

मोसौँ बात सुनहु ब्रज-नारी ।

इक उपखान चलत त्रिभुवन मैँ, तुमसौँ कहौँ उधारी ॥  
 कबहूँ बालक मुँह न दीजिये, मुँह न दीजिये नारी ।  
 जोइ उन करैँ सोइ करि डारैँ, मुँह चढ़त हैँ भारी ॥  
 बात कहत अँडिक्काति जाति सब, हँसति देति कर तारी ।  
 सूर कहा थे हमकोँ जानँ, छाँड़हिँ बेँचनहारी ॥११९॥

यह जानति तुम नंदमहर-सुत ।

तु दुहत तुमकोँ हम देखतिँ, जबहिँ जाति खरिकहिँ उत ॥  
 धारी करत यहौँ पुनि जानति, बर-बर दुदत भाँड़े ।  
 तगरा रोकि भए अब दानी, बेँ डँग कवतैँ छाँड़े ॥  
 और सुनौँ जसुमति जब बाँधे, तब हम किशौँ सहाइ ।  
 पूरदास-प्रभु यह जानति हम, तुम ब्रज रहत कम्हाइ ॥१२०॥

को माता को पिता हमारैँ ।

कब जबमव हमकोँ तुम देख्यौ, हँसियत बचन तुम्हारैँ ॥

कब माखन चोरि करि खायौ, कप वॉधे महतारी ।  
 दुहत कौन की गैया चारत बात कहौ यह भारी ॥  
 तुम जानत मोहिँ नंद-दुटौना, नंद कहौ तैँ आए ।  
 मैं पूरन अविगत, अबिनासी, माया सवनि भुलाए ॥  
 यह सुनि ग्वाखि सबै सुसुक्त्राजी, ऐसे गुन हौ जानत ।  
 सूर स्याम जो निदर-यौ सबहीं, मात-पिता नहिँ मानत ॥१२

भक्त हेत अवतार धरौँ ।

कर्म-धर्म कैं बस मैं नाहीं, जोग जज्ञ मन मैं न करौँ ॥  
 दीन-गुहारि सुगौँ खवननि भरि, गर्व-बचन सुनि हृदय जरौँ ।  
 आव-अधीन रहौँ सयही कैं, और न काहू नैंकु डरौँ ॥  
 ब्रह्मा कीट आदि लौँ व्यापक, सबकौँ सुख दे दुखहिँ हरोँ ।  
 सूर स्याम नव कही प्रगटही, जहाँ भाव तहँ तैं न टरौँ ॥

जौ तुमहीं हौ सबके राजा ।

तौ बैठी सिंहासन चढ़ि कै, चँवर, छत्र, सिर आजा ॥  
 मोर-मुकुट, मुरली पीतांबर, छाड़ौ नटवर-साजा ।  
 बेलु, बिपात, संख क्याँ पूरत, बाजै नौवत बाजा ॥  
 यह जु सुनैँ हमहूँ सुख पावैँ, संग करैँ कछु काजा ।  
 सूर स्याम ऐसी बातें सुनि, हमकौँ आवति लाजा ॥१३

हमहिँ और सो रोकै कौन ।

रोकनहारौ नंदमहर सुत, कान्ह नाम जाकौ है तौन ।  
 जाकैं बल है काम-नृपति कौ, उगत फिरति जुवतिनि कैं जौन ।  
 टोना डारि देत सिर ऊपर, आपु रहत ठाढ़ौ ह्वै मौन ।  
 सुनहु स्याम ऐसी न वृत्तियै, जानि परी तुमकौँ यह कौन ।  
 सूरदास-प्रभु कृपा करहु अब, कैसेँहु जाहिँ आपनै भौन ।

राधा सौँ माखन हरि माँगत ।

औरनि की मटुकी कौ खायौ, तुम्हरो कैसौ लागत ॥  
 खै आई वृषभानु सुता, हँसि सद लवनी है भेरौ ।  
 खै दीन्हैँ अपनैँ कर हरि-मुख, खात अल्प हँसि हेरौ ॥  
 सबहिनि तैं मीठी दधि है यह, मधुरैँ कबहौ सुनाइ ।  
 सूरदास-प्रभु सुख उदजायौ, छत्र लखना मनभाइ ॥१४

मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ ।

जानत इन गुजरिनि कौ सौ है, लयौ छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायौ ।  
धौरी धेनु बुहाइ छानि पय, मधुर आँधि मैँ औटि सिरायौ ।  
नई दोहनी पोंछि पखारी, धरि निरधूम खिरनि पै तायौ ॥  
तामैँ मिलि मिखित मिसिरी करि, दै कपूर पुट जावन नायौ ।  
सुभग ढकनैयाँ हाँकि बाँधि पट, जलन राखि छीकैँ समुदायौ ॥  
हौँ तुम कारन लैँ आई गृह, मारग मैँ न कहूँ दरसायौ ।  
सूरदास-प्रभु रसिक-सिरोमनि, कियौ कान्ह ग्वालनि मन भायौ ॥१२६॥

गोपी कहति धन्य हम नारी ।

धन्य दूध, धनि दधि, धनि माखन, हम परस्सति जेँ वत गिरिधारी ॥  
धन्य घोष, धनि दिन, धनि निसि वह, धनि गोकुल प्रगटे बनवारी ।  
धन्य सुकृत पोंछिलौ, धन्य धनि नंद, धन्य जसुमति महतारी ॥  
धनि धनि ग्वाल, धन्य वृंदावन, धन्य भूमि यह अति सुखकारी ।  
धन्य दान, धनि कान्ह मँगैया, धन्य सूर त्रिन-द्रुम-बन-डारी ॥१२७॥

गन संघबं देखि सिहात

धन्य ब्रज-ललनानि कर तैँ, ब्रह्म माखन खात ॥  
नहीं रेख, न रूप, नहीं तनु बरन, नहीं अनुहारि ।  
मातु-पितु नहीं दोउ जाकैँ, हरत-मरत न जारि ।  
आपु कर्ता आपु हर्ता, आपु त्रिभुवन नाथ ।  
आपुहीँ सब घट कौ ब्यापी, निगम गावत गाथ ॥  
अंग प्रति-प्रति रोम जाकैँ, कोटि-कोटि ब्रह्मंड ।  
कीट ब्रह्म प्रजंत जल-थल, इनहिँ तैँ यह मंड ॥  
येइ विस्वंबरन नायक, ग्वाल-संग-बिलास ।  
सोइ प्रभु-दधि दान मँगैत, धन्य सूरजदास ॥१२८॥

ब्रह्म जिनहिँ यह आयसु दीन्हौ ।

तिन तिन संग जन्म तियौ परगट, सखी सखा करि कीन्हौ ॥  
गोपी-ग्वाल कान्ह है नाहीं, ये कहुँ नैँकु न न्यारे ।  
जहाँ-जहाँ अवतार धरत हरि, ये नहीं नैँकु बिसारे ॥  
एकैँ देह बहुत करि राखे, गोपी ग्वाल मुरारी ।  
यह सुख देखि सूर के प्रभु कौँ, धकित अमर-संग-नारी ॥१२९॥

यह महिमा येई पै जानैँ

जोग-जज्ञ-तप ध्यान न आवत, सो दधि-दान लेत सुख मानैँ ॥  
खात परस्पर ग्वालनि मिलि कै, मीठौ कहिँ कहिँ आपु बखानैँ ।  
बिस्वम्भर जगदीस कहावत तं दधि दोना मॉक अघाने ॥  
आपुहिँ करता, आपुहिँ हरता, आपु बनावत, आपुहिँ भानैँ ।  
ऐसे सूरदास के स्वामी, ते गोपिनि कैँ हाथ बिकाने ॥१३

सुनहु बात जुवती इक मेरी ।

तुमतेँ दूरि होत नहिँ कबहुँ, तुम राख्यौ मोहिँ घेरी ॥  
तुम कारन बैकुंठ तजत हौं, जनम लेत ब्रज आइ ।  
वृंदावन राधा-गोपी संग, यहि नहिँ बिसर्यौ जाइ ॥  
तुम अंतर-अंतर कह भाषति, एक प्रान द्वै देह ।  
क्यों राधा ब्रज बसैँ बिसरौँ, सुमिरि पुरातन नेह ॥  
अब घर जाहु दान मैँ पायौ, लेखा कियौ न जाइ ।  
सूर स्याम हँसि-हँसि जुबतिनि सौँ, ऐसी कहत बनाइ ॥१३१॥

तुमहिँ बिना मन धिक्र अरु धिक्र घर ।

तुमहिँ बिना धिक्र-धिक्र माता पितु, धिक्र कुल-कानि, खाज, डर ॥  
धिक्र सुत पति, धिक्र जीवन जग कौ, धिक्र तुम बिनु संसार ।  
धिक्र सो दिवस, पहर, घटिका, पख जो बिनु नंद-कुमार ॥  
धिक्र धिक्र खबन कथा बिनु हरि कै, धिक्र लोचन बिनु रूप ।  
सूरदास प्रभु तुम बिनु घर उष्यौँ, धन-भीतर के कूर ॥१३२॥

रीती मटुकी सीस धरैँ ।

बन की घर की सुरति न काहुँ, खेहु दरी यह कहति फिरैँ ।  
कबहुँक जाति कुंज भीतर कौँ, तहाँ स्याम की सुरति करैँ  
चौँकि परतिँ, कहु तन सुधि आवति, जइँ तहाँ सखि-सुनति ररैँ ।  
तब यह कहति कहां मैँ इनसौँ, अमि अमि वन मैँ बृथा मरैँ  
सूर स्याम कैँ रस पुनि छाकतिँ, बैसैँ हीँ ढंग बहुरि डरैँ ॥१३३॥

तरुनी स्याम-रस मतवारि ।

प्रथम जीवन-रस चढ़ायौ, अतिहि भई खुमारि ॥  
दूध नहिँ, दधि नहीँ, माखन नहीँ, रीतौ माट ।  
महा-रस, अंग-अंग पूरन, कहां घर, कइँ बाट ॥

## वृंदावन लीला

मातु-पितु गुरुजन कहीं के, कौन पति, को नारि ।

सूर प्रभु कैँ प्रेम पूरन, छुकि रहीँ ब्रजनारि ॥ १३४ ॥

कोउ माई लैहै री गोपालहिँ ।

वधि कौ नाम स्यामसुंदर-रस, बिसरि गयौ ब्रज-बालहिँ ॥

महुकी सीस, फिरति ब्रज-बीथिनि, बोलति बचन रसालहिँ ।

उफनत तक्र चहुँ दिसि चितवन, चिन लाग्यौ नँद-बालहिँ ॥

हँसति, रिसाति, बुलावति, बरजति देखहु इनको चालहिँ ।

सूर स्याम बिनु और न भावै, या बिरहिनि घेहालहिँ ॥ १३५ ॥

। अनुराग

लोक-सकुच कुल-कानि तजी ।

जैसैँ नदी सिंधु कैँ घावै, वैसैँहि स्याम भजी ॥

मातु पिता बहु आस दिखायौ, नैकुँ न डरी, लजी ।

हारि मानि बैठे, नहिँ लागति, बहुते बुद्धि सजी ॥

मानति नहींँ लोक मरजादा, हरि कैँ रंग मजी ।

सूर स्याम कैँ मिलि, चूनी-हरदी ज्यौँ रंग रँजी ॥ १३६ ॥

कहा कहति तू मोहिँ री माई ।

नंद-नँदन मन हरि लियौ मेरी, तब तैँ मोकैँ कछु न सुहाई ॥

अब लौँ नहिँ जानति मैँ को ही, कब तैँ तू मेरैँ दिग आई ।

कहाँ गेह, कहाँ मातु पिता हैँ, कहाँ सजन, गुरुजन कहाँ भाई ॥

कैसी लाज, कानि है कैसी, कहा कहति हँ हँ रिसहाई ? ।

अब तौ सूर भजी नँद-बालहिँ, की लघुता की होइ बड़ाई ॥ १३७ ॥

मेरे कहे मैँ कोउ नाहिँ ।

कह कहौँ, कछु कहि न आवै, नैकुँ न डराहिँ ॥

नैन ये हरि-दरस-लोभी, सवन सठ-रसाल ।

अथप्रहीँ मन गयौ तन लजि, तब भई बेहाल ॥

इंद्रियनि पर भूप मन है, सबनि लियौ बुलाइ ।

सूर प्रभु कैँ मिले सब ये, मोहिँ करि गपु बाइ ॥ १३८ ॥

अब तौ प्रगट भई जग जानी ।

वा मोहन सौँ प्रीति गिरंतर, क्यौँ अब रहैगी छानी ॥

कहा करौँ सुंदर मूरति, इन नैननि मँक समानी ।

निकसति नहींँ बहुत पचिहारी, रोम रोम अरुभानी ॥

अब कैसेँ निरवारि जाति है, मिन्नी वूध उगौँ पानी ।  
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतर की जानी ॥ १४८

सखि मोहिँ हरिदरस रस प्याइ ।

हौँ रँगी अब स्याम-मूरति, लाल लोग रिसाइ ॥

स्यामसुंदर भदन मोहन, रंग-रूप सुभाइ ।

सूर स्वामी-प्रीति-कारन, सीस रहौ की जाइ ॥ १४९

नंदलाल सौँ मेरोँ मन मान्यौ, कहा करेगौ कोउ ।

मैँ तौ चरन-कमल लपटानी, जो भावै सो होउ ॥

बाप रिसाइ, माइ घर मारे, हँसैँ बिराने लोग ।

अब तौ स्यामहिँ सौँ रति बाड़ी, विधना रथ्यौँ खँजोत ॥

जाति महति पति जाइ न मेरी, अरु परलोक नसाइ ।

गिरिधर-वर मैँ नैँ कु न छाँदौँ, मिली निगान बजाइ ॥

बहुरे कबहिँ यह तन धरि पैहौँ, कहँ पुनि श्रीबनवारि ।

सूरदास स्वामी कैँ ऊपर यह तन डारौँ वारि ॥

करन दै लोगनि कौँ उपहास ।

मन क्रम बचन नंद-नंदन कौ, नैँ कु न छाँदौँ पास ॥

सब या ब्रज के लोग दिकनिघौँ, मेरे भाएँ घास ।

अब तौ यहै बसी री माई, नहिँ मानौँ गुरु आस ॥

कैसेँ रह्यौ परै री सजनी, एक गाँव कै बास ।

श्याम मिलन की प्रीति सखी री, जानत सूरजदास ॥

एक गाँव कै बास सखी हँँ, कैसेँ धीर धरौँ ।

लोचन-मधुप अटक नहिँ मानत, जद्यपि जतन करौँ ॥

वै इहिँ मग नित प्रति आवत हैँ, हौँ दधि लै निकरौँ ।

पुलकित रोम रोम, गड़गड़ सुर, आनँद उमँग भरौँ ॥

पल अंतर चलि जात, कलप-वर विरहा अनल जरौँ ।

सूर सकुच कुत्त-कानि कहौँ लनि, आरज-पथहिँ उरौँ ॥

हौँ सँग साँवरे के जैहँ ।

होनी होइ होइ सो अबहीँ, जस अयजस काहँ न डरैहँ  
कहा रिसाइ करे कोउ मेरो, कहु जो कहै प्रान तिहिँ दै  
देहौँ त्यागि राखिहँ यह ब्रत, हरि-रति-बीज बहुरि कब बैहँ



## वृंदावन लीला

का यह सूर अचिर अवनी, तनु तजि अकास पिय-भवन समैहैं ।  
का यह ब्रज-बापी क्रीड़ा जल, भजि नंद-नंद सबै सुख लैहैं ॥१४

एन

देखौ माई सुंदरता कौ सागर ।

अंधि-बिबेक बल पार न पावत, भगन होत मन-नागर ॥  
तनु अति श्याम अगाध अंबु-निधि, कटि पट पीत तरंग ।  
चितवत चलत अधिक रुचि उपजति, भँवर परति सब अंग ॥  
नैन-मीन, मकराकृत कुंडल, भुज सरि सुभग भुजंग ।  
मुक्ता-माल मिली मानौ, इँ सुरसरि एकै संग ॥

कनक खचित मनिमय आभूषण, सुख, स्रम-कन सुख देत ।  
जनु जल-निधि मधि प्रगट कियौ, सुसि, श्री अरु सुधा समंत ॥  
देखि सरूप सकल गोपी जन, रही विचारि-विचारि ।  
तदपि सूर तरि सकी न सोभा, रही प्रेम पचि हारि ॥१४

✓ श्याम भुजनि की सुंदरताई ।

चंदन खौरि अनूपम राजति, सो छबि कही न जाई ॥  
बड़े बिसाल जानु लौं परसत, इक उपमा मन आई ।  
मनौ भुजंग गगन तै उतरत, अधमुख रह्यौ भुलाई ॥  
रत्न-जटित पहुँची कर राजति, अंगुरी सुंदर भारी ।  
सूर मनौ फनि-सिर मनि सोभित, फन-फन की छबि न्यारी ॥१४

✓ श्याम-अंग जुवती निरखि भुलानी ।

कोउ निरखति कुंडल की आभा, इतनेहिँ माँक बिकानी ॥  
ललित कपोल निरखि कोउ अटकी, सिथिल भई उद्यौ पानी ।  
देह गेह की सुधि नहिँ काहूँ, हरपति कोउ पछितानी ॥  
कोउ निरखति रही ललित नासिका, यह काहू नहिँ जानी ।  
कोउ निरखति अधरनि की सोभा, कुरति नहीँ मुख बानी ॥  
कोउ चक्रित भई दसन-चमक पर, चकचौंधी अकुलानी ।  
कोउ निरखति दुति चिबुक चारु की, सूर तरुनि बिततानी ॥१४

✓ मै बलि जाउँ श्याम-मुख-छबि पर ।

बलि-बलि जाउँ कुटिल कच बिधुरे, बलि भृकुटी लिलाट पर ॥  
बलि-बलि जाउँ चारु अवलोकनि, बलि बलि कुंडल-रवि की ।  
बलि-बलि जाउँ नासिका सुललित, बलिहारी चाँ छबि की ॥

बलि-बलि जाऊँ अरुन अधरनि की, विद्रुम-विंध्य लजानन ।  
 मैं बलि जाऊँ दसन चमकनि की, वारों तड़ितनि सावन ॥  
 मैं बलि जाऊँ ललित डोड़ी पर, बलि भोतिनि की माल ।  
 सूर निरखि तन-मन बलिहारौँ, बलि बलि जसुभ्रति-लाल ॥१४

नटवर-बेष धरे ब्रज आवत । ✓

मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, कुटिल अलक मुख पर छवि पावत ॥  
 अकुटी बिकट नैन अति चंचल इहिँ छवि पर उपमा इक धावत ।  
 धनुष देखि खंजन विधि डरपत; उडि न सकत उडिबै अकुलावत ॥  
 अधर अनूप सुरलि-सुर पूरत, गौरी राग अलापि बजावत ।  
 सुरभी-वृंद गोप-बालक-संग, गावत अति आनंद बढ़ावत ॥  
 कनक-मंखला कटि पीतांबर, निर्गत मंद-मंद सुर गावत ।  
 सूर स्याम-प्रति-अंग-भावुरी, निरखत ब्रज-जन कैँ मन भावत ॥१५

आवत मोहन धेनु चराए ।

मोर मुकुट सिर, उर बनमाला, हाथ लकुट, गोरज लपटाए ॥  
 कटि कङ्कनी किंकिनि-धुनि बाजति, चरन चलत नुपुर रव लाए ।  
 ग्वाल-मंडली मध्य स्यामवन पीत बसन दामिनिहिँ लजाए ॥  
 गोप सखा आवत गुन गावत, मध्य स्याम हलधर छवि छाए ।  
 सूरदास-प्रभु असुर सँहारे, ब्रज आवत मन हरष बढ़ाए ॥१६

प. 1-2-3-4-5-6-7-8-9-10-11-12-13-14-15-16-17-18-19-20-21-22-23-24-25-26-27-28-29-30-31-32-33-34-35-36-37-38-39-40-41-42-43-44-45-46-47-48-49-50-51-52-53-54-55-56-57-58-59-60-61-62-63-64-65-66-67-68-69-70-71-72-73-74-75-76-77-78-79-80-81-82-83-84-85-86-87-88-89-90-91-92-93-94-95-96-97-98-99-100-101-102-103-104-105-106-107-108-109-110-111-112-113-114-115-116-117-118-119-120-121-122-123-124-125-126-127-128-129-130-131-132-133-134-135-136-137-138-139-140-141-142-143-144-145-146-147-148-149-150-151-152-153-154-155-156-157-158-159-160-161-162-163-164-165-166-167-168-169-170-171-172-173-174-175-176-177-178-179-180-181-182-183-184-185-186-187-188-189-190-191-192-193-194-195-196-197-198-199-200-201-202-203-204-205-206-207-208-209-210-211-212-213-214-215-216-217-218-219-220-221-222-223-224-225-226-227-228-229-230-231-232-233-234-235-236-237-238-239-240-241-242-243-244-245-246-247-248-249-250-251-252-253-254-255-256-257-258-259-260-261-262-263-264-265-266-267-268-269-270-271-272-273-274-275-276-277-278-279-280-281-282-283-284-285-286-287-288-289-290-291-292-293-294-295-296-297-298-299-300-301-302-303-304-305-306-307-308-309-310-311-312-313-314-315-316-317-318-319-320-321-322-323-324-325-326-327-328-329-330-331-332-333-334-335-336-337-338-339-340-341-342-343-344-345-346-347-348-349-350-351-352-353-354-355-356-357-358-359-360-361-362-363-364-365-366-367-368-369-370-371-372-373-374-375-376-377-378-379-380-381-382-383-384-385-386-387-388-389-390-391-392-393-394-395-396-397-398-399-400-401-402-403-404-405-406-407-408-409-410-411-412-413-414-415-416-417-418-419-420-421-422-423-424-425-426-427-428-429-430-431-432-433-434-435-436-437-438-439-440-441-442-443-444-445-446-447-448-449-450-451-452-453-454-455-456-457-458-459-460-461-462-463-464-465-466-467-468-469-470-471-472-473-474-475-476-477-478-479-480-481-482-483-484-485-486-487-488-489-490-491-492-493-494-495-496-497-498-499-500-501-502-503-504-505-506-507-508-509-510-511-512-513-514-515-516-517-518-519-520-521-522-523-524-525-526-527-528-529-530-531-532-533-534-535-536-537-538-539-540-541-542-543-544-545-546-547-548-549-550-551-552-553-554-555-556-557-558-559-560-561-562-563-564-565-566-567-568-569-570-571-572-573-574-575-576-577-578-579-580-581-582-583-584-585-586-587-588-589-590-591-592-593-594-595-596-597-598-599-600-601-602-603-604-605-606-607-608-609-610-611-612-613-614-615-616-617-618-619-620-621-622-623-624-625-626-627-628-629-630-631-632-633-634-635-636-637-638-639-640-641-642-643-644-645-646-647-648-649-650-651-652-653-654-655-656-657-658-659-660-661-662-663-664-665-666-667-668-669-670-671-672-673-674-675-676-677-678-679-680-681-682-683-684-685-686-687-688-689-690-691-692-693-694-695-696-697-698-699-700-701-702-703-704-705-706-707-708-709-710-711-712-713-714-715-716-717-718-719-720-721-722-723-724-725-726-727-728-729-730-731-732-733-734-735-736-737-738-739-740-741-742-743-744-745-746-747-748-749-750-751-752-753-754-755-756-757-758-759-760-761-762-763-764-765-766-767-768-769-770-771-772-773-774-775-776-777-778-779-780-781-782-783-784-785-786-787-788-789-790-791-792-793-794-795-796-797-798-799-800-801-802-803-804-805-806-807-808-809-810-811-812-813-814-815-816-817-818-819-820-821-822-823-824-825-826-827-828-829-830-831-832-833-834-835-836-837-838-839-840-841-842-843-844-845-846-847-848-849-850-851-852-853-854-855-856-857-858-859-860-861-862-863-864-865-866-867-868-869-870-871-872-873-874-875-876-877-878-879-880-881-882-883-884-885-886-887-888-889-890-891-892-893-894-895-896-897-898-899-900-901-902-903-904-905-906-907-908-909-910-911-912-913-914-915-916-917-918-919-920-921-922-923-924-925-926-927-928-929-930-931-932-933-934-935-936-937-938-939-940-941-942-943-944-945-946-947-948-949-950-951-952-953-954-955-956-957-958-959-960-961-962-963-964-965-966-967-968-969-970-971-972-973-974-975-976-977-978-979-980-981-982-983-984-985-986-987-988-989-990-991-992-993-994-995-996-997-998-999-1000

उपमा हरि-तनु देखि लजानी । ✓

कोउ जल मैं, कोउ बननि रहीँ दुरि, कोउ कोउ गगन समानी ।  
 मुख निरखत ससि गयो अंबर कौँ, तड़ित दसन-छवि-हेरि ।  
 मीन कमल, कर चरन, नयन डर, जल मैं कियौ बसेरि ॥  
 भुजा देखि अहिराज लजाने, बिवरनि पैठे घाइ ।  
 कटि निरखत फेहरि डर मान्यौ, बन-वन रहे दुराइ ॥  
 गारी देहिँ कबिनि कैँ बरनत, श्री-अंग पटतर दैत ।  
 सूरदास हमकौँ सरभावत, नाउँ हमारौँ लेत ॥१७

चितवनि रोकैँ हूँ न रही ।

स्याम सुंदर-सिंधु-सनमुख, सरित उमंगि बही ॥  
 प्रेम-सलिल प्रवाह भँवरनि, मिति न कबहुँ लही ।  
 लोभ-लहर-कैँच, बूँघट-पट-करार बही ॥

थके पल पथ, नात्र-धीरज, परति नहिँन गही ।

भिली मूर सुभाव स्यामहिँ, फेरिहू न चही ॥१५२॥

स्याम सुख-रासि, रस-रासि भारी ।

रूप की रासि, गुन-रासि, जोवन-रासि, थकित भईँ निरखि नव तरुन नारी  
सील की रासि, जस-रासि, आनँद रासि, नील नव-जलद-छबि-बरन-कारी  
दया की रासि, विद्या-रासि, बल-रासि, निर्द्वाराति दनुकुल-प्रहारी  
चतुरई-रासि, छल-रासि, कल-रासि, हरि भजै जिहिँ हेत तिहिँ देन हारी  
सूर-प्रभु स्याम सुख धाम पूरन काम यसन-कटि-पीत मुख मुरली-धारी ॥१५३॥

स्याम-कमल पद-नख की सोभा ।

जे नख-चंद्र इंद्र-सिर परसे, सिव विरंचि मन लोभा ॥

जे नख-चंद्र सनक मुनि ध्यावत, नहिँ पावत भरमाहीँ ।

ते नख-चंद्र प्रगट ब्रज-जुवती, निरखि-निरखि हरपाहीँ ॥

जे नख-चंद्र फनिंद हृदय तैँ, एकौ निमिष न टारत ।

जे नख-चंद्र महा मुनि नारद, पलक न कहुँ बिसारत ॥

जे नख-चंद्र-भजन खल नासत, रमा हृदय जे परसति ।

सूर स्याम-नख-चंद्र बिसल-छबि, गोपी-जन मिलि दरसति ॥१५४॥

—स्याम-हृदय जल-सुत की माला, अतिहिँँ-अनूपम छाजै (री) ।

मनहुँ बलाक-पाँति नव-घन पर, यह उपमा कछु आजै (री) ॥

पीत, हरित, सित, अरुन आल बन, राजति-हृदय बिसाल (री) ।

मानहुँ इंद्र-धनुष नभ-भंडल, प्रगट भयौ तिहिँ काल (री) ॥

भृगु पद-चिह्न उरस्थल प्रगटे, कोस्तुभ मनि ढिग दरसत (री) ।

बैठे मानौ पट बिधु इक सँगा, अर्द्ध निसा मिलि हरषत (री) ॥

भुजा बिसाल स्याम सुंदर की, चंदन-खौरि चढ़ाय (री) ।

सूर सुभा अँग-अँरा की सोभा, ब्रज-ललना ललचाए (री) ॥१५५॥

—मुख पर चंद डारौँ-वारि ।

कुटिल कच पर भौर वारौँ, भौँह पर धनु वारि ॥

भाल-केसरि-तिलक छबि पर, मदन-सर सत वारि ।

मनु चली बहि सुधा-धारा, निरखि मन दौँ वारि ॥

नैन सुरसति-जमुन-गंगा, उपम डारौँ वारि ।

मीन खंजन मृगाज वारौँ, कमल-के कुल वारि ॥

निरखि कुंडल तरनि वारैँ, कृप खवननि वारि ।  
 भलक ललित कपोल-द्वि पर, मुकुट सत-सत वारि ॥  
 नसिका पर कीरु वारैँ, अधर बिद्रुम वारि ।  
 दसन पर कन-बज्र वारैँ, बीज-दाडिम वारि ॥  
 चिबुक पर चित-वित्त वारैँ, ग्रान छारैँ वारि ।  
 सूर हरि की अंग-सोभा, को सकै निरवारि ॥१५  
 आजु सखी अरुनोदय मेरे, नैननि कौँ धोख भयौ ।  
 की हरि आजु पंथ इहिँ गवने, स्याम जलद की उनथौ ॥  
 की बग पाँति भौँति, उर पर की मुकुट माल बहु मोल ।  
 कीधौँ मोर मुदित माचत, की बरह-मुकुट की डोल ॥  
 की घनघोर गँभीर प्रात उठि, की ग्वालनि की टेरनि ।  
 की दामिनि कौँधति चहुँ दिसि, की सुभग पीत पट फेरनि ॥  
 की बनमाल लाल-उर राजति, की सुरपति धनु चारु ।  
 सूरदास-प्रभु-रस भरि उमँगी, राधा कहति विश्वारु ॥१६

नेत्र अनुराग

✓ नैन न मेरे हाथ रहे । ✓

देखत दरस स्याम सुंदर कौ, जल की ठरनि बहे ॥  
 वह नीचे कौँ धावत आतुर, -बैसेहि-नैन भए ।  
 वह तौ जाइ समात उदधि मैँ, ये प्रति अंग रए ॥  
 वह अगाध कहुँ वार पार नहिँ, येउ सोभा नहिँ पार ।  
 ✓ लोचन मिले त्रिवेनी ह्वैँकैँ, सूर समुद्र अपार ॥

इन नैननि मोहिँ बहुत सतार्थौ ।

अब लौँ कानि करी मैँ सजनी, बहुतेँ मूँड चढ़ायौ ॥  
 निदरे रहन गहे रिस मोसौँ, मोहीँ दोष लगायौ ।  
 लूटत आपुन श्री-अंग-सोभा. ज्यौँ निधनी धन पायौ ॥  
 निसिहूँ दिन ये करत अचरारी, मनहिँ कहा धौँ आयौ ।  
 सुनहु सूर इनकौँ प्रतिपालत, आलस नँकु न लायौ ॥

नैन करैँ सुख, हम दुख पावैँ ।

ऐसौँ को पर-बेदन जानैँ, जासौँ कहि जु सुनावैँ ॥  
 तातैँ मौन भलौँ सबही तैँ, कहि कैँ मान गँचावैँ ।  
 लोचन, मन, इंद्रि हरि कौँ भजि, तजि हमकौँ सुख पावैँ ॥

## वृंदावन लीला

वै तौ गए आपने कर तैँ, बृथा जीव भरमावैँ ।  
सूर स्याम हैँ चतुर सिरोमनि, तिनसौँ भेद जनावैँ ॥१६०॥

ऐसे आपुस्वारथी नैन । -

अपनोइ पेट भरत हैँ निसि-दिनु, और न लैन न देन ॥  
बस्तु अपार परी श्रोछैँ कर, ये जानत घटि जैहै ।  
को इनसौँ समुझाइ कहै यह, दीन्हैँ ही अधिकैहै ॥  
सदा नहीँ रहैँ अधिकारी, नाउँ राखि जाँ लेते ।  
सूर स्याम सुख लूटैँ आपुन, औरनि हूँ कौँ देते ॥१६१॥

✓ नैन भए बस मोहन तैँ ।

ज्यों कुरंग बस होत नाद के, टरत नहीँ ता रोहन तैँ ॥  
ज्यों मधुकर बस कमल-कोस के, ज्यों बस चंद्र चकोर ।  
तैसेँ हि ये बस भए स्याम के, गुड़ी-बस्य ज्यों डोर ॥  
ज्यों बस स्वाति-बूँद के चातक, ज्यों बस जल के मीन ।  
सूरज-भ्रमु के बस्य भए ये, छिनु छिनु प्रीति नवीन ॥१६२॥ ✓

तब तैँ नैन रहे इकटकहीं ।

जब तैँ दृष्टि-परे नंद-नंदन, नैँकु न अंत सटकहीं ॥  
सुरली घरे अरुन अधरनि पर, कुंडल झलक कपोल ।  
निरखत इकटक पलक भुलाने, मनौ बिकाने मोल ।  
हमकौँ वैँ काहैँ न बिसारैँ, अपनी सुधि उन नाहिँ ।  
सूर स्याम-छवि-सिंधु समाने, बृथा तरुनि पछिताहिँ ॥१६३॥

नैननि सौँ झगरौ करिहौँ री ।

। भयौ जौ स्याम-संग हैँ, बाँह पकरि सम्मुख लरिहौँ री ॥  
महिँ तैँ प्रतिपालि बड़े किये, दिन-दिन कौ लखौ करिहौँ री ।  
प-लूट कीन्ही तुम काहैँ, अपने बाँटे कौ धरिहौँ री ॥  
क मातु-पितु भवन एक रहे, मैँ काहैँ उनकौँ डरिहौँ री ।  
र अंस जो नहीँ देहिगे, उनकौँ रँग मैँ हूँ डरिहौँ री ॥१६४॥

कपटी नैननि तैँ कोउ नाहीं ।

घर कौ भेद और के आगैँ, क्यौँ कहिबे कौँ जाहीं ॥  
आपु गए निधरक हूँ हमतैँ, बरजि-बरजि-पचिहारी ।  
मनकामना भई परिपूरन डरि रीभे निरिधारी ।

इन्हि बिना वे, उनहिं बिना ये, अंतर नाहीं भावत ।  
सूरदास यह जुग की महिमा, कुटिल नुरत फल पावत ॥१६

✓ नैना घूँघट में न समात ।

सुंदर बदन नंद-नंदन कौ, निरखि-निरखि न अघात ॥  
अति रस-लुब्ध महा मधु लंपट, जानत एक न बात ।  
कहा कहौं दरसन सुख माते, ओट भएँ अकुलात ॥  
बार बार बरजत हैं हारी, तऊ टेव नहिं जात ।  
सूर तनक गिरिधर बिनु देखैँ, पलक कलप सम जात ॥१६

ये नैना मेरे हीठ भए री ।

घूँघट-ओट रहत नहिं रोकेँ, हरि-मुख देखत लोभि गए री ॥  
जउ मैँ कोटि जतन करि राखे, पलक-कपाटनि मूँदि लए री ।  
तउ ते उमंगि चले दोउ हट करि, करैँ कहा मैँ जान दए री ॥  
अतिहिँ चपल, बरज्यौ नहिँ मानत, देखि बदन तन फेरि नए री ।  
सूर स्यामसुंदर-रस अटके, मानहुँ लोभी उहँई छए री ॥

अँखियाँ हरि कैँ हाथ विकानी ।

मृदु मुमुकानि मोल इति लीन्ही, यह सुनि सुनि पड़ितानी ॥  
कैसेँ रहति रहीँ मेरेँ बस, अब कछु औरै भौँति ।  
अब वै लाज मरति मोहिँ देखत, बैठीँ मिलि हरि-पाँति ॥  
सपने की सी मिलनि करति हैँ, कब आवतिँ कब जातिँ ।  
सूर मिलीँ हरि नंद-नंदन कौँ, अनत नहीँ पतियातिँ ॥

✓ अँखियनि तब तैँ नैर धरयो ।

जब हम हटकी हरि-दरसन कौँ, सो रिस नहिँ विसरयो ॥  
तबहीँ तैँ उनि हमहिँ भुलायो, गईँ उतहिँ कौँ घाइ ।  
अब तौँ तरकि तरकि एँठति हैँ, लेनीँ लेतिँ बनाइ ॥  
भईँ जाइ वैँ स्याम-सुहागिनि, बड़भागिनि कहवावैँ ।  
सूरदास वैसी प्रभुता तजि, हम पैँ कब वैँ आवैँ ॥

## राधा-कृष्ण

मिलन

खेलत हरि निकसै ब्रज-खोरी ।

कटि कछनी पीतांबर बाँधे हाथ लए भौरा, चक्र डोरी ॥

मोर-सुकुट, कुंडल खवननि बर, दसन-दमक दामिनि-छबि छोरी । -

गए स्याम रबि-तनया कैँ तट, अंग लसति चंदन की खोरी ॥

औचक ही देखी तहँ राधा, नैन बिसाल भाल दिए रोरी ।

नील वसन फरिया कटि पहिरे, बनी पीठि हलति भकसोरी ॥

मंग लरिकिनी चलि इन आवति, दिन-थोरी, अति छबि तन-गोरी ।

सूर स्याम देखत हीँ रीझै नैन-नैन मिलि परी खोरी ॥३॥

~~अनुपम~~ ब्रुकत स्याम कौन तू गोरी ।

कहाँ रहति, काकी है बेटी, देखी नहीं कहुँ ब्रज खोरी ॥

काहे कौँ हम ब्रज-तन आवति, खेलति रहति आपनी पौरी ॥

सुनत रहति खवननि नंद-दोड़ा, करत फिरत माखन-दधि-चोरी ॥

तुम्हारौ कहा चोरि हम लौहँ, खेलन चलौ संग मिखि जोरी ।

सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमणि, बातनि भुरइ राधिका भोरी ॥२॥

✓ प्रथम सनेह दुहुँनि मन-जान्यौ ।

नैन नैन कीन्ही सब बातैँ, गुप्त प्रीति प्रगटान्यौ ॥

खेलन कबहुँ हमारैँ आवहु, नंद-सदन, ब्रज गाउँ ।

द्वारैँ आइ देरि मोहिँ लीजौ, कान्ह हमारौ नाउँ ॥

जौ कहियै घर दूरि तुम्हारौ, बोलत सुनियै देरि ।

तुमहिँ सौँह वृषभानु बबा की, प्रात-साँझ इक फेरि ॥

सधी निपट देखियत तुमकौँ, तातैँ करियत साथ ।

सूर स्याम नागर, उत नागरि राधा, दोउ मिलि साथ ॥३॥

गई वृषभानु-सुता अपनैँ घर ।

संग सखी सौँ कहति चली यह, को जैहै इन कैँ दर ॥

बढ़ी बेर भई जमुना आप, खीकति हँहै मैया

बचन कहति मुख तदथ-प्रेम-कुस मन हरि खियौ कन्हैया ॥

माता कहति कहाँ ही प्यारी, कहाँ अबेर लगाई ।  
सूरदास तब कहति राधिका, खरिक देखि हैं आई ॥४॥

नंद गए खरिकहिं हरि लीन्हे ।

देखी तहाँ राधिका आदी, बोलि लिए तिहिं चीन्हे ॥  
महर कछौ खलौ तुम दोऊ, दूरि कहुँ जिनि जैहौ ।  
गनती करत भाल गैयनि की, मोहि निथरै तुम रहौ ॥  
सुनि बेटी वृषभानु महर की, कान्हहिं लेंड खिलाइ ।  
सूर स्याम कौ देखे रहिहौ, मारै जनि कोउ गाइ ॥५॥

नंद बधा की बात सुनौ हरि ।

मोहि छाँड़ि जौ कहुँ जाहुगे, ल्याउंगी तुमकौँ धरि ॥  
भली भई तुम्हें सौँपि गए मोहि, जान न देहौ तुमकौँ ।  
बाँह तुम्हारी नै कु न छाँड़ौँ, महर खीम्किहै हमकौँ ॥  
मेरी बाँह छाँड़ि दे राधा, करत उपरफट बातें ।  
सूर स्याम नागर, नागरि सौँ, करत प्रेम की घातें ॥६॥

खेलन कैं मिस कुँवरि राधिका, नंद-महरि कैं आई ( हो ) ।  
सकुच सहित मधुरे करि बोली, घर हौ कुँवर कम्हाई ( हो ) ॥  
सुनत स्याम कोकिल सम बानी, निकसे अति अतुराई ( हो ) ।  
माता सौँ कछु करत कलह हे, रिस डारी बिसराई ( हो ) ॥  
मैया री तू इनकौँ चीन्हति, बारंबार बताई ( हो ) ।  
जमुना-तीर काहिह मै भूल्यौ, बाँह पकरि लै आई । ( हो ) ॥  
आवति इहाँ तोहिँ सकुचति है, मैँ दे सौँह बुलाई । ( हो ) ।  
सूर स्याम ऐसे गुन-आगर, नागरि बहुत रिझाई ( हो )

नाम कहा तेरी री प्यारी ।

बेटी कौन महर की है तू, को तेरी महतारी ॥  
धन्य कोख जिहिँ तोकौँ राख्यौ, धनि धरि जिहिँ अवतारी ।  
धन्य पिता माता तेरे, झबि निरखति हरि-महतारी ॥  
मैं बेटी वृषभानु महर की, मैया तुमकौँ जानति ।  
जमुना-तट बहु बार मिलन भयौ, तुम नाहिँ न पहिचानति ॥  
ऐसी काहि, वाकौँ मैँ जानति चह ती बड़ी छिनारि । २१-  
महर बड़ौ लंगर सब दिन कौ, हँसति देति सुख गारि ।



राधा बोलि उठी, बाबा कछु, तुमसौँ ढीठौँ कीन्हौ । ✓  
 ऐसे समर्थ कब मैँ देखे हँसि प्यारिहिँ उर लीन्हौ ॥  
 महरि कुँवरि सौँ यह कहि भापति, आउ करैँ तेरी चोटी ॥  
 सूरदास हरभित नँदरानी, कहति महरि हम जोटी ॥८॥

जसुमति राधा कुँवरि संवारति ।

बड़े बार सीमंत सीस के, प्रेम सहित निरुवारति ॥  
 माँग पारि बेनी जु लँवारति, गूँथी सुंदर भाँति ।  
 गोरेँ भाल बिंदु बंदन, मनु इंदु प्रात-रवि काँति ॥  
 सारी चीरि नई फरिया लै, अपने हाथ बनाइ ।  
 अंचल सौँ मुख पौँ छि अंरा सव, आपुहि लै पहिराइ ॥  
 तिल चाँवरी, बतासे, मेवा, दियो कुवरि की गोद । ✓  
 सूर स्वाम-राधा तनु चितवत, जसुमति मन-मन मोद ॥९॥

✓ बूझति जननि कहाँ हुती प्यारी ।

किन तेरे भाल तिलक रञ्जि कीनौ, किहिँ कब गूँदि माँग सिर पारी ॥  
 खेलति रही नंद कैँ आँगन, जसुमति कही कुँवरि ह्याँ आरी ॥  
 मेरौ नाउँ बूझि बाबा कौँ, तेरौ बूझि दई हँसि गारी ॥  
 तिल चाँवरी गोद करि दीनी फरिया दई फारि नव सारी ।  
 ओ तन चितैँ चितैँ ढोटा तन, कछु सबिता सौँ गोद पसारी ॥  
 यह सुनि कैँ बृषभानु मुदित चित हँसि-हँसि बूझत बात दुसारी ।  
 सूर सुनत रस सिंधु बढ़्यौ अति, दंपति एकै बात बिचारी ॥१०॥  
 ढी कृष्ण

सखियनि मिलि राधा घर लाईँ ।

देखहु महरि सुता अपनी कौँ, कहँ इहिँ कारैँ खाई ॥  
 हम आगँ आवति, यह पाछैँ धरनि परी भहराई ।  
 सिर तैँ गई दोहनी ढरि कैँ, आपु रही सुरभाई ॥  
 स्वाम-भुअंरा डस्यौ हम देखत, स्यावहु गुनी बुझाई ।  
 रोवति जननि कंठ लपटानी, सूर स्वाम गुन राई ॥११॥

नंद-सुवन गारुडी बुझावहु ।

कह्यौ हमारौ सुनत न कोऊ, तुरत जाहु, लै आवहु ॥  
 ऐसौ गुनी नहीँ त्रिभुवन कहँ, हम जानतिँ हँ नीकँ ।  
 आइ जाइ तौ तुरत जिआवहि मैँ कुँ छुवत उठैँ जी कैँ ॥

दखी पैयें यह बात हमारी एकहि मथ जिवावै  
नंद महर को सुत सूरज जो, कैसेहुँ छौं लैयें आवै ॥१२॥

महरि, गारुड़ी कुँवर कन्हारि ।

एक बिटिनियाँ करिं खाई, ताकैँ स्याम तुरतहाँ उथाई ॥  
बोखि लेहु अपने ढोटा कौं, मुम कहि कै देउ नैकु पठाई ।  
कुँवरि राधिका प्रात खरिक गई तहाँ कहुँ-बौं करैँ खाई ॥  
यह सुनि महरि मनहिँ सुसुन्धानी, प्रबदिँ रही मेरैँ गृह आई ।  
सूर स्याम राधहिँ कछु कारन, जसुमति समुक्ति रही अरगाई ॥१३॥

तब हरि कौं टेरति नँदराजी ।

भली भई सुत भयो गारुडी प्राहु सुनी यह बाणी ॥  
जननी-टेर सुनत हरि आपु, कना कइति री भैया ? ।  
कीरति महरि दुलावन प्राई, जाहु न कुँवर कन्हैया ॥  
कहुँ राधिका कारं खायो जाहु न आवौ मारि ।  
जंन-मंत्र कछु जानत हो तुम, सूर स्याम बनवारि ॥१४॥

हरि गारुड़ी तहाँ तब आपु ।

यह बानी शृपमानुसुता सुनि, मन-मन हरपचढ़ाए ॥  
धन्य-धन्य आपुन कौं कीन्हौ अतिहिँ गई सुरमाइ ।  
तनु पुजकित रोमांच प्रगट भए आनँद-अस्तु बहाइ ॥  
विह्वल देखि जननि भई व्याकुल अंग विष गयी लमाइ ।  
सूर स्याम-प्यारी दोउ जानत अंतरगत कौ भाइ ॥१५॥

रोवति महरि-फिरति बिततानी ।

बार-बार लै कंठ लगावति, अतिहिँ सिथिल भई पानी ॥  
नंद-सुवन कौ पाइ परी लै, दौरि महरि तथ आइ ।  
व्याकुल भई लाडिली मेरी, मोहन देहु जिवाइ ॥  
कछु पढ़ि पढ़ि कर, अंग परस करि, विष अपनी लिथी मारि ।  
सूरदास-प्रभु बड़े गारुड़ी, सिर पर गाडू डारि ॥१६॥

लोचन दए कुँवरि उवारि ।

कुँवर देख्यौ नंद कौ तब सकुची अंग समहारि ॥  
बात बूमति जननि सौं री कहा यह आज ।  
भरत तैँ नू बची प्यारी करति हँ कइ बाज ॥

तब कहति तोहिँ कारँ खाई कछु न रहि सुधि गात ।  
सूर प्रभु तोहिँ ज्याइ लीन्डी कही कुँवरि सौँ मात ॥१७॥

बड़ी मंत्र कियोँ कुँवर कन्हाई ।

बार-बार लौ कंठ लगायो, सुख चूम्यो दियो बरहिँ पडाई ॥

धन्य कोषि वह महरि जसोमति, जहाँ अबसर-यो यह सुत आई ।

ऐसौ चरित तुरतहीँ कीन्हौँ, कुँवरि हमारी मरी जिवाई ॥

मनहीं मन अनुमान कियो यह, बिधिना जोरी भली बनाई ।

सूरदास प्रभु बड़े राखी, ब्रज तर-बर यह बेरु खलाई ॥१८॥

रहरय

तुम सौँ कहाँ-कहाँ सुंदर बन ।

या ब्रज मैँ उपहास चलत है, सुनि सुनि सवन रहति मनहीं मन ॥

जा दिन सवनि पछारि, नोड करि; मोहि दुहिँ-नई घेनु बंसीबन ।

गुम गी बाईँ सुभाइ आपनैँ हौँ चितई हँसि नैकु बदन-तन ॥

ता दिन तैँ घर भारग जल तित, करन चवान सकल गोपीजन ।

सूर स्याम अब साँच पारिहौँ, यह पतिव्रत तुम सौँ नैद-नैदन ॥१९॥

स्याम यह तुमसौँ-बधौँ न कहौँ ।

जहाँ तहाँ घर घर कौँ धैरा, कौनी भाँति सहेँ ।

पिता कोषि करवान महत कर, बंधु बधन कौँ धावै ।

मातु कहै कन्या कुल कौ दुख, जनि-कोऊ जग जावै ॥

विनती एक करौँ कर जोरे, इति दीधिति जनि आवहु ।

जौ आवहु तौ-सुरलि-भधुर-धुति, ओ जनि कान सुतावहु ॥

मन क्रम बचन कहति हौँ साँची, मैँ मन तुमहिँ लगायो ।

सूरदास-प्रभु अंतरजामी, क्यों न करौँ मन भायो ॥२०॥

हँसि बोले गिरिधर रस-बानी ।

गुरुजन खिकेँ कतहिँ रिस पावति, काहे कौँ पछितानी ॥

देह धरे को धर्म अहे है, स्वजन कुटुंब गृह-आतो ।

कहन देहु, कहि कहा करेँगे, अरुनी सुरत हिरानी ? ॥

लोक लाज काहे कौँ छाँड़ति, ब्रजहीँ बसैँ भुलानी ।

सूरदास बट हूँ है, मन इक, भेद नहीं कछु जानी ॥२१॥

ब्रज बसि काके बोल सहेँ ।

तुम धिनु स्याम और नहिँ जानौँ, सकुचि न तुमहिँ कहौँ ।

कृष्ण की कानि कड़ा हैं करिहीं तुमको कहीं जहाँ  
 धिक माता, धिक पिता त्वमुख तुज, भाव तहाँ नही ॥  
 कोऊ कहु करै, कहै कहु कोऊ, हरष न सोक गहीं ।  
 सूर स्याम तुमकोँ बिनु देखै, तनु मन जीव दहीं ॥२२

✓ ब्रजहिँ बसैँ आपुहिँ बिसरायौ ।

प्रकृति पुरुष एकहि करि जानहु, वातनि भेद करायौ ॥  
 जल थल जहाँ रहैँ तुम बिनु नहिँ वेद उपनिषद गायौ ।  
 द्वैतन जीव-एक हम दोऊ, सुख कारन उपजायौ ॥ --  
 ब्रह्म-रूप द्वितिया नहिँ कोऊ तब मन तिया जजायौ ॥  
 सूर स्याम-मुख देखि अल्प हंसि, आनंद-पुंज बढ़ायौ ॥२३।

तब गामरि मन हरष भई ।

नेह पुरातन जानि स्याम कौ, अति आनंद भई ॥

प्रकृति पुरुष, नारी मैँ वैँ पति, काहैँ भूलि गई । —

को माता, को पिता, बंधुको, यह ली भेंट नई ॥

जन्म-जन्म, जुग-जुग यह लीला, प्यारी जानि लई ।

सूरदास-अभु की यह महिमा, यातैँ विबस भई ॥२४।

देह धरे कौ कारन सोई ।

लोक-लाज कुल-कानि न तजियै, जातैँ भलौ कहै सब कोई ॥

मातु पिता के डर कौँ मानै, मानै सजन कुटुंब सब सोई ।

तात मातु मोहूँ कौँ भावत, तन धरि कैँ भाया-बस होई ॥

सुनि बृषभानु-सुता मेरी बानी, प्रीति पुरातन राखहु गोई ।

सूर स्याम नागरिहिँ सुनावत, मैँ तुम एक नाहिँ हैँ दोई ॥२५

### राधा-सखा संवाद

घराहिँ जाति मन हरष बढ़ायौ ।

दुख डार्यौ, सुख अंग भार भरि, वली लूट सौ पायौ ।

भौँह सकोरति चलति मंद गति, नैँकु नदन मुसुकायौ ।

तहँ इक सखी मिली राधा कौँ, कहति भयौ मन भायौ ॥

कुंज-भवन हरि-संग बिलसि रस, मन कौँ सुफल करायौ ।

सूर सुगंध चुरावनहारौ, कैँसेँ दुरत दुरायौ ॥२६

मोसौँ कहा दुरावति राधा ।

कहाँ मिली नंद-नंदन कौँ, जिनि पुरई मन की साधा ॥

## राधाकृष्ण

व्याकुल भई फिरति ही अबहीं, काम-विधा तनु बाधा ।  
पुलकित रोम रोम गद गद, अब अंग अंग रूप अगाधा ॥  
नहिँ पावत जो रस जोगी जन, जप तप करत समाधा ।  
सुनहुँ सूर तिहिँ रस परिपूरन, दूरि किमौ तनु दाधा ॥२७॥

स्याम कौन कारे की गोरे ।

कहाँ रहत काके पै ढोटा, वृद्ध, तरुन की धौँ है भोरे ॥  
रहै रहत कि और गाउँ कहुँ, मैं देखे नाहिँ न कहुँ उनको ।  
कहै नहीं समुझाइ बात यह, मोहिँ लगावति हौँ तुम जिनको ॥  
कहाँ रहौँ मैं, वै धौँ कहँकै, तुम मिलवति हौँ काहेँ ऐसी ।  
सुनहुँ सूर मोसी भोरी कौँ, जोरि जोरि लावति हौँ कैसी ॥२८॥

सुनहुँ सखी राधा की बातें ।

भोसैं कहति स्याम है कैसे, ऐसी मिलई घातें ॥  
की गोरे, की कारे-रंग हरि, की जोवन, की भोरे ।  
की इहिँ गाउँ बसत, की अनतहिँ, दिननि बहुत, की थोर ॥  
की तू कहति बात हँसि भोसैं, की ब्रूकति सति-भाउ ।  
सपने हूँ उनकोँ नहिँ देखे, बाके सुनहुँ उपाउ ॥  
भोसैं कही कौन तोसी प्रिय, तोसैं बात दुरहैं ॥  
सूर कही राधा मो आगैँ, कैसेँ सुख दरहैं ॥२९॥

✓ राधे सँसै बदन बिराजत नीकौ ।

जब तू इत-उत बंक बिलोकति, होत निसा-पति फीकी ॥  
भृकुटी धनुष, नैन सर साँधे, सिर केसरि कौ-टीको ।  
मनु घूँघट-पट मैं दुरि बैझौ, पारधि रनि-पतिही की ॥  
गति सैमंत नाग ज्याँ नगारि, करे कहति हौँ लीकौ ।  
सूरदास-प्रभु बिबिध भाँति करि, मन रिभ्यौ हरि पी कौ ॥३०॥

काकौ काकौ सुख माई दातनि कौँ राहिये ।

पाँच की सात लगायौ, झूठी फ़ठी के बनायौ, साँची जौ तनक  
-होइ, तौजौँ सब सहिये ॥  
दातनि गह्यौ अकास, सुनत न थावँ साँस, बोखि तौ कछू न  
थावै, तातें मौन राहिये ॥  
ऐसैँ कहैँ नर नारि, बिना भीति चित्रकारि, काहे कौँ देखे मैं  
कान्ह, कहा कहाँ कहिये ॥

घर घर यज्ञे बैर, ब्रह्मा मोसों करै बैर यह सुनि सुनि सौन,  
हिरवध दहिगु ।

सूरदास बह उपहास होइ सिर मेरै, नंद को सुवन मिलौ तौ पै  
कहा चाहिये ॥३१॥

कैसे है नंद सुवन कन्हारै ।

देखे नहीं नैन-मारि कबहूँ, ब्रज मै रहत सदाई ॥

सकुचति हैं इक घात कहति तोहि, सो नहि जाति सुनाई ।

कैसेहुँ मोहिँ दिखाबहु उनको, गद मेरै मन थाई ॥

अतिहीँ सुंदर कहियन है वे, मोकों देहु बताई ।

भूरदास राधा की बानी, सुनत सखी भरभाई ॥३२॥

सुनहु सखी राधा की बानी ।

ब्रज बसि हरि देखे नहि कबहूँ लोग कहत कछु अकथ कहांनी ।

यह अथ कहति दिग्बावहु हरि को, देखहु री यह अचिरज मानी ।

जो हम सुनति रही सो नाही, ऐसे ही यह बायु बहानी ॥

ज्वाब न देत बने काहू सौँ, मन मै यह काहू नहि मानी ।

सूर सबै तरुनी मुख चाहति, चतुर चतुर सौँ चतुरई ढानी ॥३३॥

सुनि राधे तोहिँ स्वाम देखैहैं ।

जाहों तहाँ ब्रज-गल्लिनि फिरत हैं, जब हूँ मारग ऐहैं ॥

जबहीं—हम उनको देखेंगी, तबहीं—तोहिँ—डुलैहैं ।

उनहूँ केँ बालसा बहुत यह, तोहिँ देखि सुख पै हैं ॥

दरसन तै श्रीरज जब रंहे, तब हम तोहिँ पत्येहैं ।

तुमकोँ देखि म्याम सुंदर धन, सुरती मधुर बजेहैं ॥

लजु निभंग करि अंग अंग सौँ, गाना भाव जनेहैं ॥

सूरदास-प्रसु नवल कान्ह वर, पीतांबर फहरैहैं ॥३४॥

माता को सीख

काहेँ कोँ पर-घर छिनु-छिनु जाति ।

घर मैँ डाँटि देति सिख जननी, नाहिँन नैँकु डरति ।

राधा-कान्ह कान्ह राधा ब्रज हूँ रखौ अतिहिँ लजाति ।

अब सोकुल कोँ जैबौ छौँडो, अपजस हूँ न अघाति ।

तू बृषभानु बड़े की बेटी, उनकोँ जाति न पाँति ।

सूर सुता समुभावति जननी, सकुचति नहिँ सुसुकाति ॥३५॥

## राधाकृष्ण

खेलन कौं मै जाउं नहीं-!

और लरिकिनी घर घर खेलहिं, मोहीं कौं पै कहत तुहीं ॥  
उनकौं मातु पिता नाहें कोई खेलत डोलति जहीं तहीं ।  
तोसी महतारी बहि जाइ न, मै रहै तुमहीं बिनुहीं ॥  
कबहुं मोकाँ कळू लगावति, कबहुं कहति जनि जाहु कहीं ।  
सूरदास बात अनखौहीं, नाहिं न मौ पै जाति सही ॥३६॥

मनहीं मन रीझति महतारी ।

कहा भई जौ बाढ़ि तनक गई, अबहीं तौ मरी है वारी ।  
भूठे ही यह बात उड़ी है राधा-कान्ह कहत नर-नारी ।  
रिस की बात सुता के मुख की, सुनत हँसति मनहीं मन भारी ॥  
अब लौं नहीं कळू इहिं जान्यौ, खेलत देखि लगावैं गारी ।  
सूरदास जननी उर लावति, मुस्य चूमति पौं छति रिस दारी ॥३७॥

सुता-लए-जननी समुझावति ।

संग बिटिनिअनि कँ भिखि खेलौ, स्याम-साथ सुनि-सुनि रिस  
पावति ॥  
जातैं निदा होइ आपनी, जातैं कुल कौं गारी आवति ।  
सुनि लाइली कहति यह तोसँ, तोकाँ यातैं रिस करि धावति ॥  
अब समुझी मै बात सबनि की, भूठे ही यह बात उड़ावति ।  
सूर दास सुनि सुनि ये बानैं, राधा मन अति हरप बढ़ावति ॥  
राधा बिनय करति मनहीं मन, सुनहु स्याम अंतर के जामी ।  
मातु-पिता कुल-कानिहिं मानत, तुमहिं न जानत है जग-स्वामी ।  
तुम्हरो नाउं लेत सकुचत है, ऐसै ठौर रही हौं आनी ।  
गुरु परिजन की कानि मानियौ, बारंबार कही मुख बानी ॥  
कैसे संग रहौं बिमुखनि कँ, यह कहि-कहि नागारि पछिलानी ।  
सूरदास-प्रभु कौं हिरदै धरि, गृह-जन देखि-देखि सुसुकानी ॥

## दर्शन

राधा जल बिहरति सखियनि संग ।

धीव-प्रजंत नीर मै ठाढ़ी, क्षिरकति जल अपनै अपनै रंग  
मुख भरि नीर परसपर डारति सामा अतिहिं अनूप बढ़ी तब

आईँ निकसि जानु कटि लौँ सब, अँजुरिनि तैं लौँ लै जल डार  
मानहु सूर कनक-बल्ल्ही जुनि, अमृत बँद पवन-मिस मार

जमुना जल बिहरति ब्रज-नारी ।

तट ठाढ़ देखत नँद-नंदन, मधुर मुरलि कर धारी ॥  
मोर मुकुट, खननि मनि कुंडल, जलज-माल उर आजन  
सुंदर सुभग श्याम तन नव घन बिच बग पाँति विराजत ।  
उर बनमाल सुमन बहु भँतिनि, सेत, लाल, सित, पीत  
मनहु सुरसरी तट बैठ सुक बरन बरन तजि भीत ॥  
पीतांबर कटि तट छुद्रावलि, बाजति परम रसाल ।  
सूरदास मनु कनकभूमि दिग, बोलत रुचिर मराल ॥३३

चितवनि रौकैं हूँ न रही ।

श्याम सुंदर सिंधु-सनसुख, सरति उमँगि बही ॥  
प्रेम-सलिल प्रवाह भँवरनि, मिति न कबहुँ लही ॥  
लोभ-लहर-कटाच्छ, घँघट-पट-करार - हही ॥  
शके पल पथ, नाव-धीरज परति नहिँ न रही  
मिली सूर सुभाव श्यामहिँ, फेरिहूँ न चही ॥३४

हमहिँ कहौ हो श्याम दिखावहु ।

देखहु दरस नैन भरि नीकैं, पुनि-पुनि दरस न पावहु ॥  
बहुत लालसा करति रही तुम, वे तुम कारन आए ।  
पूरी साध मिली तुम उनकौँ, यातैं हमहिँ भुलाए ।  
नीकैं सगुन आजु ह्यौँ आईँ, भयौ तुम्हारौ काज ।  
सुनहु सूर हमकौँ कछु दैहौ, तुमहिँ मिले ब्रजराज ॥३५

राधा चलहु भवनहिँ जाहिँ ।

कबहिँ की हम जमुन आईँ, कहहिँ अरु पछिताहिँ ॥  
कियो दरसन श्याम कौ तुम, चलौगी की नाहिँ ।  
बहुरि मिलिहौ चीन्हि राखहु, कहत, सब मुसुकाहिँ ॥  
हम चलीँ घर तुमहुँ आवहु, सोच भयौ मन माहिँ ।  
सूर राधा सहित गोपी चलीँ ब्रज-समुहाहिँ ॥३६

कहि राधा हरि कैसे हैं ।

तैं मन माए की नाहीँ की सुंदर की कैसे हैं



## राधाकृष्ण

की पुनि हमहिं दुराच करौगी, की कैहौ वै जैसे हैं ।  
 की हम तुमसों कहति रहीं ज्यों, साँच कहौ की तैसे हैं ॥  
 नटवर-वेप काछमी काछे, अंगनि रति पति-सै से हैं ।  
 सूर स्याम तुम नीकें देखे, हम जानत हरि ऐसे हैं ॥४५॥  
 स्याम सखि नीकें देखे नाहिं ।

चितवत ही लोचन भरि आपु, बार-बार पछिताहिं ॥  
 कैसेहुँ करि इकटक मै राखति, नै कहिँ मै अकुलाहिं ।  
 निमिष मनौ छवि पर रण्वारे, तातै अतिहिं डराहिं ॥  
 कहा करै इनकौ कह दूपन, इन अपनी सी कीन्ही ।  
 सूर स्वाम-छवि पर मन अटक्यौ, उन सब सोभा लीन्ही ॥४६॥  
 7नुराग

पुनि पुनि कहति है ब्रज नारि ।  
 धन्य बड़ भागिनी राधा, तेरै बस गिरिधारि ॥  
 धन्य नंद-कुमार धनि तुम, धन्य तेरी प्रीति ।  
 धन्य दोउ तुम नवल जोरी, कोक कलानि जीति ॥  
 हम बिमुख, तुम कृष्ण-संभिनि, प्राण इक, द्वै देह ।  
 एक मन, इक बुद्धि, इक चित, दुहुँनि एक सनेह ॥  
 एक छिनु बिनु तुमहिं देखै, स्याम धरत न धीर ।  
 मुरलि मै तुव नाम पुनि पुनि कहत है बलबीर ॥  
 स्याम मनि तै परखि लीन्हौ, महा चतुर सुजान ।  
 सूर के प्रभु प्रेमही बस, कौन तो सरि आन ॥४७॥

राधा परम-निर्मल नारि  
 कहति हौँ मन कर्मना करि, हृदय-दुविधा टारि ॥  
 स्याम कौँ इक तुहीँ जान्यौ, दुराचारिनि और ।  
 जैसे घट पूरन न डोलै, अध भरौ डगाडौर ॥  
 धनी धन कबहुँ न प्रगटै, धरै ताहि छपाइ ।  
 तैँ महानग स्याम पायौ, प्रगटि कैसेँ जाइ ॥  
 कहति हौँ यह बात तोसौँ, प्रगट करिहौ नाहिं ।  
 सूर सखी सुजान राधा, परसपर मुसुकाहिं ॥४८॥  
 तैँ ही स्याम भले पहिचाने ।

सौँची प्रीति जानि मनमोहन, तेरेहिँ हाथ बिकाने ॥

हम अपराध कियौ कहि तमसौँ हमहीं कुलटा नारि  
 तुमसौँ उनसौँ बीच नदीँ कहु, तुम दोक बर-नारि ॥  
 धन्य सुहाग भाग है तेरी, धनि बड़भागी स्याम ।  
 सूरदास-प्रभु से पति जाऊँ, तोली जाऊँ बाम ॥४६॥

राधा स्याम की प्यारी ।

कृपन पति सर्वदा तेरे, तू सदा नारी ॥  
 सुनत बानी सखी-मुख की, लिय भयौ अनुराग ।  
 प्रेम-गदगद, रोम पुलकित, सलुकि अपनौ भाग ॥  
 प्रीति परमट कियौ चाहे, बचन बोलि न जाह ।  
 नंद-नंदन काम-नायक रहे नैननि छाड़ ॥  
 हृदय तेँ कहुँ टरत दाहीँ, कियौ निहचल वास ।  
 सूर प्रभु-रस भरी राधा, दुरत नहीं प्रकास ॥४७॥

जौ बिधना अपबस करि पाऊँ ।

तौ सखि कयौ होइ कहु तेरी, अपनी साध पुराऊँ ॥  
 लोचन रोम-रोम-प्रति माँगीँ, पुनि-पुनि प्राप्त दिखाऊँ ।  
 इकटक रहैँ पलक नहिँ लायैँ, पद्धति नहिँ चलाऊँ ॥  
 कडा करौँ छुपि-रासि स्यामधन, लोचन द्वैँ नहिँ ठाऊँ ।  
 एते पर ये निमित्त सूर सुनि, यह दुख काहिँ सुनाऊँ ॥४८॥

काहिँ राधिका बात अब सौँची ।

तुम अब प्रसट कहीँ मो आगैँ, स्याम-प्रेम-रस माँची ॥  
 तुमकौँ कहाँ मिले नंद-नंदन, जब उनकैँ रँग रौँची ।  
 खरिक मिले, की गोरस बँचत, की जय त्रिपहर बाँची ॥  
 कहैँ बनेँ छौँडौँ अनुराई, बात नहीं यह कौँची ।  
 सूरदास राधिका सयानी, रूप-रासि-रस-खाँची ॥४९॥

कच री मिले स्याम नहिँ जानौँ ।

तेरी सौँ करि कहति सखी री, अजहूँ नहिँ पहिचानौँ ॥  
 खरिक मिले, की गोरस बँचत, की अबशीँ, की कालि ।  
 नैननि अंतर होत न कयहूँ, कहति कहा री आलि ॥  
 एकौ पल हरि होत न भ्यारे, नीकैँ देखे नाहिँ ।  
 सूरदास-प्रभु दरत न टारैँ, नैननि सदा बसाहिँ ॥५०॥

राधाकृष्ण

स्याम मिले मोहिँ ऐसैँ भाई । मैँ जल कौँ जमुना तट आई ।  
 औचक आएँ तहाँ कन्हआई । देखत ही मोहिनी लगाई ।  
 तबहीँ तैँ तन-सुरति रँवाई । सूँ सारग गईँ भुलाई ।  
 बिलु देखैँ कल परे न भाई । सूर स्याम मोहिनी लगाई ॥

तबहीँ तैँ हरि हाथ बिकागी । देह-गेह-सुधि सबैँ भुलानी ।  
 अंग स्थित नय जैँसेँ पानी । ज्यौँ-न्यौँ करि गृह पहुँची आनी ।  
 बोले तहाँ अचानक बानी । द्वारैँ देखे स्याम बिनानी ।  
 कहा कहुँ सुनि सखी सयागी । सूर स्याम ऐसी भति ठानी ॥

जा दिन तैँ हरि दृष्टि परे री ।  
 ता दिन तैँ मेरे इन नैननि, तुख सुख सब बिसरे री ॥  
 मोहन अंग गुपाल लाल के, प्रेम पियूष भरे री ।  
 वसे उहाँ सुसुकनि-बाँह-लौ, रचि-रुचि भवच करे री-॥  
 पठवति हीँ-मन-तिनहिँ मनावन नि-सिदिन रहत अरे री ।  
 ज्यौँ ज्यौँ जतन करति उजटावति त्यों त्यों उठत खरे री ॥  
 पचिहारी समुन्नाइ ऊँच-निच पुनि-पुनि पाइ परे री ।  
 सो सुख सूर कहाँ लौँ बरनौँ-इक-टक तैँ न टरे री ॥५६॥

जब तौँ प्रीति स्याम सौँ कीन्ही ।

ता दिन तैँ मेरैँ इन नैननि, नैकुहुँ-नीँद न लीन्ही ॥  
 सदा रहैँ मन चाक चढ़ दी, सो और न कछु सुहाइ ।  
 करत उपाइ बहुत मिलिबे कौँ, यहैँ बिचारत जाइ ॥  
 सूर सकल लागति ऐसीयैँ, सो दुख कासौँ कहिये ।  
 ज्यौँ अचेत बालक की-बेदन, अपनेँ हीँ तन सहिये ॥५७॥  
 ना जानौँ तबहीँ तैँ मोकौँ, स्थास कहा धौँ कीन्ही री ।  
 मेरी दृष्टि परे जा दिन तैँ, ज्ञान ध्यान हरि लीन्ही री ॥  
 द्वारैँ आई गएँ औचक हीँ, अँगन हीँ ठाढ़ी री ।  
 मनमोहन-मुख देखि रही तब, काम-बिथा तनु बाढ़ी री ॥  
 नैन-सैन दैँ-दैँ हरि-सो तन, कछु इक भाव बत्तायौ री ।  
 पीतांबर उपरैँना कर गहि अपनेँ-सीस-फिरायौ री ॥  
 लोक-लाज, गुरुजन की संका, कहत न आवैँ बानी री ।  
 सूर स्याम मेरैँ अँगन आएँ, जात बहुत पछितानी री ॥५८॥

मैं अपना मन हरत न जान्यौ ।  
 कीधौं गथौ संग हरि केँ वह, कीधौं पंथ भुलान्यौ ॥  
 कीधौं स्याम हटकि है राख्यौ, कीधौं आपु रसान्यौ ।  
 काहे तैं सुधि करी न मेरी, मोपै कहा रिसान्यौ ॥  
 जबही तैं हरि छाँ हूँ निकसे, वैह तबहिँ तैं ठान्यौ ।  
 सूर स्याम संग चलन कख्यौ मोहिँ, कख्यौ नहीं तब मान्यौ ॥६१॥

स्याम करत हैँ मन की चोरी ।  
 कैसैं मिलत आनि पहिलैँ ही, कहि-कहि बतियाँ भोरी ॥  
 लोक-लाज की कानि गँवाइँ, फिरति गुड़ी बस डोरी ।  
 पंसे दंग स्याम अब सीख्यौ, चोर भयो चित कौ री ॥  
 मानन की चोरी सहि लीन्ही, बात रही यह थोरी ।  
 सूर स्याम भयो निडर तबहिँ तैं, गोरस लेत अँजोरी ॥६०॥

माई कृष्ण-नाम जब तैं खवन सुन्यौ हैँ री, तब तैं भूली  
 री भौन बावरी सी भई री ।  
 भरि भरि आवैं नैन, चित न रहत चैन, बैन नहिँ सुधौँ द्रसा  
 औरहिँ हूँ राई री ॥  
 कौन माता, कौन पिता, कौन भैनी, कौन आता, कौन ज्ञान, कौन  
 ध्यान, मनमथ हई री ।

सूर स्याम जब तैं परै री मेरी डीठि, बाम, काम, घाम, लोक-लाज ✓  
 कुल-कानि नई री ॥६१॥

राधा तैं हरि केँ रंग राँची ।  
 तो तैं चतुर और नहिँ कोऊ, बात कहैं मैँ खाँची ॥  
 तैं उनकौ मन नहीं सुरायौ, ऐसी है तू काँची ।  
 हरि तेरो मन अबह सुरायौ, प्रथम तुहीँ है नाँची ॥  
 तुम अरु स्याम एक हौँ दोऊ, बाकी नाहीँ बाँची । ✓  
 सूर स्याम तेरेँ बस, राधा, कइति लोक मैँ खाँची ॥६२॥

तुम जानति राधा है छोटी ।  
 चतुराई अँग-अँग भरी है, पूरन-ज्ञान, न बुधि की मोटी ॥  
 हमसौँ सदा दुराव कियौ इहिँ, बात कहै मुख चोटी-पोटी ।  
 कबहुँ स्याम तैं नैँ कुन बिकुरति, किये रहति हमसौँ हठ ओटी ॥

## राधाकृष्ण

नन्दन याही कैँ बस हैँ, बिबस देखि बेँदी छवि-चोटी ।  
दास-प्रभु वैँ अति खोटे, यह उनहूँ तैँ अतिहीँ खोटी ॥६३॥  
सुनहु सखी राधा सरि को है ।

जो हरि है रतिपति मनमोहन, याकौँ मुख सो जोहै ॥  
जैसौँ स्याम नारि यह तैसी, सुंदर जोरी सोहै ।  
यह द्वादस वहऊँ दस द्वैँ कौँ, ब्रज-जुवतिनि मन मोहै ॥  
मैँ इनकैँ घटि बढि नहिँ जानति, भेद करैँ सो को है ।  
सूर स्याम नागर, यह नारारि, एक प्राण तन दो है ॥६४॥  
राधा नँद-नँदन अनुरागी ।

भय चिंता हिरदैँ नहिँ एकौँ, स्याम रंग-रस पागी ॥  
हृदय चून रँग, पय पानीँ ज्यैँँ दुविधा दुहुँ की भागी ।  
तन मन-प्राण समर्पन कीन्हौँ, अंग-अंग रति खागी ॥  
ब्रज-बनिता अवलोकन करि-करि, प्रेम-बिबस तनु त्यागी ।  
सूरदास-प्रभु सौँँ चित लाग्यौँ सोबत तैँँ मनु जागी ॥६५॥  
नि मैँँ बसैँ, जिय मैँँ बसैँ, हिय मैँँ बसत निखि दिवस प्यारौँ ।  
बसैँ, मन मैँँ बसैँ, रसना हूँ मैँँ बसैँ नंदवारौँ ॥  
मैँँ बसैँ, बुधिहूँ मैँँ बसैँ, अंग-अंग बसैँ सुकुटवारौँ ।  
बन बसैँ, घरहुँ मैँँ बसैँ, संग ज्यैँँ तरंग जल न न्यारौँ ॥६६॥

तुम कुल बधूँ निलज जनि हूँ हौँ ।

यह करनी उनहीँँ कौँँ छाजैँ, उनकैँँ संग न जैँ हौँ ॥  
राधा-कान्ह-कथा ब्रज-घर-घर, ऐसेँँ जनि कहवैँ हौँ ।  
यह करनी उन नईँँ चलाईँ, तुम जनि हमहिँँ हँँ सँ हौँ ॥  
तुम हौँ बड़े महर की बेटी, कुल जनि नाउँँँ धरैँ हौँ ।  
सूर स्याम राधा को भहिँमा, यहैँँ जानि सरमैँ हौँ ॥६७॥  
यह सुनि कैँँ हँँसि मौन रहींँ री ।

ब्रज उपहास कान्ह-राधाकौँ, यह भहिँमा जातीँ उनहीँँ री ॥  
जैँसी बुद्धि हृदय हैँ इनकैँँ, तैँसीयैँँ मुख बात कहीँ री ।  
रवि कौँ तेज उलूक न जानैँ, तरनि सदा पूरन न भहीँँ री ॥  
विष कौँ कीट बिपहिँँँ सखि मानैँ, कहा सुधा रसहीँँ री ।  
सूरदास तिब-तेब-सवादी, स्वाद कहा जानैँँ घतहीँँ री ॥६८॥

## सहसा गेट

इततेँ राधा जाति जमुन-तट, उनतेँ हरि आवत घर केँ  
 कटि काङ्गनी, बेप गटवर कौ, बीच मिली सुरलीधर केँ ।  
 चितेँ रही मुख इंदु मनोहर, वा छवि पर वारति तन केँ  
 दूरिहु तेँ देवत ही जाभे, प्रारनाथ सुंदर घन केँ ।  
 रोम पुलक, गदगद बानी कही, कहौ जात चोरे मन केँ ।  
 सूरदास-प्रभु चोरन सीखे, माखन तेँ चित वित-धन केँ ॥

भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हे ।

बाँह मरोरि जाहुगें कैसेँ, मैं तुम नीकेँ चीन्हे ॥  
 माखन-चोरी करत रहे तुम, अब भइ मन के चोर ।  
 सुनत रही मन चोरत हैँ हरि, प्रगट लिधौ मन मोर ॥  
 ऐसेँ दीठ भए तुम डोलत, निदरे बज की नारि ।  
 सूर श्याम मोहँ निदरौगे, देहुँ प्रेम की गारि ॥७१॥

यह बल केतिक जादौ राइ ।

तुम जु समकि केँ मो अबला सौँ, चले बाहँ छुटकाइ ॥  
 कहियत हो अति चतुर सकल अंग आवत बहुत उपाइ ।  
 तौ जागौँ जौ अब एकौ छन, सकौँ हृदय तेँ जाइ ॥  
 सूरदास स्वामी श्रीपति केँ, भावत अंतर भाइ ।  
 सहि न सके रति-बचन, उलटि हँसि लीन्ही बंठ लगाइ ॥७१॥

कुल की लाज अकाज कियो ।

तुम बिलु स्यास सुहात नहीँ कछु, कहा करौँ अति जरत हियौ ॥  
 आपु गुप्त करि राखौ मोकेँ, मैँ आयसु सिर मानि लियौ ।  
 देह-गेह-सुधि रहति बिसारे, तुम तेँ हितु नहिँ और बियौ ॥  
 अथ मोकेँ चरननि तर राखौ, हँसि नंद नंदन अंग छियौ ।  
 सूर श्याम श्रीमुख की बानी, तुम पैँ प्यारी वसत जियौ ॥७२॥

मातु पिता अति त्रास दिखावत ।

आता मोहिँ मारन केँ धिरवै, देखैँ मोहिँ न भावत ।  
 जननी कहति बड़े की बेटी, तोकेँ लाज न आवति ।  
 पिता कहैँ कैसेँ कुल उपजी, मनहींँ मन रिस पावति ॥  
 भासिनी देखि देति मोहिँ गारी, काहैँ कुलाहिँ लजावति ।  
 सूरदास-प्रभु सौँ यह कहि-कहि, अपनी विपति जनावति ॥७३॥

सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन ।

बिमुख जननि की संगति कौ तुल्य, कब धौँ करिहौ मोचन ॥

भवन मोहिँ भाठी सौ लागत, मरति सोचहीँ सोचन ।

ऐसी गति मेरी तुम आगैँ, करत कहा जिय दोचन ॥

धिक वै मातु-पिता, धिक भ्राता, देत रहत मोहिँ खोँचन ।

सूर स्याम मन तुमहिँ लगान्यौ, हरद-चून-रँग-रोचन ॥७४॥

कुल की कानि कहौ लगे करिहौँ ।

तुम आगैँ मैँ कहौँ जु सौँची, अब काहूँ नाहिँ डरिहौँ ॥

लोरा कुटुंब जरा केजे कहियत, पेला सबहिँ निदरिहौँ ।

अब यह दुख सहि जात न मोपैँ, बिमुख बचन सुनि सरिहौँ ।

आपु सुखी तौ सब नीके हैँ, उनके सुख कह सरिहौँ ।

सूरदास प्रभु चतुर-सिरोमनि अबकेँ हैँ कहुँ लरिहौँ ॥७५॥

प्राननाथ हो मेरी सुरति किन करौ ।

मैँ जु दुख पावति हैँ दीनचाल, कृपा करौ, मेरौ कामदंड-दुख औ

बिरह हरौ ॥

तुम बहु रमनी रमन सो तौ जानति हैँ याही के जु धोखैँ हौ

मोसैँ काहैँ लरौ ।

सूरदास-स्वामी तुम हौ अंतरजामी सुनौ मनला बाचा मैँ ध्यान

तुम्हरोई धरौँ ॥७६॥

हैँ या माया ही लागी तुम कत तोरत ।

मेरौ तौ जिय तिहारे चरननि ही मैँ लाग्यौ, धीरज क्याँ रहै रावरे

मुख मोरत ॥

कोऊ लै बनाइ बातैँ, मिलवति तुम आगैँ, सोई किन आइ मोसैँ

अब हैँ जोरत ।

सूरदास-पिय, मेरे तौ तुमहिँ हौ जु जिय, तुम बिनु देखैँ मेरौ

हिय ककोरत ॥७७॥

विहँसि राधा कृष्ण अंक लीन्ही ।

अधर सौँ अधर जुरि, नैन सौँ नैन मिलि, हृदय सौँ हृदय

लगि, हरप कीन्ही ॥

कंड भुज-भुज जोरि, उलँग लीन्ही नारि, भुवज-दुख टारि, सुख

दियौ भारी ।

हरपि बोलें स्याम, कुञ्ज-वन-घन-धाम, तहाँ हम तुम संग मिलै  
प्यारी ।

जाहु गृह परम धन, हमहुँ जैहँ सदन, आइ कहुँ पास मोहिँ सैन  
देहौ ।

सूर यह भाव दें, तुरतहीँ गवन करि, कुञ्ज-गृह-सदन तुम जाइ रहौ ॥५८॥ ✓

व्याज मिलन : मोति-सुरि प्रह्वग

सुनि री मैया कालिइहीँ, मोतिसरी गँवाई ।  
सखिनि मिलै जमुना गई, धौँ उनहिँ सुराई ॥  
कीधौँ जलही मैँ गई, यह सुधि नहिँ मेरेँ ।  
तब तँ मैँ पछिताति हौँ, कहति न डर तेरेँ ॥  
पलक नहीँ निशि कहुँ लागी, मोहिँ सपथ तिहारी ।  
इहि डर तँ मैँ आजुहीँ, अति उठी सवारी ।  
महरि सुनत चकित भई, मुख उवाच न आवै ।  
सूर राधिका गुन भरी, कोउ पार न पावै ॥५९॥

सुनि राधा अब तोहिँ त पर्येहँ ।

और हार चौकी हमेल अब, तेरेँ कंठ न नेहँ ॥  
लाख टका की हानि करी तँ, सो जब तोसैँ लैहँ ॥  
हार बिना ल्याएँ लड़बौरी घर नहिँ पैठन देहँ ॥  
जब देखैँगी वहे मोतिसरि, तबहीँ तौ सचु पैहँ ।  
नातरु सूर जन्म भरि तेरो, नाउँ नहीँ मुख लैहँ । ६०॥

जैहै कहाँ मोतिसरि मोरी ।

अब सुधि भई लई वाही नैँ, हँसति चली वृषभानु-किसोरी ॥  
अबहीँ मैँ लीन्हे आवति हौँ, मेरेँ संग आवैँ जनि को री ।  
देखौँ धौँ कह करिहँ—चाकौँ, बड़े लोग—सीखत हँ चोरी ॥  
मोकैँँ आसु अवेर लागि है, छुड़ौँँगी घर-घर ब्रज खोरी ।  
सूर चली निधरक हँ सब सौँ, चतुर राधिका बातनि भोरी ॥६१॥

नंद-महर-घर के पिछवारैँ, राधा आइ बतानी ।  
मनौँ अब-दल-मौर देखि के, कुहुकी कोकिल बानी ॥  
झूठेहिँ नाम लेति ललिता कौँ, काहँ जाहु परानी ।  
शुन्दावन-मग जाति अकेली, सिर लै दही-मथानी ॥



मैं बैठी परखति हूँ रहैँ, स्याम तबहिँ तिहिँ जानी ।

कोक-कला-गुन-आगरि नागरि, सूर चतुरङ्ग ठानी ॥८२॥

सैन द्वै नागरी गाई बन कैँ ।

तबहिँ कर-कौर दियो डारि, नहिँ रहि सके, ग्वाल जेँ वत तजे,

मोह्यौ उनकैँ ॥

चले अकुलाइ बन घाइ, ब्याइ गाइ देखिहैँ जाइ, मन हरप  
कीन्हौ ।

प्रिया निरखति पंथ, मिलैँ कब हरि कंत, गए इहिँ अत हँसि  
अंक लीन्हौ ।

अतिहिँ सुख पाइ अतुराइ मिले धाइ दोउ, मनौ अति रंक नव-  
निधिहिँ पाई ।

सूर प्रभु की प्रिया राधिका अति नवल, नवल नँद-लाल के मनहिँ  
भाई ॥८३॥

दीजै कान्ह कोंधे कौ कंबर ।

नान्ही नान्ही बूदनि वरपन लाग्यौ, भीजत कुसुंभी अंबर ॥

बार-बार अकुलाइ राधिका, देखि, मेघ-आडंबर ।

हँसि हँसि रीफि बैठि रहे दोऊ, ओढ़ि सुभग पीतंबर ॥

सिध सनकादिक नारद-सारद, अंत न पावै तुंबर ।

सूर स्याम-गति लखि न परति कहु, खात ग्वाल संग संबर ॥८४॥

कान्ह कह्यौ बन रैनि न कीजै, सुनहु राधिका प्यारी ।

अति हित सौँ उर लाइ कह्यौ, अब भवन आपनैँ जा री ॥

मातु-पिता जिय जानै न कोऊ, गुप्त-प्रीति रस भारी ।

कर तैँ कौर डारि मैँ आयौ, देखत दोउ महतारी ॥

तुम जैसी मोहिँ प्यारी लागति, चंद चकोर कहा री ।

सूरदास-स्वामी इन बातनि, नागरि रिझई भारी ॥८५॥

मैं बलि जाउँ कन्हैया की ।

करतैँ कौर डारि उठि धायौ, बात सुनी बन गैया की ॥

धौरी गाइ आपनी जानी, उपजी प्रीति लवैया की ।

तातैँ जल प्रमोइ पग घोवति-स्याम देखि हित मैया की ॥

जो अनुराग जसोदा केँ उर मुख की कन्हैया की

राधा अतिहि चतुर प्रवीन ।  
 कृष्ण कौं सुख दे चली हैंसि, हंस-गति कटि छीन ॥  
 हार कैं भिस इहाँ आई, स्याम मनि-कैं काज ।  
 भयौ सब पूरन मनोरथ, मिले श्रीबजरज ॥  
 गौंठि-आँचर छोरि कै, मोतिसरी लीन्ही हाथ ।  
 सखी आवति देखि राधा, लई ताकौं साथ ॥  
 जुवति बृकति कहौं नाभरि, निसि गई इक जाम ।  
 सूर व्यौरो कहि सुनायौ, मै गई तिहिँ काम ॥८७॥

करति अचसेर वृषभानु-नारी ।

प्रात तैं गई, बासर गायौ बाँति सब, जाम निसि गई, घौं कहौं  
 बारी ॥

हार कैं त्रास मै कुँवरि त्रासी बहुत, तिहिँ डरनि अजहुँ नहि  
 सदन आई ।

कहाँ मै जाउँ, कह घौं रही रुसि कै, सखिनि सौँ कहति कहुँ  
 मिली माई ।

हार बहि जाइ, अति गई अकुलाई कै, सुता कैं नाउँ इक वहे  
 मरै ।

सूर यह बात जौ सुनै अबहीं महर, कहेँ ये दंग तेरे ॥८८॥

राधा डर डराति घर आई ।

देखत हीं कीरति महतारी, हरषि कुँवरि उर लाई ॥

धीरज भयौ सुता-माता जिय, दूरि गयौ तनु-सोच ।

मेरी कौं मै काहँ त्रासी, कहा कियौ यह पोच ॥

लै री मैया हार मोतिसरी, जा कारन मोहिँ त्रासी ।

सूर राधिका के गुन ऐसे, मिलि आई अविनासी ॥८९॥

परम चतुर वृषभानु-दुलारी ।

यह मति रची कृष्ण मिलिबेकी, परम पुनीत महा री ॥

उत सुख दियौ नंद-नंदन कौं, इतहिँ हरष महतारी ।

हार इतौ उपकार करायौ, कबहुँ न उर तैं टारी ॥

जे सिव-सनक-सनातन दुर्लभ, ते बस किये कुमारी ।

सूरदास-प्रभु-कृपा अगोचर, निगमनि हू तैं न्यारी ॥९०॥

राधाकृष्ण

प्रीति के बस्य ये हैं सुरारी ।

प्रीति के बस्य नटवर सुभेषसहिँ धर यौ, प्रीति बस करज गिरिराज  
धारी ।

प्रीति के बस्य ब्रज भए माखन चोर, प्रति बस्य ढाँवरि बँधार्ई ।

प्रीति के बस्य गोपी-रमन नाम प्रिय, प्रीति-बस जमल तरु  
मोच्छदाई ।

प्रीति-बस नंद-बंधन बरुन-गृह गए, प्रीति के बस्य बन-धाम कामी ।

प्रीति के बस्य प्रभु सूर त्रिभुवन विदित, प्रीति बस सदा राधिका  
स्वामी ॥६१॥

— सुन-क सुहृद-धर-के-त-... ॥६२॥

आजु सखी अरुनोदय मेरे, नैननि कौँ घोख भयौ ।

की हरि आजु पंथ इहिँ गवने, स्याम जलद की उनयौ ॥

की बग पाँति भौँति, उर पर की मुकुट-माल बहु मोल ।

की धौँ मोर मुदित नाचत, की बरह-मुकुट की डोल ॥

की घनघोर गँभीर प्रात उठि, की ग्वालनि की डेरनि ।

की दामिनी कौँ दुति चहुँ दिसि, की सुभग पीत पट फेरनि ॥

की बनमाल लाल-उर राजति, की सुरपति-धनु चारु ।

सूरदास-प्रभु-रस भरि उमँगी, राधा कहति विचार ॥६२॥

राधिका हृदय तँ घोख टारौ ।

नंद के लाल देखे प्रात-काल तँ, मँघ नहिँ स्याम तनु-छवि बिचारौ ।

इंद्र धनु नहीं बन दाम बहु सुमन के; नहीं बग पाँति वर मोति-माला ।

सिखी वह नहीं सिर मुकुट सीखंड पड़, तड़ित नहिँ पीत पट-छवि

रसाला ॥

मंद गरजन नहीं चरन नूपुर-सबद, भोरही आजु हरि गवन कीन्हौ ।

सूर-प्रभु-भामिनी भवन करि गवन, मन रवन दुख के दवन जानि

लीन्हौ ॥६३॥

नेष्टा

धन्य धन्य ब्रजभानु-कुमारी ।

धनि माता, धनि पिता तिहारे तोसो जाई बारी ॥

धन्य दिबस, धनि निसा तबहिँ की, धन्य घरी, धनि जाम ।

धन्य कान्ह तेरै बस जे है धनि कीन्हे बस श्याम ।

धनि मात, धान रति धनि तरौ हित धन्य भक्ति धनि भाउ  
सूर स्याम पति धन्य नारि तू, धनि-धनि एक सुभाउ ॥६१॥

तोहिँ स्याम हम कहा दिखावै ।

तुमतै न्यारे रहत कहुं न वै, नैकु नहीं बिसरावै ॥  
एक जीव देही द्वै राची, यह कहि कहि जु सुनावै ।  
उनकी पदतर तुमकौ दीजै, तुम पदतर वै पावै ॥  
अमृत कहा अमृत-गुन प्रगटै, सो हम कहा बतावै ।  
सूरदास गूंगे कौ गुर ज्यौ, बूझति कहा बुझावै ॥६२॥

सुनि राधा यह कहा विचारै ॥

वै तैरे तू उनकै रँग, अपनी मुख क्यौ न निहारै ॥  
जो देखै तौ छाँद आपनी, स्याम-हृद ह्यौ छाया ।  
ऐसी दसा नंद-नंदन की, तुम दोउ निर्मल काया ॥  
नीलांबर स्यामल तनु की छबि, तुम छबि पीत सुवास ।  
घन-भीतर दामिनी प्रकासित, दामिनि घन चहुँ पास ॥  
सुनि री सखी बिलख कहौ तोसौ चाहति हरि कौ रूप ।  
सूर सुनहु तुम दोउ सम जोरी, एक स्वरूप अतूप ॥६६॥

पिय तैरे बस यौ री माई ॥

ज्यौ संगहिँ संग छाँह देह-बस, प्रेम कह्यौ नहिँ जाई ॥  
ज्यौ चकोर बस सरद-चंद्र कै, चक्रवाक बस-भान ।  
जैसे मधुकर कमल-कोस बस, ज्यौ बस स्याम सुजान ॥  
ज्यौ चातक बस स्वाति बँद कै, तन कै बस ज्यौ जीय ।  
सूरदास-प्रभु अति बस तैरे, ससुभु देखि श्रौ हीय ॥६७॥

लत्रमान लाला

मैं अपने जिय राख कियौ ।

वै अंतरजाभी सब जानत, देखत ही उन चरचि लियौ ।  
कास्यौ कहौ मिलावै को अब, नैकु न धीरज धरत जियौ ।  
वै तौ निहुर भए या बुधि सौ, अहंकार फल यह दियौ ॥  
तब आपुन कौ निहुर करावति, प्रीति सुमिरि भरि लेते हियौ ।  
#सूर स्याम प्रभु वै बहु नायक, मोसी उनकै कोटि तियौ ॥६८॥

महा बिरह-वन मोक परी ।

चकित भई ज्यौ चित्र-पूतरी, हरि-भारग बिसरी ॥

सँग बटपार-गर्ब जन्म देख्यौ, साथी छोड़ि पराने ।  
 स्याम-सहर अँग-अँग-माधुरी, तहँ वै जाइ लुकाने ।  
 यह बन माँझ अहेली व्याकुल, संपति गर्ब छुँदायौ ।  
 सूर स्याम-सुधि टरति न उर तँ, यह मनु जीव बन्नायौ ॥६६॥

राधा-भवन सखी मिलि आई ।

अति व्याकुल सुधि-बुधि कछु नाहीं, देह दसा बिसराई ॥  
 बौह गही तिहिँ बूझन लागीँ, कहा भयो री माई ।  
 ऐसी बिबस भई तू काहेँ, कहाँ न हमहिँ सुनाई ॥  
 कालिहिँ और बरन तोहिँ देखी, आजु गई सुरमाई ।  
 सूर स्याम देखे की बहुरौ, उनहिँ ठगौरी लाई ॥१००॥

अब मैँ तोसौ कहा दुराऊँ ।

अपनी कथा, स्याम की करनी, तो आगैँ कहि प्रगट सुनाऊँ ॥  
 मैँ बैठी ही भवन आपनैँ, आपुन द्वार दियो दरसाऊँ ।  
 जानि लई मेरे जिय की उन, गर्ब-प्रहारन उनको नाऊँ ॥  
 तबहीं तँ व्याकुल भई डोलाति, चित न रहै कितनौ समुझाऊँ ।  
 सुनहु सूर गृह बन भयो भोकीँ, अब कैसँ हरि-दरसन पाऊँ ॥१०१॥

हमरी सुरति बिसारी बनवारी, हम सरबस दे हारी ।  
 पै न भए अपने सनेह बस, सपनेहु गिरधारी ॥  
 वै मोहन मधुकर समान सखि, अनगन बली-धारी ।  
 व्याकुल बिरह व्यापि दिन दिन हम, नीर जु नैननि हारी ॥  
 हम तन मन दे हाथ बिकानी, पै अति निदुर सुरारी ।  
 सूर स्याम बहु रमनि रमन, हम इक व्रत, मदन-प्रजारी ॥१०२॥

मैं अपनी सी बहुत करी री ।

मोसौँ कहा कहति तू माई, मन कैँ सँग मैँ बहुत लरी री ॥  
 राखौँ हटकि उनहिँ कौ आवत वाकीँ मुँसियैँ परनि परी री ।  
 मोसौँ वैर करै रति उनसौँ, मोकीँ राख्यौँ द्वार खरी री ॥  
 अजहूँ मान करौँ, मन पाऊँ, यह कहि इत-उत चितैँ डरी री ।  
 सुनहु सूर पाँचनि मत एकैँ, मैँ ही मोही रही परी री ॥१०३॥

✓ भूलि नहीं अब मान करौँ री ।

जातैँ होइ अकाज आपनौँ, काहेँ ब्रथा मरौँ री ॥

ऐसे तन में गर्व न राखौ, चिंतामनि बिसरौ री ।  
 ऐसी बात कहै जो कोऊ, ताकै संग लरौ री ॥  
 आरजबंध चलै कह सरिहै. स्यामहिं संग फिरौ री ।  
 सूर स्याम जउ आपु सरथी, दरसन नैन भरौ री ॥१८॥  
 माई मेरौ मन पिय सौं यौं लाग्यौ, ज्यौं संग लागी छौंहि ।  
 मेरौ मन पिय जीव बसत है, पिय जिय भो मै नाहि ॥  
 ज्यौं चकोर चंदा कौं चिरखत, इत-उत दृष्टि न जाइ ।  
 सूर स्याम त्रिनु छिन-छिन जुग सम, क्यौं करि रैन बिहाइ ॥१९॥

सूरी को अर्थ - सूरसिंह के अद्भुत एक अनूपम बाग ।

५२२१ जुगल कमल पर गज बर क्रीडत, तापर सिंह करत अनुराग  
 हरि पर सुरबर, सर पर गिरिवर, गिरि पर फूले कंज पराग  
 रुचिर कपोत बसत ता ऊपर, ता ऊपर अमृत फल लाग  
 फूल पर पुहुप, पुहुप पर पल्लव, ता पर सुक, पिक, मृगा-मद काग  
 खंजन, घनुव, चंद्रमा ऊपर, ता ऊपर इक मनिधर नाग  
 अंग-अंग प्रति और-और छवि, उपमा ताकौं करत न त्याग  
 सूरदास प्रभु पिचौ सुधा-रस, मानौ अधरनि के बड़ भाग ॥

भुज भरि लई हिरदय लाइ ।

—बिरह व्याकुल देखि बाला, नैन दोउ-भरि आइ ॥

रैनि-बासर-बीचही मै दोउ गाए सुरकाइ ।

मनौ वृच्छ तमाल बेली-कनक, सुधा सिंचाइ ॥

हरप उहडह मुसुकि फूले, प्रेम फलनि लगाइ ।

काम मुग्धनि बेलि तरु की, तुरत ही बिसराइ ॥

देखि ललिता-मिलन वह आनंद उर न समाइ ।

—सूर के प्रभु स्याम स्यामा, त्रिविध ताप नसाइ ॥१०७॥

—ललिता प्रेम-बिबस भई भारी ।

वह चितबनि, वह मिलनि परस्पर अति सोभा वर नारी ॥

इकटक अंग-अंग अवलोकति, उत बस भए बिहारी ।

वह आतुर छवि लेत देत वै, इक तै इक अधिकारी ॥

ललिता संग सखिनि सौं भापति, देखौ छवि पिय-प्यारी ।

सुनहु सूर ज्यौ होम अगिनि घृत ताहू सै यह न्यारी ३

राधेहिँ मिलेहुँ प्रतीति न आवति ।

जदपि नाथ-विश्रु बदन बिलोकत, दरसन कौ सुख पावति ॥  
 भरि-भरि लोचन रूप-परम-निधि, उरमें आनि दुरावति ।  
 बिरह-विकल मति दृष्टि दुहुँ दिसि, संचि सरया ज्याँ धावति ॥  
 चितवत चकित रहति चित अंतर, नैत निसेप न लावति ।  
 सपनौ आहि कि सख्य ईस यह, बुद्धि बितर्क बनावति ॥  
 कबहुँ क करति बिचार कौन हौँ को हरि कैँ हिय भावति ।  
 सूर प्रेम की बात अटपटी, मन तरंग उपजावति ॥१०६

✓ स्याम भए राधा बस ऐसैँ ।

चातक स्वाति, चक्रोर चंद ज्यौँ चक्रवाक रवि जैसैँ ॥  
 जाद कुरंग. मीन जल की गति, ज्यौँ तनु कैँ बस छाया ।  
 इकटक नैन अंग-छवि मोहे, थकित भए पति जाया ॥  
 उठैँ उठत, बैठैँ बैठत हैँ, चलैँ चलत सुधि नाहीँ ।  
 सूरदास बड़भागिनि राधा, समुक्ति मनहिँ मुसुकाहीँ ॥११०

निरखि पिय-रूप तिय चकित भारी ।

किधौँ वै पुरुष मैँ नारि, की वै नारि मैँ ही हौँ पुरुष तन सुधि  
 बिसारी ॥  
 आपु तन चितैँ सिर मुकुट, कुंडल खवन, अबर मुरली, माल-  
 बन बिराजैँ ।  
 उतहिँ पिय-रूप सिर माँग बेनी सुभग, भाल बेँदी-विंदु महा  
 छाजैँ ॥  
 नागरी हठ तजौँ, कृपा करि मोहिँँ भजौँ, परी कह चूक सो कहौँ  
 प्यारी ।  
 सूर नागरी प्रभु-बिरह-रस मगन भईँ, देखि छवि हँसत गिरिराज-  
 धारी ॥१११॥

गोपिका

नंद-नँदन तिय-छवि तनु काछे ।

मनु गोरी सँवरी नारि दोउ, जाति सहज मैँ आछे ॥  
 स्याम अंग कुसुमी नईँ सारी, फल-गुंजा की भाँति ।  
 इत नागरी नीलांबर पहिरे, जनु दामिनि घन काँति ॥

आतुर चलें जात बन-धामहिँ, मन अति हरष बढ़ाए ।  
सूर स्वाम वा छवि कौँ नागारि निरखति नैन सुराए ॥११२॥

\*स्थामा स्वाम कुंज वन आवत ।

भुज भुज-कंठ परस्पर दीन्हे, यह छवि उनहीं पावत ॥  
इततैँ चंद्रावली-जाति ब्रज, उततैँ ये दोउ आए ।  
दूरिहिँ तैँ चितवति उनहीं तन, इक टक नैन लगाए ॥  
एक राधिका दूसरि को है, याकौँ नहि पहिचानौँ ।  
ब्रज-वृषभानु-पुरा-जुवतिनि कौँ, इक-इक करि मैँ जानौँ ॥  
यह आई कहुँ और गाँव तैँ, छवि साँवरी सलोनी ।  
सूर आजु यह नई बतानी, एको अँग न बिलोनी ॥११३॥

यह वृषभानु-सुता वह को है ।

याकी सरि जुवती कोउ नाहीँ, यह त्रिभुवन-मन मोहै ॥  
अति आतुर देखन कौँ आवति, निकट जाइ पहिचानौँ ।  
ब्रज मैँ रहनि किधौँ कहुँ औरे, बूभे नैँ तब जानौँ ॥  
यह मोहिनी कहौँ तैँ आई, परम सलोनी नारी ।  
सूर स्वाम देखत सुसुक्यानी, करी चतुरई भारी ॥११४॥

कहि राधा ये को हैँ री ।

अति सुंदरि साँवरी सलोनी, त्रिभुवन जन मन मोहैँ री ॥  
और नारि इनकी सरि नाहीँ, कहौँ न हम-तन जोहैँ री ।  
काकी सुता, बधू हैँ काकी, काकी जुवती धौँ हैँ री ॥  
जैसी तुम तैसी हैँ येऊ, भली बनी तुमसौँ हैँ री ।  
सुनहुँ सूर अति चतुर राधिका, येइ चतुरनि की नौँ हैँ री ॥११५॥

मथुरा तैँ ये आई हैँ ।

कछु संबंध हमरोँ इनसौँ, तातैँ इनहिँ बुलाई हैँ ॥  
ललिता संग गई दधि बेँचन, उनहीं इनहिँ चिन्हई हैँ ।  
उहैँ सनेह जानि री सजनी, आजु मिलन हम आई हैँ ॥  
तब हीँ की पहिचानि हमारी, ऐसी सहज सुभाई हैँ ।  
सूरदास मोहिँ आवत देखी, आपु संग उठि धाई हैँ ॥११६॥

इनकोँ ब्रजहीं क्यों न बुलावहु ।

की वृषभानु पुरा की गोकुल, निकटहिँ आनि बसाचहु ॥



येऊ नवल, नवल तुमहूँ हौ, मोहन कौँ दोउ भावहु ।  
 मोकौँ देखि क्रियो अति घँघट, काहें न लाज छुड़ावहु ॥  
 यह अचरज देख्यो नहिँ कत्रहूँ, जुवतिहिँ जुवति दुरावहु ।  
 सूर सखी राधा सौँ पुनि पुनि, कइति जु हमहिँ मिलावहु ॥११७॥  
 मथुरा में बस वास तुम्हारौ ?

राधा तैँ उपकार भयो यह, दुर्लभ इरसन भयो तुम्हारौ ॥  
 बार-बार कर गहि गहि निरखति, बँधट-घोट करौ किन न्यारौ ।  
 कबहुँक कर परसति कपोल छुइ, चुटकि खेंति छाँ हमहिँ निहारौ ॥  
 कहुँ मैँ हूँ पहिचानति तुमकौँ, तुमहिँ मिलाऊँ नंद दुलारौ ।  
 काहें कौँ तुम सकुचति हो जू, कहौ काहें है नाम तुम्हारौ ॥  
 ऐसी सखी मिली तोहिँ राधा, तौ हमकोँ काहें न बिसारौ ।  
 सूरदास दंपति मत जान्यौ, यात्रैँ कैमें होत उवारौ ॥११८॥  
 ऐसी कुँवरि कहाँ तुम पाई ।

राधा हूँ तैँ नल-सिख सुंदरि, अब लौँ कहाँ दुराई ॥  
 काकी नारि, कौन की बेटी, कौन गाउँ तैँ आई ।  
 देखी सुनी न ब्रज, बृंदावन, सुधि-डुधि हरति पराई ॥  
 धन्य सुहाग भाग याकौँ, यह जुवतिनि की मनभाई ।  
 सूरदास-ग्रहु हरपि मिले हैंति, लौ उर कंठ लगाई ॥११९॥  
 नंद-नंदन हँसे नागरी-मुख चिते, हरधि अंदाजर्ला कंठ लाई ।  
 म भुज रवति, दच्छिन भुजा सखी पर, चले बन-धाम सुख कहि  
 न जाई ॥

नौ बिबि दामिनी बीच नव घन सुभग, देखि छवि काम रति-  
 सहित लाजैँ-

कधौँ कंचन-लता बीच सु तमाल तरु, मामिनिनि बीच गिरिधर  
 बिराजैँ ।

ए गृह कुंज, अलि गुंज, सुभननि पुंज, देखि आनंद भरे सूर-स्वामी ।  
 अधिका रवन, जुवती-रवन, मन-रवन निरखि छवि होत मन-

कास कामी ॥१२०॥

तीला

मोहिँ छुवौँ जनि दूर रहौँ जू ।

जाकौँ हृदय लगाइ लयौ है, ताकी बाहँ राहौँ जू ॥

तुम सर्वज्ञ और सब मूरख, सो रानी अरु दासी ।  
मैं देखत हिरदय यह वैठी. हम तुमको भई हँसी ॥  
बाहँ गहत कछु सरम न धावति, सुख पावत मन माहीं ।  
सुनहु सूर मो तन यह इकटक, चितवति, डरपति नाही ॥१२१॥

कहा भई धनि बावरी, कहि तुमहि सुनाऊँ ।

तुम तैं को है भावती जिहि हृदय बसाऊँ ॥  
तुमहि खवन, तुम नैन हौ, तुम प्रान-अधारा ।  
वृथा क्रोध तिय क्यों करौ, कहि बारंबारा ॥  
सुज गहि ताहि बतावहु, जेहि हृदय बतावति ।  
सूरज प्रभु कहे नागरी, तुम तैं को भावति ॥१२२॥

रिनहिं निरखि प्यारी हँसि दीन्हौ ।

रीकं स्याम अंग-अंग निरखत, हँसि नागरी उर लीन्हौ ॥  
आलिंगन द्वै अधर दसन खँडि, कर गहि चिबुक उठावत ।  
नासा सौँ नासा लै जोरत, नैन नैन परसावत ॥  
इहिं अंतर प्यारी उर निरख्यौ, कम्कभि भई तब न्यारी ।  
सूर स्याम सोकोँ दिखरावल, उर क्याए धरि प्यारी ॥१२३॥

मान करौ तुम और सनाई ।

कोटि करौ एकै पुनि हैहौ, तुम अरु मोहन माई ॥  
मोहन सो सुनि नाम खवनहीं, मगन भई सुकुमारी ।  
मान गयौ, रिस गई तुरतहीं, लजित भई मन भारी ॥  
घाइ मिली दूतिका कंड सौँ, धन्य-धन्य कहि बानी ।  
सूर स्याम बन धाम जानिकै, दरसन कौँ अतुरानी ॥१२४॥

चलौ किन मानिनि कुंज-कुटीर ।

तुव बिलु कुँवर कोटि बनिता तजि, सहत मदन की पीर ॥  
गदगद स्वर संप्रम अति आतुर, खवत सुलोचन नीर ।  
कासि कासि ब्रुपभानु नंदिनी, बिलरत बिपिन अधीर ॥  
वंसी बिसिप, माल ब्यालावलि, पंचानन पिक कीर ।  
मलयज गरज, हुतासन मास्त, साखामृग रिपु चीर ॥  
हिय मै हरषि प्रेम अति आतुर, चतुर चली पिय-तीर ।  
सुनि मन्वमीत मन्त्र के पिंजर सूर सुरति रनधीर ॥१२५॥

स्याम नारि कैँ बिरह भरे ।

कबहुँक बैठत कुंज द्रुमनि तर, कबहुँक रहत खरे ॥  
कबहुँक तनु की सुरति बिसारत, कबहुँक तनु सुधि आवत ।  
तब नागरि के गुनहिँ विचारत, तेई गुन गनि गावत ।  
कहूँ सुकुट, कहूँ मुरलि रही तिरि, कहूँ कटि पीत पिछौरी ।  
सूर स्याम ऐसी गति भीतर, आई दूतिका दौरी ॥१२६

—धनि-वृषभानु-सुता बड़ भागिनि ।

कहा निहारति अंग अंग-छबि, धन्य-स्याम-अनुरागिनि ॥  
और त्रिया नख सिख निंगार सजि, तँरँ सहज न पूरँ ।  
रति, रंभा, उरबसी, रमा सी, तोहिँ निरखि मन झूरँ ॥  
ये सब कंत सुहागिनि नाहीं, तू है कंत-पियारी ॥  
सूर धन्य तेरी सुंदरता, तोसी और न नारी ॥१२७

सँग राजित वृषभानु कुमारी ।

कुंज-सदन कुसुमनि सेज्या पर, दंपति खंभा भारी ॥  
आलस भरे मगन रस दोऊ, अंग अंग-प्रति जोहत ।  
मनहुँ गौर स्यामल ससि नव तन, बैठे सन्मुख सोहत ॥  
कुंज भवन राधा-मनमोहन, चहुँ पास ब्रजनारी ।  
सूर रहीँ लोचन इकटक करि, डारनिँ तन मन वारी ॥१२८

प्रकरणा

काहे कैँ कहि गए आइहँ, काहँ झूठी सौँहँ खाए ।  
ऐसे मैँ नहिँ जाने तुप्रकौँ, जे गुन करि तुम प्राट दिवाए ।  
भली करी यह दरसन दीन्है, जनम जनम के ताप नसाए ।  
तब चितए हरि नैँ कु तिया-तन, इतनैँ हि सब अपराध छमाए ॥  
सूरदास सुंदरी सयानी, हँसि खीन्है पिय अंकम लाए ॥१२९॥

धीर धरहु फल पावहुगे ।

अपनेहीँ सुख के पिय चाँड़े, कबहुँ तोँ बस आवहुगे ॥  
हम सौँ कहत और की औरै इत वातनि मन भावहुगे ।  
कबहुँ राधिका मान करैगी, अंतर बिरह जनावहुगे ॥  
तब चरित्र हमहीँ देखैँगी, जैसैँ नाच नचावहुगे ।  
सूर स्याम अति चतुर कहावत, चतुराई बिसरावहुगे ॥१३०॥

मैं हरि सौ हो मान कियौ री

आवत दाख आन बनितारत, द्वार कपाट दियो री ॥  
 अपने ही कर साँकर सारी, संधिहिँ संधि सियौ री ।  
 जौ देखैं तौ सेज सुसूरति, काँप्यौ रिसनि हियौ री ॥  
 जब भुकि चली भवन तैं बाहिर, तब हठि लौटि लियौ री ।  
 कहा कहौँ कहु कहत न आवे, तहँ गोविंद बियौ री ।  
 बिसरि राई सब रोष, हरष मन, पुनि फिरि मदन जियौ री ।  
 सूरदास प्रभु अतिरति नागर, छलि मुख अमृत पियौ री ॥ १३

नंद नंदन सुखदायक हैं ।

नैन सैन दे हरत नारि जन, काम काम तनु दायक हैं ॥  
 कबहुँ रैन बसत काहू कैँ, कबहुँ भोर उठि आवत हैँ ।  
 काहू कौ मन आयु सुरावत, काहू कैँ मन भावत हैं ॥  
 काहू कैँ जागत सगरी निसि, काहूँ बिरड जगावत हैँ ।  
 सुनहु सूर जोइ जोइ मन भावै, सोइ सोइ रँग उपजावत हैँ  
 नाना रँग उपजावत स्याम । कोउ रीकति, कोउ खीकति वाम  
 काहू कैँ निसि बसत बनाइ काहू मुख छूवै आवत जाइ ।  
 बहु नायक हूँ बिलसत आयु । जाकौ सिव पावत नहिँ जापु ।  
 ताकौँ ब्रजनारी पति जानैँ । कोउ आदरैँ, कोउ अपमानैँ  
 काहू सौँ कहि आवन साँभ । रहत और नागरि घर मोँभ  
 कबहुँ रैन सब संग विहात । सुनहु सर तुमे नंदनात ।

अब जुवतिनि सौँ प्राटे स्याम ।

अरस परस सबहिनि यह जानी, हरि लुबधे सबहिनि कैँ धाम ।  
 जा दिा जाकैँ भवन न आवत, सोभन में यह करति बिचार  
 आयु रागु औरहिँ काहू कैँ, रिस पावनि, कहि बड़े लबाार ।  
 यह लीला हरि कैँ मन भावत, खंडित बचन कहत सुख होत  
 साँभ बोल दे जात सूर-प्रभु, ताकैँ आवत होत उदोत

राधिका गेह हरि-देह-बासी । और तिय घरनि घर तनु-प्रकार  
 ब्रह्म पूरन द्वितिय नहीं कोऊ । राधिका सबै, हरि सबै वो  
 दीप सौँ दीप जैसेँ उजारी । तैसेँ ही ब्रह्म घर-घर बिहा  
 खंडिता बचन हित यह उपाई । कबहुँ कहुँ जात, कहुँ नहिँ कन्ह

नै सुफल हरि यहै पावैँ । नारि रस-बचन स्ववनि सुनावैँ ॥  
 मु अनतहीँ गमन कीन्हौ । तहाँ नहिँ गएँ जहँ बचन दीन्हौ ॥१३०॥

स्याम तिया सन्मुख नहिँ जोवत ।

कबहुँ नैन की कोर निहारत, कबहुँ बदन पुनि गोवत ॥  
 मन-भन हँसत त्रसत तनु परगट, सुनत भावती घात ।  
 खंडित बचन सुनत प्यारी के, पुलक होत सब गात ।  
 यह सुख सूरदास कछु जानै, प्रभु अपने कौ भाव ।  
 श्रीराधा रिस करति, निरखि मुख तिहिँ छबि पर ललचाव ॥१३१॥

नैन चपलता कहौँ गँवाईँ ।

मोसौँ कहा दुरावत नागर, नागरि रैन जगाईँ ॥  
 ताहीँ कैँ रँग अरुन भएँ हैं, धनि यह सुंदरताईँ ।  
 मनौ अरुन अंबुज पर बैठे, मत्त भृंग रस पाईँ ॥  
 उडि न सकत ऐसे मत्तवारे, लागत पलक जम्हाईँ ।  
 सुनहुँ सूर यह अंग माधुरी, आलस भरे कन्हाईँ ॥१३७॥

यह कहिँ कैँ तिय धाम गईँ ।

रिसनि भरी नख-सिख लौँ प्यारी, जोबन-गर्भ-भईँ ॥  
 सखी चलीँ गृह देखि दसा यह, हठ करि बैठी जाइ ।  
 बोलति नहीँ मान करि हरि सौँ, हरि अंतर रहे आइ ॥  
 इहिँ अंतर जुवती सब आईँ जहाँ स्याम घर-द्वारैँ ।  
 प्रिया मान करि बैठि रही है, रिस करि क्रोध तुम्हारैँ ॥  
 तुम आवत अतिहीँ झहरानी, कहा करी चतुराईँ ।  
 सुनत सूर यह बात चकित पिय अतिहिँ गएँ मुरझाईँ ॥१३८॥

नैँ कु निकुंज कृपा करि आइयैँ ।

अति रिस कृस हँ रही किसोरी, करि मनुहारि मनाइयैँ ॥  
 कर कपोल अंतर गहिँ पावत, अति उल्लास तन ताइयैँ ।  
 हूटे चिहुर बदन कुम्हिलानौ, सुहृथ सँवारि बनाइयैँ ॥  
 इतनौ कहा गाँठि कौ लागत, जौ बातनि सुख पाइयैँ ।  
 रूठेहिँ आदर देत सयाने यहैँ सूर जम गाइयैँ ॥१३९॥

बैठी मानिनी गदि मौन

अचल आसन, पलक तारी, गुफा धूँघट-भौन ।  
 रोषही कौ ध्यान धारै टेक टारै कौन ॥  
 अबहिँ जाइ मनाइ लीजै, अबसि कीजै गौन ।  
 सूर के प्रभु जाइ देखौ, चित्त चौंधी जौन ॥ १

स्यामा नू अति स्यामहिँ भावै ।

बैठन-उठत, चलत, गौ चारत, तेरी लीला गावै ॥  
 पीत बरन लखि पीत बसन उर, पीत धातु अँग लावै ।  
 चंद्राननि सुनि, मोर चंद्रिका, माथैँ मुकुट बनावै ॥  
 अति अनुराग सैन संभ्रम मिलि संग परम सुख पावै ।  
 बिहुरत तोहिँ कासि राधा कहि, कुंज कुंज प्रति धावै ॥  
 तेरौ चित्र लिखैँ, अरु निरखैँ, वासर-बिरह नसावैँ ॥  
 सूरदास रस-रासि रसिक सौँ, अंतर क्यों करि आवैँ ॥ २

राधे हरि तेरौ नाम बिचारैँ ।

तुम्हरेइ गुन अंधित करि माला, रसना-कर सौँ टारैँ ।  
 लोचन मँदि ध्यान धरि, दृढ़ करि, पलक न नैँ कु उघारैँ ।  
 अंग अंग प्रति रूप माधुरी, उर तैँ नहीँ बिसारैँ ॥  
 ऐसौ नेम तुम्हारौ पिय कैँ, कह जिय निठुर तिहारैँ ।  
 सूर स्याम मनकाम पुरावहु, उठि चलि कहै हमारैँ ॥ ३

कहा तुम इतनैँ हि कौँ गरबानी ।

जोबन रूप दिवस दसही कौ, जल अँजुरी कौ जानी ।  
 तृन की अग्नि, धूम कौ मंदिर, ज्यौँ तुपार-कन-पानी ।  
 रिसहीँ जरति पसंग ज्योति ज्यौँ, जानति लाभ न हानी ॥  
 करि कछु ज्ञानऽभिमान जान दै हैऽब कौन मति ठानी ।  
 तब धन जानि जाम जुग छाया, भूलति कहा अथानी ॥  
 नवसै नदी चलति मरजादा, सूधियै सिंधु समानी ।  
 सूर इतर ऊसर के बरवैँ, थोरैँ हि जल इतरानी ॥ ४

यह जोबन अँजुरी कौ जल है, ज्यौँ गुपाल माँगै त्यों दीजै ।  
 क्लिनु क्लिनु बढति, बढति नहिँ रजनी, ज्यौँ ज्यौँ कलाचंद्र की छीं ।  
 पूरब पुन्य सुकृत फल तेरौ, काहँ न रूप नैन भरि पीजै ।

यह जोबन अँजुरी कौ जल है, ज्यौँ गुपाल माँगै त्यों दीजै ।  
 क्लिनु क्लिनु बढति, बढति नहिँ रजनी, ज्यौँ ज्यौँ कलाचंद्र की छीं ।  
 पूरब पुन्य सुकृत फल तेरौ, काहँ न रूप नैन भरि पीजै ।

राधाकृष्ण

सौँह करति तेरे पाँइनि की, ऐसी जियनि दसौ दिन जीजै ।  
सूर सु जीवन सुफल जगत कौ, बैरी बाँधि विवस करि लीजे ॥ १४

राधा सखी देखि हरषानी ।

आतुर स्याम पठाई याकौँ, अंतरगत की जानी ॥  
वह सोभा निरखत अँग अँग की, रही निहारि निहारि ।  
चकित देखि नामरि मुख बाकौ, तुरत सिँगारनि सारि ॥  
ताहि कह्यौ सुख दे चलि हरि कौँ, मैँ आवति हौँ पाछैँ ।  
वैसैहि फिरी सूर के प्रभु पै, जहाँ कुंज गृह काछैँ ॥ १४२  
हरषि स्याम तिय वाहँ गही ।

अपनैँ कर सारी अँग साजत, यह इक साध कही ॥  
सकुचति नारि बदन मुसुकानी, उतकौँ चितै रही ।  
कोक-कला परिपूरन दोऊ त्रिभुवन और नहीं ॥  
कुंज-भवन संग मिलि दोउ बैठे, सोभा एक चही ।  
सूर स्याम स्यामा सिर बेनी, अपनैँ करनि गुही ॥ १४

✓खंजन नैन सुरँग रस माते ॥

अतिसय चाह बिमल, चंचल ये, पल पिंजरा न समाते ॥  
बसे कहूँ सोइ बात सखी, कहि रहे इहाँ किहिँ नातैँ ?  
सोइ संज्ञा देखति औरासी, विकल उदास कला तैँ ॥  
चलि-चलि जात निकट स्रवननि के सकि ताटक फँदाते ।  
सूरदास अंजन गुन अटके, नतरु कबै उड़ि जाते ॥ १४०

धन्य धन्य बृषभानु-कुमारी, गिरिवरधर बस कीन्हे (री) ।

जोइ जोइ साध करी पिय रस की, सो सब उनकौँ दीन्हे (री) ॥

तोसी तिया और त्रिभुवन मैँ, पुरुष स्याम से नाहीँ (री) ।

कोक-कला पूरन तुम दोऊ, अब न कहूँ हरि जाहीँ (री) ॥

ऐसे बस तुम भए परस्पर, मोसौँ प्रेम दुरावै (री) ।

सूर सखी आनँद न सम्हारति, नागरि कंड लगावै (री) ॥ ३

मान लीला

राधेहिँ स्याम देखी आई ।

भहा मान दड़ाइ बैठी, चितै कापैँ जाइ ॥

रिसहिँ रिस भई मगन सुंदरि स्याम अति अकुलात ।

चकित हूँ जकि रहे ठाढ़े, कहि न आवै बात ॥

द्वेषि व्याकुल नंद नंदन, सखी करति विचार ।  
सूर दोऊ मिलै, जैसें करै सोइ उपचार ॥१४६॥

यह ऋतु रूसिबे की नाही ।

बरषत सख मेदिनी के हित, प्रीतम हरपि मिलाही ॥  
जेसी बलि प्रीषम ऋतु डाही, ते तरवर लपटाही ॥  
जे जल बिनु सरिता ते पूरन, मिलन समुद्रहि जाही ॥  
जोवन धन है दिवस चारि कौ, उग्रौ बदरी की छाही ॥  
मैं दंपति-रस-रीति कही है, ससुकि चतुर मन माही ॥  
यह चित धरि री सखी राधिका, दै दूती कौ बाही ॥  
सूरदास उठि चली री प्यारी, मेरे सँग दिय पाही ॥१५०॥

तोहि किन रुदन सिखई प्यारी ।

नवल बैस नव नागारि स्यामा, वे नागर गिरिधारी ॥  
सिगरी रैन मनवति बीती, हा हा करि हौं हारी ।  
एते पर हठ छाँडति नाहीं, तू वृषभानु-दुलारी ॥  
सरद-समय-ससि-दरस समर सर, लागै उन तन भारी ।  
मेटहु त्रास दिखाइ बदन-बिधु, सूर स्याम हितकारी ॥१५१॥

हरि-सुख राधा-राधा बानी ।

धरिनी परे अचेत नहीं सुधि, सखी देखि अकुलानी ॥  
बासर गायौ, रैनि इक बीती, बिनु भोजन बिनु पानी ।  
बाहँ पकरि तब सखिनि जगायौ, धनि-धनि सारंगपानी ॥  
छाँ तुम बिबल गए हौं ऐसे, ह्यौं तौ वै बिबसानी ।  
सूर बने दोउ नारि पुरुष तुम, दुहुँ की अकथ कहानी ॥१५२॥

लुनि री सयानी तिय रूसिबे कौ नेम लियौ, पावस दिननि  
कोऊ ऐसौ है करत री ।

दिसि-दिसि षटा उठी मिलि री पिथा सौं रुठी, निडर हियौ है  
तेरौ नें कु न डरत री ॥

चलिए री मेरी प्यारी, मोकौं मान देन हारी, प्रानहुँ तै प्यारे पति  
धीर न धरत री ।

सूरदास प्रभु तोहिँ दियौ चाहै हित-बित, हँसि क्यों न मिलै तेरौ  
नेम है दरत री ॥१५३॥



## राध कृष्ण

बेरस कीजै नाहिँ भामिनी, रस मैं रिस की बात ।

हैं पढई तोहिँ लेन साँवरै, तोहिँ बिनु कछु न सुहात ॥  
 हा हा करि तेरे पाइँ परनि हैं, छिनु छिनु निसि घटि जात ।  
 मूर स्याम तेरौ मग जोवत, अनि आतुर अकुलात ॥१२४॥  
 माधौ, तहाँ बुलाई राधे, जमुना-निकट सुसीतल कहियोँ ।  
 आछी नीकी कुसुँभी सारी गोरैँ तन, चलि हरि पिय पहियोँ ॥  
 दूती एक गइ मोहिनि पै, जाइ कह्यौ यह प्यागी कहियोँ ।  
 सूरदास सुनि चतुर राधिका, स्याम रनि बृंदावन कहियोँ ॥१५

सूँभक सारी तन गोरैँ हो ।

जगमग रह्यौ जराइ कौ टीकौ, छवि की उडति अकोरैँ हो ॥  
 रत्न जटित के सुभग तरथौना, मनहुँ जाति रवि भोरैँ हो ।  
 दुलरी कंठ निरखि पिय इक टक, दग भए रहैँ चकोरै हो ।  
 सूरदास-प्रभु तुम्हरे मिलन कौँ, रीझि रीझि तन तोरैँ हो ॥१६

✓ राधिका बस्य करि स्याम पाए ।

विरह गयो दूरि, जिय हरप हरि कै भयो, सहस सुख निगम  
 जिहिँ नेति गायो ॥  
 मान तजि भामिनी मैंन कौ बल हरथौ, करत तनु कंत जो त्रास  
 भारी ।  
 कोक-बिद्या निपुन, स्याम स्यामा विपुल, कुंज-गृह द्वार ठाढ़े  
 सुरारी ॥  
 भक्त-हित-हेत अवतारि लीला करत, रह प्रभु तहाँ निजु ध्यान  
 जाइ ।  
 प्रगत प्रभु-सूर ब्रजनारि कैँ हित बँधे, देत मन-काम फल संग ताकैँ ॥१७

सव

शूलत स्याम स्यामा संग ।

निरखि दंपति अंग सोभा, लजत कोटि अनंग ॥  
 मंद त्रिविध समीर सीतल, अंग अंग सुगंध ।  
 मचत उडत सुवास संग, मन रहे मधुकर बंध ॥  
 तैसियै जमुना सुभग जहँ, रच्यौ रंग हिंडोल ।  
 तैसियै बृज-बधू वनि, हरि चित्तै लोचन कोर ॥

तैसेई वृंदा-विपिन-घन-कुंज-द्वार विहार ।  
 विपुल गोपी, विपुल वन गृह, रवन नंदकुमार ॥  
 नित्य लीला, नित्य आनंद, नित्य मंगल गान ।  
 सूर सुर सुनि मुखनि अस्तुनि, धन्य गोपी कान्ह ॥१२८॥

नित्य धाम वृंदावन स्वाम । नित्य रूप राधा ब्रज-बाम ॥  
 नित्य गाल, जल नित्य विहार । नित्य मान, खंडिताऽभिसार ॥  
 ब्रह्म-रूप येई करतार । करन हरन त्रिभुवन येइ सार ॥  
 नित्य कुंज-सुख नित्य हिंडोर । नित्य हूँ त्रिविध-समीर भक्तीर ॥  
 सदा बसंत रहन जई बाम । सदा हर्ष, जहँ नहीँ उदास ॥  
 कोकिल कीर सदा तहँ रोए । सदा रूप मन्मथ चित्त-चोर ॥  
 त्रिबध सुमन बन फूले डार । उन्मत्त मधुकर भ्रमत अपार ॥  
 नव पल्लव बन सोभा एक । विहरत हरि संग सखी अनेक ॥  
 कुहू कुहू कोकिला सुनाई । सुनि सुनि नारि परम हरषाई ॥  
 बार बार खो हरिहिँ सुनावति । ऋतु बसंत आयौ समुत्पावति ॥  
 फागु-धरित-रस साथ हमारै । खेलहिँ सब मिलि संग तुम्हारै ॥  
 सुनि सुनि सूर स्वाम भुसुकाने । ऋतु बसंत आयौ हरपाने ॥१३॥

पिय प्यारी खेलैँ जमुन-तीर । भरि केसरि कुमकुम अरु अवीर ।  
 बसि मृगमद चंदन अरु गुलाब । रँग भीने अरगज वस्त्र माल ॥  
 कूजत कोकिल कल हँस मोर । लखितादिक स्वामा एक ओर ॥  
 वृंदादिक मोहन लई जोर । बाजै ताल मृदंग रबाव धोर ॥  
 प्रभु हँसि कै गेँहुक दई चलाई । मुख पट दै राधा गई बचाइ ॥  
 लखिता पट-मोहन राखी धाई । पीतांबर सुरली लई छिँड़ाइ ॥  
 हौँ सपथ करौँ छँडौँ न होहि । स्वामा जू आजा दई मोहि ॥  
 इक निज सहचरि आई बसीठि । सुनि री लखिता तू भई वीठि ॥  
 पट छँडि दियोँ तत्र नव किमोर । छुबि रीमि सूर नृन दियोँ सोर ॥१४॥

तेरैँ आवैँगे आजु सखी हरि, खेलन कौँ फागु री ।  
 सगुन सँदेसौँ हौँ सुन्यौँ, तेरैँ आँगन बोलैँ काग री ॥  
 मदरमोहन तेरैँ बस भाई, सुनि राधे बड़भाग री ।  
 बाजत ताल मृदंग भाँफ डक, का सोवै, उठि जाग री ॥  
 चोवा चंदन लैँ कुमकुम अरु केसरि पैयौँ लाग री ।  
 सूरदास-प्रभु तुम्हरैँ दरस कौँ, राधा अचल सुहाग री ॥१५॥

## राधाकृष्ण

हरि संग खेलति हैं सब प्राग ।

इहि मिस करति प्रगट गोपी, उर-अंतर कौ अनुराग ॥  
 सारी पहिरि सुरंग, कसि कंकुकि, काजर है-दे नैन ।  
 बनि-बनि निकसि-निकसि भईं छादी, सुनि माथौ के बैन ॥  
 डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुअरि, बाजत ताल मृदंग ।  
 अति आनंद मनोहर बानी, गावन उठति तरंग ॥  
 एक कोथ गोबिंद ग्वाल सब, एक कोथ ब्रज नारि ।  
 छोंडि सकुच सब देति परस्पर, अपनी भाई गारि ॥  
 मिलि दस पाँच शली बली कृष्णहि, गदि लावति अचकाइ ।  
 भरि अराजा अवीर कनकघट, हेति सीस तँ नाइ ॥  
 छिरकति सखी कुमकुमा केसरि, भुरकति बंदन धूरे ।  
 सोभित है तनु साँक-समै-वन, आए हैं मनु पूरे ॥  
 दसहुँ दिसा भयो परिपूरन, सूर सुरंग प्रभोद ।  
 सूर-विमान कौतूहल भूले, निरखत स्याम विनोद ॥ १६५  
 नव नंदन वृषभानु-किसोरी, मोहन राधा खेलत होरी ।  
 श्रीवृंदावन अतिहि उजागर, बरन बरन नव उंपति भोरी ॥  
 एकनि कर है अरार कुमकुमा, एकनि कर कंसरि लै घोरी ।  
 एक अर्थ सौँ भाव दिखावति, नाचति तरुनि बाल वृष भोरी ॥  
 स्यामा उतहि सकल ब्रज-बानिता, इतहि स्याम रस रूप लहौ री ।  
 कंचन की पिचकारी छूटति, छिरकत ज्यौं ससुपावै गोरी ॥  
 अतिहि ग्वाल दधि गोरस माते, गारी दंत कहौ न करौ री ।  
 करत दुहाई अंदराइ की, लै जु गयो कल बल बल जोरी ॥  
 कुंडनि जोरि रही अंदावलि, गोकुल मै कहु खेल मच्यौ री ।  
 सूरदास-प्रभु फगुआ दीजै, चिरजीवौ राधा वर जोरी ॥ १६६

गोकुलनाथ विराजत डोल ।

संग लिये वृषभानु-नंदिनी, पहिरे नील निचोल ॥  
 कंचन खचित लाल मनि मोली, हीरा जटित अमोल ।  
 कुलवाहें वृष मिलै ब्रज-सुंदरि, हरषित करति कलोल ॥  
 खेलति, हँसति, परस्पर गावति, बोलति भीठ बोल ।  
 सूरदास-स्वामी, पिय-प्यारी, मूलत हैं भक्तमोल ॥ १६७ ॥

## मथुरा गमन

अक्रूर ब्रज आगमन

कंस नृपति अक्रूर बुलाये ।

वैदि इकंत भंग इद कीन्हौ, दोऊ बंधु संगे ॥

कहुँ मरल, कहुँ गज दै राखे, कहुँ धनुष, कहुँ वीर ।

नंद महर के बालक मेरे करपत रहत सरीर ॥

उन्हिँ बुलाइ बीच ही मारौ, नगर न आवन पावै ।

सूर सुवत अक्रूर कहत नृप मन-मन मौज बढ़ावै ॥१॥

उत नंदहिँ सपनौ भयो, हरि कहुँ हिराज ।

बल-मोहन कोउ लै गयो, सुनि के बिलखाने ॥

ग्याल सखा रोवत कहै, हरि तौ कहुँ नाही ।

संगहिँ संग खेळत रहे, यह कहि पछिताही ॥

दूत एक संग लै गयो, बलराम कन्हार्इ ।

कहा उगौरी सी करी, मोहिनी लगार्इ ॥

वाही के दोउ ह्वै गए, हम देखत ठाढ़े ।

सूरज प्रभु वै निहुर ह्वै, अतिहीँ गए गाढ़े ॥२॥

सुफलक-सुत हरि दरसन पायो ।

रहि न सक्यो रथ पर सुख-व्याकुल भयो वहुँ जन भायो ॥

भू पर दौरि निकट हरि आयौ, चरननि चित्त लगायो ।

पुलक अंग, लोचन जल-धारा, श्रीपद सिर परसायो ॥

कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि, लियौ भक्त उर लाइ ।

सुगदास यह सुख सोइ जानै, कहुँ कहुँ नै गाइ ॥३॥

चलन चलन त्यास कहत, लैन कोउ आयौ ।

नंद-भवन भनक सुनी, कंस कहि पठायो ॥

ब्रज की नारि गृह बिसारि, व्याकुल उठि धाई ।

समाचार वृकन कौं, आनुर ह्वै आई ॥

प्रीति जानि, हेत मानि, बिलखि वदन ठाढ़ी ।

मानहु वै अति चिचिन्न, चिन्न लिखी काढ़ी ॥

## मथुरा गमन

ऐसी गति ठौर-ठौर, कहत न बनि आवै ।

सूर स्याम बिछुरै, दुख-बिरह काहि भावै ॥४॥

चलत जानि चितवति ब्रज-जुवती, मानहु लिखी चितेरै ।

जहाँ सु तहाँ गूकटक रहि गई, फिरत न लोचन फेरै ॥

बिसरि गई गति भाँति देह की, सुनति न स्रवननि टेरै ।

मिलि जु गई मानौ पै पानी, निबरति नही निबेरै ॥

लागी संग मनंग मत्त ज्यों, धिरति न कैलहु धेरै ।

सूर प्रेम-आसा अंकुस जिय, वै नहि इत-उत हेरै ॥५॥

✓ (मेरे) कमलनेन प्रावनि तै प्यारे ।

इन्है कहा मधुपुरी पटाऊ, राम कृष्ण दोऊ जन बारे ॥

जसुदा कहै सुनौ सुफलक-सुत मै इत बहुत दुपनि सौं पारे ।

ये कहा जानै राज सभा कौं, ये गुरुजन विप्रहु न जुहारे ॥

मथुरा असुर समूह बसत है, कर-कृपान, जोधा हत्यारे ।

सूरदास ये लरिका दोऊ, इत कब देखे मरल-अखारे ॥

जसुमति अति ही भई विहाल ।

सुफलक सुत यह तुमहि बूझियत, हरत हमारे बाल !

ये दोउ भैया जीवन हमरे, कहति रोहिनी रोइ ।

धरनी गिरति, उठति अति व्याकुल कहि राखत नहि कोइ ॥

निठुर भगु जब तै यह आयौ, धरहु आवत नाहि ।

सूर कहा नृप पास तुम्हारौ, हम तुम बिनु मरि जाहि ॥६॥

सुने है स्याम मधुपुरी जात ।

सकुचनि कहि न सकति काहु सौं, गुप्त हृदय की बात ॥

संकित बचन अनागत कोऊ, कहि जु गायौ अधरात ।

नींद न परै, घटै नहि रजनी, कब उठि देखौं प्रात ॥

नंद नंदन तौ ऐसे लागे, ज्यों जल पुरइनि पात ।

सूर स्याम संग तै विछुरत है, कब ऐहै कुसलात ॥७॥

पयाग

अब नंद गाइ लेहु सँभारि ।

जो तुम्हारै आनि बिलमे, दिन चराई चारि ॥

दूध दही खवाइ कीन्हे, बड़े अति प्रतिपारि ।

ये तुम्हारे गुन हृदय तै, डारिहौं न बिसारि ॥

मातृ जसुदा द्वार ठाढ़ी, चलै आँसू डारि ।  
 कह्यौ रहियौ सुचित सौँ, यह ज्ञान गुर उर धारि ॥  
 कैन सुत, को पिता-माता, देखि हृदय विचारि ।  
 सूर के प्रभु गवन कीन्हौ, कपट काराद फारि ॥३॥

जबहीँ रथ अक्रूर चढ़े ।

तब रसना हरि नाम भाषि कै, लोचन नीर बड़े ॥  
 महारि पुत्र कहि सोर लगायौ, तरु ज्यों धरनि लुटाइ ।  
 देखति नारि चित्र सी ठाढ़ी, चितये कुँवर कन्हाइ ॥  
 इननैँ हि मैँ सुख दियौ सबनि कौँ, दीन्ही अवधि बताइ ।  
 तनक हँसे, हरि मन जुवतिन कौँ, निदुर ठगौरी लाइ ॥  
 बोलति नहीं रहीँ सब ठाढ़ी, स्याम-ठगौँ ब्रज-नारि ।  
 सूर तुरन्त मधुवन पग धारे, धरनी के हितकारि ॥१॥

रहीँ जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ी ।  
 हरि के चलत देखियत ऐसी, मनहु चित्र लिखि काढ़ी ॥  
 सूखे बदन, खनि नैननि तैं जल-धारा उर बाढ़ी ।  
 कंधनि बाँह धरे चितवति मनु द्रुमनि बलि दव दाढ़ी ॥  
 नीरस करि झँड़ी सुफलक सुत, जैसेँ दूध बिनु साढ़ी ।  
 सूरदास अक्रूर कृपा तैं सही विपति तन गाढ़ी ॥११॥

बिछुरत श्री ब्रजराज आजु, इनि नैननि की परतीति गई ।  
 उड़ि न गए हरि संग तबहिँ तैं, हँ न गए सखि स्याममई ।  
 रूप रसिक लालची कहावत, सो करनी कछुवै न भई ।  
 सौँचे क्रूर कुटिल ये लोचन, वृथा मीन-छवि छीन लई ॥  
 अब काहेंँ जल-मोचन, सोचत, समौ गए तैं सूख नई ।  
 सूरदास याही तैं जड़ भए, पलकनिहूँ हठि दगा दई ॥

आजु रैनि नहिँ नीँद परी ।

जागत गिनत गगन के तारे, रसना रटत गोविंद हरी ॥  
 वह चितवनि, वह रथ की बैठनि, जब अक्रूर की बाँहँ गही ।  
 चितवति रहीँ ठगीसी ठाढ़ी, कहि न सकति कछु काम दही ॥  
 इते मान व्याकुल भइ सजनी, आरजपंथहुँ तैं बिडरी ।  
 सूरदास-प्रभु जहाँ सिधारे, कितिक दूर मथुरा नगरी । १३॥

## मथुरा गमन

री मोहिँ भवन भयानक लागौ, माईँ स्याम बिना ।  
 काहि जाइ देखौँ मरि लोचन, जसुमति कैँ अँगना ॥  
 को संकट सहाइ करिवे कौँ, मेटै बिघन घना ।  
 लौ गयो क्रूर अक्रूर सँवरी, ब्रज कौँ प्रानधना ॥  
 काहि उठाइ गोद करि लीजै, करि करि मन भगना ।  
 सूरदास मोहन दरसन बिनु, सुख संपति सपना ॥ १४ ॥

कहा हौँ पुरे ही मरि जैहौँ ।

इहिँ अँगन गोपाल लाल कौ, कबहुँ कि कनिया लैहौँ ॥  
 कब वह सुख बहुरौ देखौँगी, कह वैसो सचुपैहौँ ।  
 कब मोपै माखन मोगँगे, कब रोटी धरि देखौँ ॥  
 मिलन आस तन-प्रान रहत हँ, दिन दस मारग जैहौँ ।  
 जौ न सूर अइहँ इते पर, जाइ जमुन धँसि लैहौँ ॥ १५ ॥  
 वेश तथा कंस वध

बूझत हँ अक्रूरहिँ स्याम ।

तरनि किरनि मइलनि पर माईँ, इहै मधुपुरी नाम ॥  
 खवननि सुनत रहत हे जाकौँ, सो दरसन भए नैन ।  
 कंचन कोट कँगूरनि की छवि, मानौँ बैठे मैन ॥  
 उपवन बन्यौ चहुँवा पुर के, अतिहौँ मोकौँ भावत ।  
 सूर स्याम बलरामहिँ पुनि पुनि, कर पल्लवनि दिखावत ॥ १६ ॥

मथुरा हरपित आलु भई ।

ज्यौँ जुवती पति आवत सुनि कै, पुलकित अंग मई ॥  
 नवसत साजि सिँगार सुंदरी, आतुर पंथ निहारति ।  
 उड़ति धुजा तनु सुरति बिसारे, अंचल नहीं सँभारति ॥  
 उरज प्रगट महलनि पर कलसा, ललति पास बन सारी ।  
 ऊँचे अटनि छाज की सोभा, सीस उचाइ निहारी ॥  
 जालरंभ इकटक भग जोवति, किंकिनि कंबन दुरा ।  
 बेनी ललति कहौँ छवि ऐसी, महलनि चित्रे उगा ॥  
 बाजत नगर बाजने जहँ तहँ, और वजत धरियार ।  
 सूर स्याम बनिता ज्यौँ चंचल, पग नूपुर फनकार ॥ १७ ॥

मथुरा पुर सैँ सोर पद्यों ।

गरजत कंस बंस सब साज, सुख कौ नीर हट्यौ ॥

पीरौ भयौ, फेफरी अघरनि, हिरदै अतिहि ड्यौ ॥  
 नंद महर के सुत दोउ सुनि कै, नारिनि ह्यै भयौ ॥  
 कोउ महलनि पर कोउ छजनि पर, कुल लज्जा न क्यौ ॥  
 कोउ धाई पुर गलिन गलिन ह्यै, काम-धाम बिसयौ ॥  
 इंदु बदन नव अलद सुभग तनु, दोउ खग नयन क्यौ ॥  
 मूर श्याम देखत पुर-नारी, उर-उर प्रेम भयौ ॥१८॥

दोटा नंद कौ यह री ।

नाहिं जानति बसत ब्रज मै, प्रगट गोकुल री ॥  
 धर-यौ गिरिवर बाम कर जिहि, सोइ है यह री ।  
 दैत्य सब इनहीं सँहारे, आपु-भुज-बल री ॥  
 ब्रज-घरनि जो करत चोरी, खात माखन री ।  
 नंद-घरनी जाहि बाँध्यौ, अजिर ऊखल री ॥  
 मुरभि-ठान लिये बन तै आवत, सबहि गुन इन री ।  
 मूर-प्रभु ये सबहि लायक, कंस डरै जिन री ॥१९॥

भए सखि नैन सनाथ हमारे ।

मदनगोपाल देखतहि सजनी, सब दुख सोक बिसारे ॥  
 पठ्ये हे सुफलक-सुत गोकुल, लैन सो इहाँ सिधारे ।  
 मल्ल जुद्ध प्रति कंस कुटिल मति, छल करि इहाँ हँकारे ॥  
 मुष्टिक अरु चानूर सैल सम, सुनियत है अति भारे ।  
 कोमल कमल समान देखियत, ये जसुमति के बारे ॥  
 होवे जीति विधाता इनकी, करहु सहाइ सबारे ।  
 सूरदास चिर जियहु दुष्ट दलि, दोऊ नंद-दुलारे ॥२०॥

धनुषसाला चले नंदलाला ।

सखा लिए संग प्रभु रंग नाना करत, देव नर कोउ न लखि  
 सकत ख्याला ॥

नृपति के रजक सौं भेंट मगमै भई, क्यौ दै बसन हम पहिरि जाहीं  
 बसन ये नृपति के जासु प्रजा तुम, ये बचन कहत मन डरत  
 नाही

एक ही मुष्टिका प्रान ताके गए, लए सब बसन कहु सखनि दीन्हे ।  
 आइ दरजी गयौ बोलि ताकौं लयौ, सुभग अंग साजि उन विन-  
 कीन्हे ।



।दाभा कछौ गेह मम अति निकट, कृपा करि तहाँ हरि चरन भारे ।  
 इ-कमल पुनि हार आगै धरे, भक्ति वै, तासु सब काज सारे ॥  
 चंदन बहुरि आनि कुबिजा मिली, स्याम अंग लंप कोन्हौ बनाई ।  
 तिहिँ रूप द्वियौ, अंग सूधौ कियौ, बचन सुभ भाषि निज गुह पढाई ॥  
 ॥ए तहाँ जहँ धनुष, बोले सुभट, हौंस जनि मन करौ बन-बिहारी ।  
 सु छुवत भनु दृष्टि धरनी पर्यौ, सोर सुनि कंस भयौ अमित भारी ॥ २१

सुनिहि महावत बात हमारी ।

घार-घार संकर्षन भाषत, लंत नहिँ छाँ तैँ गज टारी ॥  
 मरौ कछौ मानि रे मूरख, गज समेत तोहिँ डारैँ मारी ।  
 डारैँ खरे रहे हैँ कबके, जनि रे गर्व करहिँ जिय भारी ॥  
 न्यारौ करि गर्यद तू अजहूँ, जान डेहिँ कैँ आपु सँभारी ।  
 सूरदास-प्रभु दुष्ट निकंदन, धरनी भार उतारनकारी ॥ २२ ॥

तब रिस कियौ महावत भारि ।

जो नहिँ आज मारिहँ इन्कौँ, कंस डारिहँ मारि ॥  
 आँकुस राखि कुंभ पर करध्यौ, हलधर उठे हँकारि ।  
 धायौ पवनहुँ तैँ अति आनुर, धरनी दंत खँभारि ॥  
 तब हरि पूँछ गछौ दच्छिन कर, कँडुक फेरि सिर वारि ।  
 पटक्यौ भूमि, फेरि नहिँ मटक्यौ, लीन्हौँ दंत उपादि ॥  
 दुहँ कर दुरद दसन इक इक छवि, सो निरखतिँ पुरनारि ।  
 सूरदास प्रभु सुर सुखदायक, मार्यौ नाम पछारि ॥ २३ ॥

एक सुत नंद अहीर के ।

मार्यौ रजक बसन सब लूटे, संग सखा बल घोर के ॥  
 कौंधे धरि दोऊ जन आए, दंत कुबलयापीर के ।  
 पसु पति मंडल मध्य मनौ, मनि छीरधि नीरधि नीर के ॥  
 उड़ि आए तजि हंस मात मनु, मानसरोवर तीर के ।  
 सूरदास-प्रभु ताप निवारन, हरन संत दुख पीर के ॥ २४ ॥

। हो श्रीर मुष्टिक चानूर सबै, हमहिँ चूर पास नहिँ जान देहौ ।  
 राखे हमैँ, नहीँ बूझैँ तुम्हैँ, जगत मेँ कहर उपहास खैँहौ ॥  
 यहैँ कैँहैँ भली मति तुम पै है, बंद के कुँवर शोड मरल मारे ।  
 जस लेहुगे, जान नहिँ देहुगे, खोजहीँ परे अब तुम हमारे ॥

हम नहीं कहैँ तुम मनहिँँ जौ यह बसी, कहत हौँ कहा तौँ कसौँ तैसी ।  
 सूर हम तन निरखि देखिअँ आपुँँ, बात तुम मनहिँँ यह बसी नैसी ॥२५॥  
 गह्यौँ कर-स्याम भुज मरल अपनँँ धाड़, भटकि लीन्हौँ तुरत पटक धरनी ।  
 भटकि अति सद्य भयोँ, खटक नृप केँ हियँँ, अटक प्रातनि परयोँ चटक करनी ॥  
 लटक निरखन लग्यौँ, मटक सब भूलि गइ, हटक करि देउँँ इहँँ लागी ।  
 भटक कुंडल निरखि, अटक हँँ केँ गयोँ, गटक सिल सौँँ रह्यौँ मीच जागी ॥  
 मरल जेँ जेँ रहेँँ सबैँ मारेँँ तुरत, असुर जोधा सबैँ तेउँँ सँहारेँँ ।  
 धाड़ दूतनि कह्यौँ, कोउ न रह्यौँ, सूर बलराम हरि सब पछारेँँ ॥२६॥

✓नवल नंद नंदन रंगभूमि राजैँँ

स्याम तन, पीत पट मनौँ बन मैँँ तड़ित, मोर केँ पंखमाथैँँ विराजैँँ ॥  
 खवन कुंडल कलक मनौँ चपला चमक, दग अरुन कमल दल से बिसाला ।  
 भौँँ सुंदर धनुष, बान सम सिर तिलक, केस कुंचित सोह भृंग माला ।  
 हृदय बनमाल, नूपुर चरन लाल, चलत गज चाल, अति बुधि विराजैँँ ।  
 हंस मानौँ मानसर अरु अंजुज सुभर निरखि आनंद करि हरपि गाजैँँ ॥  
 कुबलया मारि चानूर मुष्टिक पटक, बीर दोउ कंध गज-वंत धारेँँ ।  
 जाइ पहुँचे तहाँँ कंस बैँँ जहाँँ, गएँँ अवसान प्रभु केँ निहारेँँ ॥  
 ढाल तरवारि आगँँ धरी रहि गई, महल कौँ पंथ खोजत न पावत ।  
 लाल कँँ लगत सिर तँँ गयोँ मुकुट गिरि, केस गहिँँ लौँ चले हरि खसावत ।  
 चारि भुज धारि तेहिँँ चारु दरसन दियोँ, चारि आयुध चहँँ हाथ लीन्हे ।  
 असुर तजि प्राण निरवान पद कँँ गयोँ, विमल मति भईँँ प्रभु रूप चीन्हे ॥  
 देखि यह पुहुप वर्षा करीँँ सुरनि मिलि, सिद्ध गंधर्व जय धुनि सुनाई ।  
 सूर प्रभु अगम महिमा न कहुँँ कहि परति, सुरनि की गति तुरत  
 असुर पाईँँ ॥२७॥

✓उग्रसेन कँँ दियोँ हरि राज ।

आनंद मगन सकल पुरवासी चँवर डुलावत श्री ब्रजराज ॥  
 जहाँँ तहाँँ तँँ जादव आएँँ, कंस डरनि जेँँ गएँँ पराइ ।  
 मागध सूत करत सब अस्तुति, जैँँ जैँँ जैँँ श्री जादवराइ ॥  
 जुग जुग बिरद यहैँँ चलि आश्रौँँ, भएँँ बलि केँ द्वारैँँ प्रतिहार ।  
 सूरदास प्रभु अज अविनासी, भक्तनि हेत लेत अवतार ॥२८॥

तब बसुदेव हरषित गात ।

स्याम रामहिँँ बँठ लाएँँ, हरषि देवैँँ मात ॥

## मथुरा गमन

अमर दिवि दुंदुभी दीन्ही, भयौ जैजैकार ।  
 दुष्ट दलित सुख दियौ संतनि, ये बसुदेव कुमार ॥  
 दुख गयौ बहि हर्ष पूरन, नगर के नर-नारि ।  
 भयौ पूरब फल सँपूरन, लख्यौ सुत दैश्वरि ॥  
 तुरत बिप्रनि बोलि पठये, धेनु कोटि मँगाइ ।  
 सूर के प्रभु ब्रह्मपूरन, पाइ हरपे राइ ॥२६॥

वसुदेवौ कुल-व्यौहार बिचारि ।

हरि हलधर कौँ दियौ जनेऊ, करि षटरस व्यौनारि ॥  
 जाके स्वास-उसाँस लेत मैँ प्रगट भए श्रुति चार ।  
 तिन गायत्री सुनी गरौँ सौँ प्रभु गति अगम अपार ॥  
 बिधि सौँ धेनु दई बहु बिप्रनि, सहित सर्व-सँकार ।  
 जदुकुल भयौ परम कौतूहल, जहँ तहँ गावतिँ नार ॥  
 मातु देवकी परम मुदित ह्वै देति निझावरि वारि ।  
 सूरदास की यहै आसिषा, धिर जियौ नंद-कुमार ॥३०॥

कुबरी पूरब तप करि राख्यौ ।

आए स्याम भवन ताही कैँ, नृपति महल सब नाख्यौ ॥  
 प्रथमहिँ धनुष तोरि आवत हे, बीच मिली यह धाइ ।  
 तिहिँ अनुराग बस्य भए ताकैँ, सो हित कह्यौ न जाइ ॥  
 देव काज करि आवत कहि गए, दीन्हौ रूप अपार ।  
 कृपा दृष्टि चित्तवतहीँ श्री भइ, निगम न पावत पार ॥  
 हम तैँ दूरि दीन के पाछैँ, ऐसे दीनदयाल ।  
 सूर सुरनि करि काज तुरतहीँ, आवत तहाँ गोपाल ॥३१॥

कियौ सूर-काज गृह चले ताकैँ ।

औ नारि कौँ भेद भेदा नहीं, कुलिन अकुलिन अवतरयौ काकैँ ॥  
 दासी कौन, प्रभु निप्रभु कौन है, अखिल ब्रह्मांड इक रोम जाकैँ ।  
 सौँचौ हृदय जहाँ, हरि तहाँ है, कृपा प्रभु की माथ भाग वाकैँ ॥  
 दासी स्याम भजनहु तैँ जिये, रमा सम भई सो कृष्ण-दासी ।  
 वह सूर-प्रभु प्रेमचंदन चरचि, कियौ जय कोटि, तप कोटि कासी ॥

मथुरा दिन-दिन अधिक बिराजै ।

तेज, प्रताप राइ केसौँ कैँ, तीनि लोक पर गाजै ॥

पग पग तौरथ कोटिक राजैँ, मधिविश्रांत बिराजैँ ।  
 करि अस्नान प्राप्त जमुना कौ, जनम मरन भय भाजैँ ॥  
 ब्रिठल त्रिपुल बिनोद बिहारन, ब्रज कौ बसिबौ छाजैँ ।  
 सूरदास सेवक उनहीं कौ, कृपा सु गिरिधर राजैँ ॥३३॥

नंद का ब्रज प्रत्यागमन

बेगि ब्रज कैंँ फिरिए नँदराइ ।

हमहिँ तुमहिँ सुत तात कौ नाती, ओर परथौ हैँ आइ ॥  
 बहुत कियौ प्रतिपाल हमारौ, सो नहिँ जी तैंँ जाइ ॥  
 जहाँ रहैंँ तहँँ तहाँँ तुम्हारे, डारथौँ जानि विसराइ ॥  
 जननि जसोदा भँँटि सखा सब, मिलियौ बँठ लगाइ ।  
 साधु समाज निगम जिनके गुन, मेरेंँ गनि न सिराइँ ॥  
 माया मोह मिलन अरु बिछुरन, ऐसैंँ ही जग जाइ ।  
 सूर स्वाम के निठुर बचन सुनि, रहे नैन जल छाइ ॥

नंद बिदा होइ घोप सिधारौ ।

बिछुरन मिलन रघ्यौँ बिधि ऐसौँ, यह संकोच निवारौँ ॥  
 कहियौँ जाइ जसोदा आगैँँ, नैन नीर जानि डारौँ ।  
 सेवा करीँ जानि सुत अपनौँ, कियौँ प्रतिपाल हमारौँ ॥  
 हमेंँ तुम्हेंँ अंतर कछु नाहींँ, तुम जिय ज्ञान बिचारौँ ।  
 सूरदास प्रभु यह बिनती हैँ, उर जानि प्रीति बिसारौँ ॥३४॥

✓ गोपालराइ हैंँ न चरन तजि जैँहैंँ ।

तुमहिँँ छौँँडि मधुवन मेरे मोहन, कहा जाइ ब्रज लैँहैंँ ॥  
 कैँहैंँ कहा जाइ जमुमत सौँँ, जब सन्मुख उठि ऐँहैँ ।  
 प्रात समय दधि मथत छौँँडि कैंँ, काहिँ कलेऊ देँहैँ ॥  
 बारह बरस दियौँ हम दीडौँ, यह प्रताप बिनु जाने ।  
 अब तुम प्रगट भएँ वसुधौँ-सुत रागँँ बचन परमाने ॥  
 रिपु हति काज सबैँ कत कीन्हौँ, कत आपदा बिनासी ।  
 डारि न दियौँ कमल कर तैंँ गिरि, दबि मरते ब्रजवासी ॥  
 बासर संग सखा सब लीन्हे, टेरे न धेनु चरेहौँ ।  
 क्यौँँ रहिहैंँ मेरे प्रान दरस बिनु, जब संघ्या नहिँँ ऐँहौँ ॥  
 ऊरध स्वॉँस चरन गति थाकी, नैन नीर मरहाइ ।  
 सूर नंद बिछुरत कीँ वेदनि मो पैँ कहीँ न जाइ ॥३५॥

## मथुरा गमन

(मेरे) मोहन तुमहिँ बिना नहिँ जैहँ ।

महरि दौरि आगे जब ऐहै, कहा ताहि मैँ कैहँ ॥  
 माखन मथि राख्यौ ह्वैहै तुम हेत, चलौ मेरे बारे ।  
 निठुर भए मधुपुरी आइ कै, काहँ असुरनि मारे ॥  
 सुख पायौ बसुदेव देवकी, अरु सुख सुरनि दियौ ।  
 यहै कहत नँद गोप सखा सब, बिदरन चहत हियौ ॥  
 तब माथा जड़ता उपजाई, निठुर भए जदुराइ ।  
 सूर नंद परमोधि पठाए, निठुर ठगौरी लाइ ॥३७॥

✓ उठे कहि माधौ इतनी बात ।

जिते मान सेवा तुम कीन्हौ, बदलौ दयौ न जात ॥  
 पुत्र हेत प्रतिपार कियौ तुम, जैसँ जननी तात ।  
 गोकुल बसत हंसत खेलत मोहिँ, द्यौस न जान्यौ जात ॥  
 होहु विदा घर जाहु गुसाईँ, माने रहियौ नात ।  
 ठाढ़ी थक्यौ उतर नहिँ आवै, लोचन जल न समात ॥  
 भए बल-हीन खीन तन कंपित, उर्यौ ब्यारि बस पात ।

धकधकात हिय बहुत सूर उठि, चले नंद पछितात ॥३८॥

बार-बार भग जोवति माता । व्याकुल विनु मोहन बल-भ्राता ॥  
 आवत देखि गोप नंद साथे । बिचि बालक विनु भई अनाथा ।  
 धाई धेनु बच्छ ज्यौँ पंसँ । माखन बिना रहे ध्यौँ कैसँ ।  
 ब्रज-नारी हरपित सब धाईँ । महरि जहाँ-तहाँ आतुर आईँ ॥  
 हरपित मातु रोहिनी आई । उर भरि हलधर लेउँ कन्हाई ॥  
 देखे नंद गोप सब देखे । बल मोहन कौँ तहाँ न पेखे ।  
 आतुर मिलन-काज ब्रज-नारी । सूर मधुपुरी रहे सुरारी ।

उलटि पग कैसँ दीन्हौ नंद ।

छाँड़े कहाँ उभै सुत मोहन, धिक जीवन भक्तिमंद ॥  
 कै तुम धन-जोवन-भद्र माते कै तुम छूटे बंद ।  
 सुफलक-सुत बैठी भयौ हमकौँ, लौ गयौ आनंदकंद ॥  
 राम कृष्ण विनु कैसँ जीजै, कठिन प्रीति कैँ फंद ।  
 सूरदास मैँ भई अभागिन, तुम विनु गोकुलचंद ॥४०॥

दोउ ढोटा गोकुल-नायक मेरे ।

काहँ नंद छाँड़ि तुम आए, प्रान-जिवन सब करे ॥

तिनकेँ जात बहुत दुख पायौ, रोर परी इहिँ खेरै ।  
 गोसुत गाइ फिरत हैँ दहुँ दिसि, वै न चरैँ तृन घेरै ॥  
 प्रीति न करी राम दसरथ की, प्राण तजे विनु हेरैँ ।  
 सूर नद सौँ कहति जसोदा, प्रबल पाप सब मेरैँ ॥४

नंद कहौ हो कहँ छौँड़े हरि ।

लै जु गएँ जैसेँ तुम छौँतैँ, ल्याएँ किन वैसहिँ आगैँ धरि ।  
 पालि पोषि मैँ किएँ सयाने, जिन मारे गज मल्ल कंस अरि ।  
 अब भएँ तात देवकी बसुद्यौ, बाँह पकरि ल्याये न न्याव करि ।  
 देखौ दूध दही घृण माखन, मैँ राखे सब वैसैँ ही धरि ।  
 अब को खाइ नंदनंदन विनु, गोकुल मनि मथुरा जु गएँ हरि ।  
 श्रीमुख देखन कौँ ब्रजवासी, रहे ते घर आँगन मेरैँ भरि ।  
 सूरदास प्रभु केँ जु सँदेसे, कहे महर आँसू गदगद करि ।

✓ जसुदा कान्ह कान्ह कै बूझै ।

फूटि न गईँ तुम्हारी चारौ, कैसैँ मारग सुझै ॥  
 इक तौ जरी जात विनु देखैँ, अब तुम दीन्हौ फौँकि ।  
 यह छतिया मेरे कान्ह कुँवर विनु, फटि न भईँ द्रैँ टूक ॥  
 धिक तुम धिक ये चरन अहौ पति, अध बोलत उठि धाएँ ।  
 सूर स्याम बिहुरन की हम पै, दैन बधाईँ आएँ ॥४

नंद हरि तुमसौँ कहा कह्यौ ।

सुनि सुनि निहुर बवन मोहन के, कैसैँ हृदय रह्यौ ॥  
 छौँड़ि सनेह चले मंदिर कत, दौरि न चरन गह्यौ ।  
 दरकि न गईँ बज्र की छाती, कत यह सूल सख्यौ ॥  
 सुरति करत मोहन की बातैँ, नैननि नीर बह्यौ ।  
 सुधि न रही अति गलित गात भयौ, मनु डसि गायौ अह्यौ ॥  
 उन्हेंँ छौँड़ि गोकुल कत आएँ, चाखन दूध दह्यौ ।  
 तजे न प्राण सूर दसरथ लौँ, हुतौ जन्म निबह्यौ ॥४

कहाँ रह्यौ मेरी मन-मोहन ।

वह मूरति जिय तैँ नहिँ विसरति, अंग अंग सब सोहन ।  
 कान्ह बिना गौँवैँ सब ब्याकुल, को ल्यावैँ भरि दोहन ।  
 माखन खात खदावत ग्वालनि, सखा लिएँ सब गोहन ।

मथुरा गमन

व वै लीला सुरति करति हैं, त्रित चाहत उठि जोहन ।  
रूदास-प्रभु के बिछुरे तैं, सरियत है अति छोहन ॥४२  
न तथा ब्रजदशा

ग्वारनि कही ऐसी जाई ।

भए हरि मधुपुरी राजा, बड़े बंस कहाइ ॥  
सूत भागव बहत बिरदानि, वरनि बमुधौ सात ।  
राज-भूवन अंग आजत, अहिर कहत लजात ॥  
मातु पितु बसुदेव दैवै, नंद जसुमति नाहिं ।  
यह सुनत जल नैन दारत, मीं जि कर पछितारहिं ॥  
मिली कुबिजा मलै लै कै, सो भई अरधरा ।  
सूर-प्रभु बस भए ताकै करत नाना रंग ॥४३॥  
कैसे री यह हरि करिहै ।

राधा कै तजिहै मनमोहन, कहा कंस-दासी धरिहै ॥  
कहा कहति वह भइ पटरानी, वै राजा भए जाइ उहाँ ।  
मथुरा बसत लखत नहिं कोऊ, को आयौ, को रहत कहाँ ॥  
लाज रेंचि कूबरी बिसाही, संग न छाँडत एक वरी ।  
सूर जाहि परतीति न काहु, मन सिहात यह करनि करी ॥४७॥

कुबिजा नहिं तुम देखी है ।

दधि बेचन जत्र जाति मधुपुरी, मै नीकै करि पेपी है ।  
महल निकट माली की बेटी, देखत जिहिं नर-नारि हसै ॥  
कोटि बार पीतरि जौ दाहौ, कोटि बार जो कहा कसै ।  
सुनियत ताहि सुंदरी कीन्हीं, आपु भए ताकै राजी ।  
सूर मिलै मन जाहि जाहि सैं, ताकौ कहा करै काजी ॥४८॥

कोटि करौ तनु प्रकृति न जाइ ।

अहीर वह दासी पुर की, बिधिना जोरी भली मिलाइ ॥  
सेन कै मुख नाउँ न लीजै, कहा करौ कहि आवत मोहिं ।  
यामहिं दोष किधौ कुबिजा कै, बहै कहाँ मै बूमति तोहिं ॥  
यामहिं दोष कहा कुबिजा कौ, चेरी चपल नगर उपहास ।  
दी टेकि चलति पग धरनी, यह जानै दुख सूरजदास ॥४९॥

कंस बधौ कुबिजा कै काज ।

और नारि हरि कै न मिली कहूँ, कहा गँवाई लाज ॥

जैसैँ काग हंस की संगति, लहसुन संग कपूर ।  
जैसैँ कंबन काँच बराबरि, गेरु काम सिंदूर ॥  
भोजन साथ सूद बाश्हन के, तैसौ उनको साथ ।  
सुतहु सूर हरि गाइ चरैया, अब भए कुबिजा-नाथ ॥१०॥

वैँ कह जानैँ पीर पराई ।

सुंदर स्याम कमल-दल लोचन, हरि हलधर के भाई ॥  
मुख मुरली सिर मोर पखावा, बन बन धेनु चराई ।  
जे जमुना जखँ रंग रँगो हँ, अजहुँ न तजत कराई ॥  
वहई देखि छवरी भूले, हम सब गईँ बिसराई ।  
सूरज चातक बूँद भई है, हेरत रहे हिराई ॥११॥

तब तैँ भिदे सब आनंद ।

या अज के सब भाग संपदा, तैँ जु गए नंदनंद ॥  
बिह्वल भई जसोदा डोलति, दुखित नंद उपनंद ।  
धेनु नहीं पय खवति रुचिर मुख, चरति नहीं वृष कंद ॥  
विषम बियोग दहत उर सजनी, बाढ़ि रहे दुख वंद ।  
सीतल कौन करै री माई, नाहिँ इहाँ अज-चंद ॥  
रथ चढ़ि सले गहे नहिँ काहू, चाहिँ रही मति-मंद ।  
सूरदास अब कौन छुडावै, परे बिरह कैँ फंद ॥१२॥

इक दिन नंद चलाई बात ।

कहत-सुनत गुन राम कृष्ण कैँ हूँ आयौ परभात ॥  
वैसैँ हिँ भोर भयौ जसुमति कौ, लोचन जल न समात ।  
सुमिरि सनेह बिहरि उर अंतर, दरि आवत दरि जात ॥  
जद्यपि वैँ बसुदेव देवकी, हँ निज जननी तात ।  
बार एक मिलि जाहु सूर-प्रभु धाई हूँ केँ नात ॥१३॥

चूक परी हरि की सेवकाई ।

यह अपराध कहाँ लौँ बरनौँ, कदि कदि नंद-महर पछिताई ॥  
कौमल चरन-कमल बंटक कुस, हम उन पै बन गाइ चराई ।  
रंचक दधि के काज जसोदा, वाँधे कान्ह उलूपल लाई ॥  
इंद्र-प्रकोप जानि अज राखे, बहन फँस तैँ मोहिँ मुकराई ।  
अपने तन-धन-सोम कंस बर, अगौँ कैँ दीन्हे धोउ भाई ॥



निकट बसत कबहुँ न मिलि आयौ, इते मान मेरी निहुराई ।  
सूर अजहुँ नातौ मानन है, प्रेम सहित करै नंद-दुहाई ॥२४॥

लै आवहु गोकुल गोपालहि ।

पाइनि परि क्यों हूँ खिनती करि, छल बल बाहु बिसालहि ॥  
अब की बार नैकु दिखरावहु, नंद आपने लालहि ।  
राइनि रानत ग्वार योसुत सँग, सिखवत बैन रसालहि ॥  
जद्यपि महाराज सुख संपति, कौन गनै यनि लालहि ।  
तदपि सूर वै छिन न तजत है, वा हूँधुची की मालहि ॥२५॥

हैं तौ माई मथुरा ही पै जैहैं ।

दासी हूँ बसुदेव राइ की, दरसन देखत रहैं ॥  
राखि राखि एते दिखसनि मोहि, कहा कियो तुम नीकौ ।  
सोऊ तौ अफर गए लै, तनक हिलौना जी कौ ॥  
मोहि देखि कै लोग हसै गे, अह किन कान्ह हसै ।  
सूर असीस जाइ दैहैं, जनि न्हातहु बार ससै ॥२६॥

पंथी इतनी कहियो बात ।

तुम बिनु इहाँ कुँवर वर मेरे, होत जिते उतपात ॥  
अकी अघासुर टरत न टारे, बालक बनाहैं न जात ।  
अज पिजरी रुचि मानौ राखे, निकसन कौँ अकुलात ॥  
गोपी गाइ सकल लघु क्षीरध, पीत बरन हस गात ।  
परम अनाथ देखियत तुम बिनु, कोहि अवलंबै तात ॥  
कान्ह कान्ह के टेरत तब धौँ, अब कैसै जिय मानत ।  
यह व्यवहार आहु लौँ है ब्रज, कपट नाट छल उगत ॥  
दसहूँ दिसि तै उदित होत है, दावानल के कोट ।  
आँखिनि मूँदि रहत समुख हूँ, नाम-कवच दे ओट ॥  
ए सब दुष्ट हते हरि जेतै, भए एकही पेट ।  
सखर सूर सहाइ करौ अब, समुक्ति पुरातन हेट ॥२७॥

सँदेसौ देवकी सौँ कहियो ।

हैं तौ धाइ तिहारे सुत की, मया करत ही रहियो ॥  
जद्यपि देव तुम जानति उनकी, तक मोहि कहि आवै ।  
यात होत मेरे लाल लडैतै, माखन रोटी भावै ॥

तेल उबटनी शरु ताती जल ताहि देगि भजि जाते ।  
 जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती, क्रम क्रम करि कै न्हाते ॥  
 सूर पथिक सुनि मोहि रैनि दिन, बह्यौ रहल उर सोच ।  
 मेरो अलक लवैतो मोहन लवै करत सँकोच ॥५॥  
 मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कुछ वैतहिँ धर्यौ रहै ।  
 को उठि प्रात होत ले माखन, को कर नेति गहै ॥  
 सूने भवन जसोदा सुत के, गुन गुनि मूल सहै ।  
 दिन उठि घर घेरत ही गवारिनि, उरहन कोउ न कहै ॥  
 जो ब्रज मै आनंद हुताँ, सुनि मनसा हू न गहै ।  
 सूरदास स्वामी बिनु गोकुल, कौड़ी हू न लहै ॥५६॥

### गोपी विरह

चलत गुपाल के सब चले ।

शरणा की अरु  
 - २१ -

यह प्रीतम हौँ प्रीति निरंतर, रहे न अर्ध पले ॥  
 धीरज पहिल करी चलिवैँ की, जैसी करत भले ।  
 धीर चलत मेरे नैननि देखे, तिहिँ छिन आँसु हले ॥  
 आँसु चलत मेरी बलयनि देखे, भए अंग सिथिले ।  
 मन चलि रह्यौ हुतौ पहिलैँ ही, चले सबै बिमले ।  
 एक न चलैँ प्रान सूरज-प्रभु, असलेहुँ साल सले ॥६०॥

करि गए थोरे दिन की प्रीति ।

कहँ वह प्रीति कहँ यह विछुरनि, कहँ मधुवन की रीति ॥  
 अब की बेर मिलौँ मनमोहन, बहुत भई विपरीति ।  
 कैसेँ प्रान रहत दरसन बिनु, मनहुँ गए जुग वीति ॥  
 कृपा करहु गिरिधर हम ऊपर, प्रेम रह्यौ तन जीति ।  
 सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु, भईँ भुस पर की भीति ॥

प्रीति करि दीन्ही गरुँ छुरी ।

जैसेँ अधिक चुगाइ कपट-कन, पावैँ करत छुरी ॥  
 मुरली मधुर चपे काँपा करि, मोर चंद्र फँदवारि ।  
 बंक बिलोकनि लगी, लोभ बस, सकी न पंख पसारि ॥  
 तरफत छाँडि गए मधुवन कौँ, बहुरि न कीन्ही सारि ।  
 सूरदास-प्रभु संग कल्पतरु, उलटि न नोठी डारि ॥६२॥

जो मधुवन से  
 मधुवन से  
 गोपी प्रेम की  
 मधुवन से  
 मधुवन से  
 मधुवन से

सूरदास प्रभु

सूरदास प्रभु

नाथ अनाथनि की सुधि लीजै ।

गोपी, न्याल, गाड़, गोसुत सब, दीन मल्लीन दिनहिँ दिन छीजैँ ॥  
 नैननि जलबारा बाढ़ी अति, बूढ़त ब्रज किन कर गहि लीजै ।  
 इतनी बिनती सुनहु हमारी, बारक हूँ पतिया। लिखि दीजै ॥  
 चरन कमल दरसन नव नवका, कन्हारिषु जगत जस लीजै ।  
 सूरदास-प्रभु आस मिलन को, एक बार आवन ब्रज कीजै ॥६३॥

देखियति कालिंदी अति कारी ।

अहौ पथिक कहियौ उन हरि सौँ, भई विरह जु र जारी ॥  
 गिरि-प्रजंक तैं गिरति धरनि अँसि तरंग तरफ तन भारी ॥  
 तट बारू उपचार चूर, जल-पूर प्रस्वेद पनारी ॥  
 बिगलित कच कुल कँस कूल पर, पंक जु काजल सारी ।  
 भों रँ अमृत अति फिरति अमित गति, दिसि दिसि दीन दुखारी ॥  
 निसि दिन चकई पिय जु रटति है, भई मनौ अनुहारी ॥  
 सूरदास-प्रभु जो जमुना गति, सो गति भई हमारी ॥६४॥

परखौ कौन बोख कौ कीजै ।

ना हरि जाति न पाँति हमारी, कहा मानि दुख लीजै ॥  
 नाहिँन मोर-चंद्रिका माथै, नाहिँन उर बनमाल ।  
 नाहिँ सोभित पुहुपनि के भूषन, सुंदर श्याम तमाल ॥  
 नन-नंदन गोपी-जन-बरलभ, अब नाहिँ कान्ह कहावत ।  
 वासुदेव, जादवकुल-दीरक, बंदी जन बरनावत ॥  
 बिसरथौ सुख नातौ गोकुल को, और हमारे अंग ।  
 सूर श्याम वह गई सगाई, वा मुरली कँ संग ॥६५॥

अब वै बातें उलटि गई ।

जिन बातनि लागत सुख आली, तेऊ दुसह भई ॥  
 रजनी श्याम श्याम सुंदर सँग, अ पावस की गरजनि ।  
 सुख समूह की अवधि भापुरी, पिय रस वस की तरजनि ॥  
 मोर पुकार गुहार कोकिला, अलि गुंजार सुहाई ।  
 अब लागति पुकार दादुर सम, बिनही कुँवर कन्हारै ॥  
 चंदन चंद समीर अग्नि सम, तनहिँ देत दव लाई । -  
 कालिंदी अरु कमल कुसुम सब दरसन ही दुखदाई ॥

सरद वसंत सिसिर अरु ग्रीष्म, हिम-रितु की अधिकार्है ।  
पावस जैरँ सूर के प्रभु बिनु, तरफत रैनि बिहाई ॥६६॥

मिलि बिहुरन की बेदन न्यारी ।

जाहि लगै सोई पै जानै, बिरह-पीर अति भारी ॥

जब यह रचना रची बिधाता, तबहीं क्यौं न सँभारी ।

सूरदास-प्रभु काहँ जियाई, जनमत ही किन मारी ॥६७॥

मधुबनतुम क्यौं रहत हरे ।

बिरह बियोठा स्याम सुंवर के ठाढ़े क्यौं न जरे ॥

मोहन बनु बजावल तुम तर, साखा टेके खरे ।

मोहे थावर अरु जइ जंगम, सुनि जन ध्यान टरे ॥

वह चितवनि तू मन न धरत है, फिरि फिरि पुहुप धरे ।

सूरदास प्रभु बिरह दवानल, नख सिख लौं न जरे ॥६८॥

बहुरौ देखिबौ इहिं भौंति ।

असन बाँटत खात बैठे, बालकन की पौंति ॥

एक दिन नवनीत चोरत, हौं रही कुरि जाइ ।

निरखि मम छाया भजे, मैँ दौरि पकरे धाइ ॥

पौं छि कर सुख लई कनियों, तब गई रिस भागि ।

वह सुरति जिय जाति नाही, रहे छाती लागि ॥

जिन घरनि वह सुख बिलोक्यौ, ते लगत अब खान ।

सूर बिनु ब्रजनाथ देखे, रहत पापी प्रान ॥६९॥

कब देखौं इहिं भौंति कन्हाई ।

मोरनि के चँदवा साथे पर, कौंध कामरी लकट सुहाई ॥

बासर के बीतेँ सुरभिन संग, आवत एक महाछबि पाई ।

कान अँपुरिया घालि निकट पुर, मोहन राग अहीरी गाई ॥

क्यौं हूँ न रहत प्रान दरसन बिनु, अब कित जतन करे री माई ।

सूरदास स्वामी नहिं आए, बदि जु गए अवध्याँजब भराई ॥७०॥

गोपालहिं पावौं धौं किहिं देस ।

सिंगी मुद्रा कर खप्पर लै, करिहौं जोगिति भेस ॥

कंधा पहिरि विभूति लगार्क, जटा बँधाऊँ फेस ।

इरि कारन / गोरखहिं जराक, जैसेँ स्वाँग महेस ॥

तन मन जाँरौँ भस्म चढ़ाऊँ, विरहा के उदस ।  
सूर स्याम बिनु हम हैं ऐसी, जैसेँ मनि बिनु सोस ॥७१॥

फिरि ब्रज बसौँ गोकुलनाथ ।

अब न तुमहिँ जगाइ पठवैँ, गोधननि के साथ ॥  
बरजैँ न माखन खात कबहुँ, दखौँ दैत लुटाइ ।  
अब न देहिँ उराहनौँ, नँद-घरनि आरिँ जाइ ॥  
दौरि दाबरि देखि नहिँ, लकुटी जसोदा पानि ।  
चोरी न देहिँ उचारि कै, औगुन न कहिहैँ आनि ॥  
कहिहैँ न चरनि देन जावक, गुहन बेनी फूल ।  
कहिहैँ न करन सिँरार कबहुँ, बसन जमुना फूल ॥  
करिहैँ न कबहुँ मान हम, हठिहैँ न भोगत दान ।  
कहिहैँ न सुदु मुरली बजावन, करन तुमसौँ गान ॥  
देहु दरसन नद-नंदन, मिलन की जिय आस ।  
सूर हरि के रूप कारन, मरत लोचन प्यास ॥७२॥

काहैँ पीठि दई हरि मोसौँ ।

तुमही पीठि भावते दोन्हौँ, और कहा कहि कोसौँ ॥  
मिलि बिल्वरे की पीर सखी री, राम सिया पहिचाने ।  
मिलि बिल्वरे की पीर सखी री, पय पानी उर आने ॥  
मिलि बिल्वरे की पीर कठिन है, कहुँ न कोऊ मानै ।  
मिलि बिल्वरे की पीर सखी री, बिल्वर्यौ होइ सो जाने ॥  
बिल्वरे रामचंद्र औ दसरथ, प्रान तजे छिन माहीं ।  
बिल्वर्यौ पात गिर्यौ तरुवरतैँ, फिरि न लगे उहि ठाहीं ॥  
बिल्वर्यौ हंस काप बटहू तैँ, फिरि न आव बट माहीं ।  
मैँ अपराधनि जँवत बिल्वरी, बिल्वर्यौ जीवत नाहीं ॥  
नाद कुरंग मीन जत बिल्वरे, होइ कीट जरि खेहा ।  
स्याम बियोगनि अलिहिँ सखी री, भई सँवरी देहा ॥  
गरजि गरजि बादर उनये हैँ, वूँदनि बरपत मेहा ।  
सूरदास कहूँ कैसेँ निबहै, एक ओर कौँ नेहा ॥७३॥

बारक जाइयौँ मिलि माथौ ।

को जानैँ तन छूटि जाइगौँ, सूख रहैँ जिय साधौ ॥

पहुनेँ हु नंद बवा के आदहु, देखि लेउँ पल आधौ ।  
मिजैँ ही मैँ बिपरीत करी बिधि, होत दरस कौ बाधौ ॥  
सो सुखसिख सनकादि न पावत, जो सुख गोपिनि लाधौ ।  
सूरदास राधा बिलपति है, हरि कौ रूप अगाधौ ॥७४॥

सखी इन नैननि तैँ घन हारे ।  
बिनहीँ रिनु बरपत निसि बासर, सदा भलिन दोउ तारे ॥  
ऊरव स्वास समीर तेज अति, सुख अनंक द्रुम डारे ।  
बदन सदन करि बसे बचन खग, दुख पावस के मारे ॥  
दुरि दुरि बँद परत कंचुके पर, मिलि अंजन सौँ कारे ।  
मानौ परनकुटी सिख कीन्ही, बिधि भूरति धरि न्यारे ॥  
धुमरि धुमरि बरपत जल छाँड़त, डर लागत अधियारे ॥  
बूड़त ब्रजहिँ सूर को राखै, विनु गिरिवरधर प्यारे ॥

निसि दिन बरपत नैन हमारे ।

सदा रहति बरपा रिनु हम पर, जब तैँ स्याम सिधारे ॥  
दग अंजन न रहत निसि बासर, कर कपोल भए कारे ।  
कंचुकेपट सूखत नहिँ कबहुँ, उर बिच बहत पनारे ॥  
आँसू सलिल सबै भइ काया, पल न जात रिस टारे ।  
सूरदास-अभु यहै परेखौ, गोकुल काहै बिसारे ॥७६॥

हरि दरसन कौ तरसतिँ अखियाँ ।

काँकतिँ कलतिँ करोखा बैठी, कर मीड़तिँ ज्यौँ मखियाँ ॥  
बिछुरीँ बदन-सुधानिधि-रस तैँ, लगतिँ नहीँ पल पँखियाँ ।  
इकटक चित्तवतिँ उड़ि न सकतिँ जनु, थकित भईँ लखि सुखियाँ ॥  
बार-बार सिर धुनतिँ बिसूरतिँ, बिरह-ग्राह जनु भखियाँ ।  
सूर सुरूप मिले तैँ जीवहिँ, काट किनारे नखियाँ ॥४॥

( मेरे ) नैना बिरह की बेलि बई ।

सौँचत नैन-नीर के सजनी, मूल पताल गई ॥

बिगलित लता सुभाई आपनैँ, छाया सघन भई ।

अब कैसेँ निरवारौँ सजनी, सब तन पसरि छई ॥

को जानैँ काहू के जिय की, छिन छिन होत नई ।

सूरदास स्वामी के बिहारेँ, धानी प्रेम जई ॥७५॥

रक्षताकेतव  
आ सांगसच

लोभियाँ

सांग

श्रीगुरुभक्त

## मथुरा गमन

ब्रज बसि काठे बोल सहैँ ।

इन लोभी नैननि के काजैँ, परबस भइ जो रहैँ ॥  
 -विसरि लाज गइ सुधि नहिँ तन की, अब धौँ कहा कहैँ ।  
 मेरे जिय मैँ ऐसी आवति, जमुना जाइ बहैँ ॥  
 इक बन हूँ दि सकल बन हूँ दौँ, कहूँ न स्याम लहैँ ।  
 सूरदास-प्रभु तुम्हारे दरस कौँ, इहिँ दुख अधिक दहैँ ॥७६॥

हो, ता दिन कजरा मैँ देहैँ ।

जा दिन नंदनंदन के नैननि, अपने नैन मिलैहैँ ॥  
 सुनि री-सखी यहै जिय मेरैँ, भूलि न और चितैहैँ ।  
 अब हठ सूर यहै व्रत मेरौ, कौँकिर खै मरि जैहैँ ॥७७॥

-देखि सखी उत है वह गाउँ । Sub

जहाँ बसत नंदलाल हमारे, मोहन मथुरा नाउँ ॥  
 कालिंदी कैँ कूल रहत हैँ; परम मनोहर ठाउँ ।  
 जौ तन पंख होइँ सुनि सजनी, अबहिँ उहाँ उड़ि जाउँ ॥  
 होनी होइ होइ सो अबहीं, इहिँ ब्रज अन्न न खाउँ ।  
 सूर नंदनंदन सौँ हित करि लोगनि कहा डराउँ ॥७८॥

लिखि नहिँ पठवत हैँ दूँ बोल । Sub

इँ कौड़ी के कागद मसि कौँ, लागत है बहु मोल ?  
 हम इहि पार, स्याम पैले तट, बीच विरह कौ जोर ।  
 सूरदास प्रभु हमरे मिलन कौँ, हिरदै कियो कठोर ॥७९॥

सुपनैँ हरि आए हौँ किलकी ।

द जु सौति भई रिपु हमकौँ, सहि न सकी रति तिल की ॥  
 जागौँ तौ कोऊ नाहीं, रोके रहति न हिलकी ।  
 न फिरि जरनि भई नख सिख तैँ, दिया बाति जनु मिलकी ॥  
 हिली दसा पलटि लीन्ही है, त्वचा तचकि तनु पिलकी ।  
 ब कैसैँ सहि जाति हमारी, भई सूर गति सिल की ॥८०॥

पिय बिनु नागिनि कारी रात । Sub

जौ कहूँ जामिनि उवति जुन्हैया, डसि उलटी हूँ जात ॥  
 जंत्र न फुरत मंत्र नहिँ लागत, प्रीति सिरानी जात ।  
 सूर स्याम बिनु बिकल विरहिनी, मुरि-मुरि लहरैँ खात ॥८१॥

मोकैँ माई जमुना जस हँ रही ।

कैसेँ मिलौँ श्यामसुंदर कैँ, बैरिनि बीच बही ॥  
 कितिक बीच मथुरा अह नोकुल, आवत हरि जु नहीं ॥  
 हम अबला कछु मगम न जान्यौ, चलत न फेँट रही ॥  
 अब पछितारि प्रान दुख पावत, जाति न बात कही ।  
 सूरदास प्रभु सुमिरि-सुमिरि गुन, दिन-दिन सूख सही ॥८८

नैन सखीने श्याम, बहुरि कब आवहिँगे ।

बै जौ देखत राते राते, फूलनि फूती डार ।  
 हरि बिनु फूलभरी ली लागत, ऋरि ऋरि परत अंगार ॥  
 फूल बिन नहिँ जाउँ सखी री, हरि बिनु कैसेँ फूल ।  
 सुनि री सखि मोहिँ राम दुहाई, लागत फूल त्रिपुल ।  
 जब मैँ पतवट जाउँ सखी री, वा जमुना केँ तीर ।  
 भरि भरि जमुना उमड़ि चलति है, इन नैननि केँ नीर ॥  
 इन नैननि केँ नीर सखी री, सेज भई धरनाउ ।  
 चाहति हौँ ताही पै चढ़ि कै, हरिजू केँ ढिग जाउँ ॥  
 लाल पियारे प्रान हमारे, रहे अघर पर आइ ।

सूरदास-प्रभु कुंज-बिहारी, मिलत नहीं क्यौँ धाइ ॥८९

प्रीति करि काहू सुख न लखौ ।

प्रीति पतंग करी पावक सौँ, आरै प्रान दखौ ॥

अलि-सुत प्रीति करी जल सुत सौँ, संपुट माँझ गखौ ।

सारंग प्रीति करी जु नाद सौँ, सन्मुख बान सखौ ॥

हम जौ प्रीति करी भाधव सौँ, चलत न कछु कखौ ।

सूरदास प्रभु बिनु दुख पावत, नैननि नीर बखौ ॥९०

प्रीति तौ मरिबौऊ न बिचारै ।

निरखि पतंग उद्योति-पावक उथौँ, जरत न आपु सँभारै ॥

प्रीति कुरंग नाद मन मोहित, अधिक निकट हँ मारै ।

प्रीति परेवा उड़त गगन तैँ, गिरत न आपु सँभारै ॥

सावन मास पपीहा बोलत, पिय पिय करि जु पुकारै ।

सूरदास-प्रभु दरसन कारन, ऐसी भौँति बिचारै ॥९१

जनि कोउ काहू केँ बस होहि ।

ज्यौँ चकई दिनकर बस डोलत, मोहिँ फिरावत मोहि ॥



मथुरा गमन

हम तो रीझि लडू भई लालन, महा प्रेम तिय जानि ।  
 बंवन अत्रवि भ्रमति बिसि-बासर, को सुरमावत आनि ॥  
 उरभे संग अंग अंगनि प्रति बिरह, बेलि की नाई ।  
 सुकुलित कुसुम नैन निद्रा तजि, रूप-सुधा सियराई ॥  
 अति आधीन हीन-मति ब्याकुल, कहँ लौँ कहौ बनाई ।  
 ऐसी प्रीति-रीति रचना पर, सूरदास बलि जाई ॥८६॥

हरि परदेस बहुत दिन लाए ।  
 कारी घटा देखि बादर की, नैन नीर भरि आए ॥  
 बिर बटाक पंथी हौ तुम, कौन देस तँ आए ।  
 यह पाती हमरी लै दीजौ, जहाँ साँवरै छाए ॥  
 दादुर मोर पपीहा बोलत, सोवत मदन जगाए ।  
 सूर स्याम गोकुल तँ बिछुरे, आपुन भए पराए ॥८७॥

ये दिन रूसिबे के नाहीं ।  
 कारी घटा पौन भक्तभारे, लता तरुन लपटाहीं ॥  
 दादुर मोर चकोर मधुष पिक, बोलत अमृत बानी ।  
 सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, बैरिन रिनु निघरानी ॥८८॥

अब बरपा कौ आगम आयौ ।  
 ऐसे निहुर भए नँदनदन, संदेसौ न पठायौ ॥  
 बादर घोरि उठे चहुँ दिशि तँ, जलधर गरजि सुनायौ ।  
 एकै सुल रही मेरे जिय, बहुरि नहीं ब्रज छायौ ॥  
 दादुर मोर पपीहा बोलत, कोकिल सवद सुनायौ ।  
 सूरदास के प्रभु सौँ कहियौ, नैननि है भर लायौ ॥८९॥

सँदेसनि मधुवन कूप भरे ।  
 अपने तौ पठवत नहिँ मोहन, हमरे फिरि न फिरे ॥  
 जिते पथिक पठए मधुवन कौ, बहुरि न सोध करे ।  
 कै वै स्याम सिखाइ प्रमोदे, कै कहुँ बीच मरे ॥  
 कागद गारे, मेघ, मसि खूदी, सर दव लागि जरे ।  
 सेवक सूर लिखन कौ आँधौ, पलक कपाट अरे ॥९०॥

ब्रज पर अदरा आए गाजन ।  
 बुबन कोप ठए सुनि सजनी, फौज मदन लम्हौ साजन ॥

श्रीवा रंघनैन चातक जल, पिक मुख बाजे बाजन ।  
 चहुँदिसि तैँ तन विरहा घेर्यौ, कैसैँ पावति भाजन ॥  
 कहियत हुते स्याम पर पीरक, आएँ संकट काजन ।  
 सूरदास श्रीपति की सहिमा, मथुरा लागे राजन ॥

बहुरि हरि आवाहिँगे किहि काम ।

रितु बसंत अरु ग्रीषम बीते, वादर आएँ स्याम ॥  
 छिन मंदिर छिन द्वारैँ ठाढ़ी, यौँ सुखति हँँ घाम ।  
 तारे बनत गगन के सजनी, श्रीतैँ चारौँ जास ॥  
 औरौँ कथा सबैँ बिमराई, लेत तुम्हारौँ नाम ।  
 सूर स्याम ता दिन तैँँ बिल्लुरे, अस्थिर रहैँ कैँ चाम ॥६६

किधौँ धन गरजत नहिँ उन देसनि ।

किधौँ हरि हरषि इंद्र हठि बरजे, दादुर खाएँ सेषनि ।  
 किधौँ उहिँ देस बगनि मग छौँडे, घरनि न बँड प्रवेसनि ।  
 चातक मोर कोकिला उहिँँ बन, बधिकनि बधे बिसेषनि ।  
 किधौँ उहिँँ वेस बाल नहिँँ फूलतिँँ गाथातिँँ सखि न सुदेसनि ।  
 सूरदास-प्रभु पथिक न चलहीँँ, कासौँँ कहौँँ सदेसनि

आजु धन स्याम की अनुहारि ।

आएँ उनइँँ सँवरे सजनी, देखि रूप की आरि ॥  
 इंद्र धनुष मनु पीत बसंत छबि, दामिनि दसन बिचारि ।  
 जनु बगपौँति माल मोलिनि की, चितवत चित्त निहारि ॥  
 गरजत गगन गिरा गोबिंद मनु, सुनत नयन भरे वारि ।  
 सूरदास गुन सुमिरि स्याम के, बिकल भईँँ बजनारि ॥

हमारे माईँँ मोरवा बैर परे ।

धन गरजत बरज्यौँ नहिँँ मानत, त्योंँँ त्योंँँ रदत खरे ॥  
 करि करि प्रगट पंख हरि इनके, लैँ लैँ सीस धरे ।  
 याहीँँ तैँँ न बदत विरहिनि कौँँ, मोहन ढीठ करे ॥  
 को जानैँ काहे तैँँ सजनी, हमसौँँँ रहत अरे ।  
 सूरदास परदेस बसे हरि, ये बन तैँँँ न टरे ॥६७

बहुरि पपीहा बोझ्यौँँ माईँँ

नीँँँ द गईँँँ धिता धिस बाकी, सुरति स्याम की आईँँँ

श्रीवा रंघनैन चातक जल  
 चहुँदिसि तैँँ तन विरहा घेर्यौँँ  
 कहियत हुते स्याम पर पीरक  
 सूरदास श्रीपति की सहिमा  
 मथुरा लागे राजन ॥  
 बहुरि हरि आवाहिँँगे किहि काम ।  
 रितु बसंत अरु ग्रीषम बीते  
 वादर आएँ स्याम ॥  
 छिन मंदिर छिन द्वारैँ ठाढ़ी  
 यौँँ सुखति हँँँ घाम ।  
 तारे बनत गगन के सजनी  
 श्रीतैँँ चारौँँ जास ॥  
 औरौँँ कथा सबैँँ बिमराई  
 लेत तुम्हारौँँ नाम ।  
 सूर स्याम ता दिन तैँँँ बिल्लुरे  
 अस्थिर रहैँँ कैँँ चाम ॥६६  
 किधौँँ धन गरजत नहिँँ उन देसनि ।  
 किधौँँ हरि हरषि इंद्र हठि बरजे  
 दादुर खाएँ सेषनि ।  
 किधौँँ उहिँँ देस बगनि मग छौँँडे  
 घरनि न बँड प्रवेसनि ।  
 चातक मोर कोकिला उहिँँँ बन  
 बधिकनि बधे बिसेषनि ।  
 किधौँँ उहिँँँ वेस बाल नहिँँँ फूलतिँँँ गाथातिँँँ सखि न सुदेसनि ।  
 सूरदास-प्रभु पथिक न चलहीँँँ  
 कासौँँँ कहौँँँ सदेसनि  
 आजु धन स्याम की अनुहारि ।  
 आएँ उनइँँँ सँवरे सजनी  
 देखि रूप की आरि ॥  
 इंद्र धनुष मनु पीत बसंत छबि  
 दामिनि दसन बिचारि ।  
 जनु बगपौँति माल मोलिनि की  
 चितवत चित्त निहारि ॥  
 गरजत गगन गिरा गोबिंद मनु  
 सुनत नयन भरे वारि ।  
 सूरदास गुन सुमिरि स्याम के  
 बिकल भईँँँ बजनारि ॥  
 हमारे माईँँँ मोरवा बैर परे ।  
 धन गरजत बरज्यौँँ नहिँँँ मानत  
 त्योंँँँ त्योंँँँ रदत खरे ॥  
 करि करि प्रगट पंख हरि इनके  
 लैँ लैँ सीस धरे ।  
 याहीँँँ तैँँँ न बदत विरहिनि कौँँँ  
 मोहन ढीठ करे ॥  
 को जानैँ काहे तैँँँ सजनी  
 हमसौँँँँ रहत अरे ।  
 सूरदास परदेस बसे हरि  
 ये बन तैँँँँ न टरे ॥६७  
 बहुरि पपीहा बोझ्यौँँँ माईँँँ  
 नीँँँँ द गईँँँँ धिता धिस बाकी  
 सुरति स्याम की आईँँँँ

साधन भास भेष की वरपा, हैं उठि आँगन आई ।  
चहुँ दिखि गगन दाहिनी कों धति, तिहिँ जिय अधिक डराई ॥  
काहुँ राग मलार अलाप्यौ, सुरलि मथुर सुर गाई ।  
सूरदास विरहिनि भइ ब्याकुल, धरनि परी सुरसाई ॥६६॥

सखी री बातक मोहिँ जियावत ।

जैसेँ हिँ रैन रदति हैं पिय पिय, तैसेँ हे वह पुनि गावत ॥  
अतिहिँ सुकंठ, दाह प्रीतम केँ, तारु जीभ न लावत ।  
आपुन पियत सुभारस अमृत, बोलि बिरहिनी प्यावत ॥  
यह पंछी जु सहाइ न होती, प्राण महा दुख शवत ।  
जीवन सुफल सूर ताही कौ, काज पराय आवत ॥१००॥

कोकिल हरि कौ बोल सुनाउ ।

५-३

१) मधुवन तैं उपहारि स्याम कौँ, इहिँ ब्रज कौँ लै आउ ॥  
जा जल कारन दंत स्याने, तन मन धन सब साज ।  
सुजस विकात वचन के वदतैं, क्यौँ न बिसाहतु आज ॥ १०१ ॥  
कोजै कहु उरकार परायौ, इहै स्यानौ काज ॥  
सूरदास पुनि कहैं यह अवसर, बिनु वसंत रितुराज ॥ १०१ ॥

अथ यह बरपौ ब्रीति गई ।

जनि सोचहि, सुख मानि सशानी, भजी रितु सरद भई ॥  
कुल्ल सरोज सरोवर सुंदर, नव विवि नलनि नई ।  
२) उदित आरु चंद्रिका किरन, उर अंतर अमृत-मई ॥  
बडी घटा अभिमान मोह मद, तमिता तेज हई ।  
सरिता संजम स्वच्छ सलिल सब, फाटी काम कई ॥  
यहै सरद संदेस सूर सुनि, कहला कहि पठई ।  
[ यह सुनि सखी समानी आई, हरि-रति अवधि हई ॥ १०२ ॥

सरद समै हू स्याम न आय ।

को जानै काहे तैं सजनी, किहिँ वैरिनि बिरमाए ॥  
अमल अकासकास कुसुमित द्विति, लच्छद स्वच्छ जनाए ।  
३) सर सरिता सागर जल-उज्ज्वल, अति कुल कमल सुहाए ॥  
अहिँ मयंक, मकरंद कंज अलि, दाहक गरल जिवाए । ५-४  
प्रीतम रंग संग मिलि सुंदरि, रचि सचि सीँ चि सिराए ॥

सूनी भेज तुषार जमत चिर, बिरह सिंधु उपजाए ।  
अब गई आस सूर मिलिबे की, भए ब्रजनाथ पराए ॥१०॥

कोउ भाई वरजै री या चंदहिं ।  
U. 4. 10  
श्रीधरनाथ

अतिनि  
भरत

दूरि करहि बीता कर धरिबौ ।  
रथ थाक्यौ, मानौ मृग मोहे, नाहिं न होत चंद्र कौ हरिबौ ॥  
बोतै जाहि सोइ पै जानै, कठिन सु प्रेम पास कौ परिबौ ।  
प्राननाथ संगहिं तैं बिलुरे, रहत न नैन नीर कौ करिबौ ॥  
सीतल चंद अगिन सम लानत, कहिपु धीर कौन बिधि धरिबौ ।  
सूर सु कमलनयन के बिलुरे, भूठौ सब जतननि कौ करिबौ ॥१॥

कोउ भाई वरजै री या चंदहिं ।

अति हीं क्रोध करत है हम पर, कुमुदिनि कुल आनंदहि ॥  
कहाँ कहौ बरपा राखि तसचर, कमल बलाइक करे ।  
चलत न चपल रहत थिर कै रथ, बिरहिनि के तन जारे ॥  
निद्रति सैल उदधि पन्नग कैं, श्रीपति कमठ कठोरहिं ।  
देतिं असीस जरा देवी कौ, राहु केतु किन जोरहिं ॥  
ज्यै जल-हीन मीन तन ललफति, एसी गति ब्रजवालिहिं ।  
सूरदास अब आनि मिलावहु, मोहन मदन गुपालहिं ॥१॥

श्रीधरनाथ

भाई भोकैं चंद लग्यौ दुख वैन ।

कहँ वै स्वाम कहँ वै बतियौ, कहँ वै सुख की नैन ॥  
तारे गनत गनत हैं हारो, द्यकत लागे नैन ।  
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, बिरहिनि कैं नहिं चैन ॥१॥

अब या तनहिं राखि कह कीजै ।

सुनि री सखी स्वाम सुंवर बिनु, बाँटि बिषम बिष पीजै ॥  
कै गिरिपे गिरि चढ़ि सुनि सजनी, सीस संकरहिं छीजै ।  
कै दहिपे दारुन दावानल, जाइ जमुन धौंसि छीजै ॥  
हुसह विषोग बिरह माधौ के, को दिन ही दिन छीजै ।  
सूर स्वाम प्रीतम बिनु राधे, सोचि सोचि कर भीजै ॥१॥

श्रीधरनाथ

काहे कैं पिय पियहिं रदति हौ, पिय कौ प्रेम तेरो प्रान हरैगौ ।  
काहे कैं लोति नयन जल भरि भरि, नैन भरै कैसें सुल टरेगौ ॥  
काहे कैं स्वास उपास लोति हौ, बैरी बिरह कौ दवा बरेगौ ॥  
झार सुगंध सेज पुहपावलि, हार लुचै, हिय हार जरीगौ

बदन दुराड बैठे मंदिर में, बहुरि निसर्पति उदय करैगौ ।  
सूर सखी अपने इन नैननि, चंद चितै जति चंद जरैगौ ॥१०८

बिछुरे री मेरे बाल-सँघाती ।

निकसि न जात प्राण ये पापी, फाटति नाहिँ न छाती ॥  
हौ अपराधिनि दही मथति ही, भरी जोवन मदमाती ।  
जो हौँ जानति हरि कौ चलिबौ, लाज छौँडि सँग जाती ॥  
हरकत नीर नैन भरि सुंदरि, ककु न सौह दिन-रासी ।  
सूरदास-प्रभु दरसन कारन, सखियनि मिलि लिखी पाती ॥१०९

एक द्यौस कुंजनि में माई ।

नाना कुसुम लेंइ अपनैँ कर, दिप मोहिँ सो सुरति न जाई ॥  
इतने में घन गरजि वृष्टि करी, तनु भीउयौ मो भई जुड़ाई ।  
कंपत देखि उड़ाइ पीत पट, लै करुनामय कंठ खराई ॥  
कहँ वह प्रीति रीति मोहन की, कहँ अब धौँ एती निदुराई ॥  
अब बलवीर सूर-प्रभु सखि री, मधुवन बसि सब रति बिसराई ॥११०

मेरे मन इतनी सुल रही ।

वे बतियाँ इतियाँ लिखि राखी, जे नँदलाल कही ॥  
एक द्यौस मेरैँ गृह आय, हौँ ही महुँत दही ॥१११  
रति भाँगल में मान कियो सखि, सो हरि गुसा गही ॥  
सोचति अति पछिताति राधिका, सुरछित धरनि दही ।  
सूरदास प्रभु के बिछुरे नैँ, बिथा न जाति सही ॥११२॥

हरि कौ मारग दिन प्रति जोवति ।

चितवत रहत अकोर चंद उथौँ, सुमिरि-सुमिरि गुन रोवति ॥  
पतियाँ पठवति मसि नहिँ खूँटति, लिखि लिखि मानहु धोवति ।  
मूख न दिन निसि नीँद हिरानी, एकौ पल नहिँ सोवति ॥  
जे जे बसन स्याम सँग पहिरे, ते अजहूँ नहिँ धोवति ।  
सूरदास-प्रभु लुरहरे दरस बिनु, बृथा जबम सुख खोवति ॥११३

इहिँ दुख तन तरफत मरि जैहै ।

कबहुँ न सखी स्वाम-सुंदर वन, मिलिहैँ आइ अंक भरि लैहैँ ?  
कबहुँ न बहुरि सखा सँग ललना, ललित त्रिभंगी छविहैँ दिखैँ ?  
कबहुँ न बेनु अघर धरि मोहन, यह मति लै लै नाम बुलैँ ?

कबहुँ न कुंज भवन सँग जैहँ, कबहुँ न दूती लैन पठैहँ ?  
 कबहुँ न पकरि भुजा रस बस हँ, कबहुँ न प्रग परि मान भिटेहँ ?  
 याही तँ घट प्रान रहत हँ कबहुँक फिरि दरसन हरि देखैहँ ?  
 सूरदास परिहरत न यातै, प्रान तजै नहिँ पिय ब्रज ऐहँ ॥११३॥

सबै सुख ले जु गणु ब्रजनाथ ।

बिलखि बदन चितवति मधुवन तन, हम न गई उठि साथ ॥  
 वह मूरति चित तँ बिसरति नहिँ, देखि साँचरे गात ।  
 मदन गोपाल ठगौरी सेली, कहत न आवै बात ॥  
 नंद नंदन जु बिदेस गवन कियो, बैसी मीं जति हाथ ।  
 सूरदास-प्रभु तुम्हरे बिछुरे, हम सब भई अनाथ ॥११४॥

करिहौ मोहन कहुँ सँभारि, गोकुल-जन-सुखदारे ।

खरा, मृग, वृत्त, बेली वृंदावन, गोपा गवाल बिसारे ॥  
 नंद जसोदा मारग जोवै, निसि दिन दीन दुखारे ।  
 छिन छिन सुरति करत चरननि की, बाल बिनोद तुम्हारे ॥  
 दीन दुखी ब्रज रखौ न परि है, सुंदर त्याग लखारे ।  
 दीनानाथ कृपा के सागर, सूरदास-प्रभु प्यारे ॥११५॥

उनकौँ ब्रज बसिबौ नहिँ भावै ।

हौँ वै भूप भए त्रिभुवन के, हौँ कत गवाल कहवै ॥  
 हौँ वै छत्र सिंहासन राजन, को बछरनि सँग धावै ।  
 हौँ तौ बिबिध वस्त्र पाटंवर, को कमरी सचु पावै ॥  
 नंद जसोदा हूँ कौ बिसर्यौ, हमरी कौन चलावै ।  
 सूरदास प्रभु निडुर भए री, पातिहुँ लिखि न पठावै ॥११६॥

## उद्धव संदेश

१ ब्रज भोजना

अंतरजामी कुँवर कन्हाई ।

गुरु गृह पदत हुते जहँ चिया, तहँ ब्रज-वासिन की सुधि आई ।  
गुरु सौँ कछौ जोरि कर होऊ, दछिना कहौ सो देउ मँगार्ई ॥  
गुरु-पत्तनी कहौ पुत्र हमारे, मृतक भये सो देहु जिवाई ॥  
आनि दिष्ट गुरु-सुत जमपुर तैँ, तब गुरुदेव असीस सुनाई ।  
सूरदास-प्रभु आइ मधुपुरी, उधौ कौँ ब्रज दिशौ पठाई ॥१॥

जदुपति जानि उद्धव रीति ।

जिहिँ प्रगट निज सखा कहियत, करत भाव अनीति ॥  
विरह दुख जहँ नाहिँ-नैकहुँ तहँ न उपजै प्रेर ।  
रेख, रूप न बरन जाकैँ, इहिँ धरथौ वह नेम ॥  
त्रिगुन तन करि लखत हमकौँ, ब्रह्म मानत और ।  
बिना गुन क्यौँ पुढुमि उधरै, यह करत मन डौर ॥  
विरस रस किहिँ मंत्र कहिये, क्यौँ चलै संसार ।  
कछु कहत यह एक प्रगटत, अति भरथौ अहंकार ॥  
प्रेम भजन न नैकु याकैँ, जाइ क्यौँ समुझाइ ।  
सूर प्रभु मन यहै आनी, ब्रजहिँ देउ पठाइ ॥२॥

संग मिलि कहौँ कासौँ बात ।

यह तौ कहत जोग की बातैँ, जामैँ रस जरि जात ॥  
कहत कहा पितु मातु कौन के, पुरुष नारि कह नात ।  
कहाँ जसोदा सी है सैया, कहाँ नंद सम तात ॥  
कहँ वृषभानु सुता संग कौ सुख, वह बासर वह प्रात ।  
सखी सखा सुख नहि त्रिभुवन मैँ, नहिँ बैकुंठ सुहात ॥  
वै बातैँ कहिये किहिँ आगौँ, यह गुनि हरि पछितात ।  
सूरदास प्रभु ब्रज महिमा कहि, लिखी बदत बल आत ॥३॥

✓ तबहिँ उपग-सुत आइ गए ।

सखा सखा कछु अंतर नाहीँ, भरि भरि अंक लए ॥

अति सुंदर तन श्याम सरीखो, देखत हरि पछिताने ।  
 ऐसे कैँ वैसी बुधि होती, ब्रज पठऊँ मन आने ॥  
 या आगैँ रस-कथा प्रकासौँ, जोग-कथा प्रगटाऊँ ।  
 सूर ज्ञान याकौँ दृढ़ करिकैँ, जुवतिन्ह पास पठाऊँ ॥४॥

हरि गोकुल की प्रीति चलाई ।

सुनहु उषंग-सुत मोहिँ न बिसरत, ब्रज बासी सुखदाई ।  
 यह चित होत जाऊँ मैँ अबहीं, इहाँ नहीं मन लागत ।  
 गोपी ग्वाल गाइ बन चारन, अति दुख पायौँ त्यागत ॥  
 कहँ माखन-रोटी, कहँ जसुमति, जेँ वहु कहि-कहि प्रेम ।  
 सूर श्याम के बचन हँसत सुनि, थापत अपनौँ नेम ॥

जदुपति लख्यौँ तिहिँ सुसुकात ।

कहत हम मन रही जोई, भई सोई बात ॥  
 बचन परगट करन कारन, प्रेम कथा चलाई ।  
 सुनहु ऊधौँ मोहिँ ब्रज की, सुधि नहीं बिसराइ ॥  
 रैनि सोवत, दिवस जागत, नाहिँ मैँ मन आन ।  
 नंद-जसुमति, नारि-नर-ब्रज तहाँ भेरौँ प्रात ॥  
 कहत हरि सुनि उषंग सुत यह, कहत हैँ रस रीति ।  
 सूर चित तैँ टरति नाहीँ, राधिका की प्रीति ॥५॥

सखा सुनि एक मेरी बात ।

वह लता-गृह संग गोपिन, सुधि करत पछितात ॥  
 बिधि लिखी नहिँ टरत क्यौँ हूँ, यह कहत अकुलात ।  
 हँसि उषंग-सुत बचन बोले, कहा करि पछितात ॥  
 सदा हित यह रहत नाहीँ, सकल मिथ्या जात ।  
 सूर-प्रभु यह सुनौँ मोसौँ, एक ही सौँ नात ॥७॥

जब ऊधौँ यह बात कही ।

तब जदुपति अति ही सुख पायौँ, मानी प्रगट सही ॥  
 श्री मुख कह्यौँ जाहु तुम ब्रज कैँ, मिलहु जाइ ब्रज-लोग ।  
 मो बिन, बिरह भरीँ ब्रजबाला, जाइ सुनावहु जोग ॥  
 प्रेम मिटाइ ज्ञान परबोधहु, तुम हौँ पूरन ज्ञानी ।  
 सूर उषंग-सुत मन हरषाने, यह महिमा इन जानी । ८



## उद्धव संदेश

ऊधौ तुम यह निहचै जानौ ।

मन, बच, क्रम, मैं तुमहिँ पठावत, ब्रज कैं तुरत पलानौ ॥  
 पूरन ब्रह्म अकल अविनासी, ताके तुम हौ ज्ञाता ।  
 रेख न रूप जाति कुल नाहीँ, जाके नहिँ पितु माता ॥  
 यह मत दै गोपेनि कैं आवहु, बिरह नदी मैं भासत ।  
 सूर तुरत तुम जाइ कहौ यह, ब्रह्म विना नहिँ आसत ॥६॥

ऊधौ मन अभिमान बढ़ायो ।

जहुपति जोग जानि जिय साँचौ, नैन अकास बढ़ायौ ॥  
 नारिनि पै मोकैं पठवत हैँ, कहत सिखावन जोग ।  
 मन ही मन अप करन प्रसंसा, यह मिथ्या सुख-भोग ॥  
 आयसु मानि लियौ सिर ऊपर, प्रभु अज्ञा परमान ।  
 सूरदास प्रभु गोकुल पठवत, मैं क्यैं कहैं कि आन ॥१०॥

तुम पठवत गोकुल कैं जैहैं ।

जौ मानिहैं ब्रह्म की बातें, तौ उनसैं मैं कहैं ॥  
 रादगद बचन कहत मन प्रफुलित, बार-बार समुझैहैं ।  
 आजु नहीं जो करौ काज तुव, कौन काज पुनि लैहैं ॥  
 यह मिथ्या संसार सदाई, यह कहिकै उठि ऐहैं ॥  
 सूर दिना द्वै ब्रज-जन सुख दै, आइ चरन पुनि गैहैं ॥११॥

तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत आजु ।

ज्ञान बुझाइ खबरि दै आवहु, एक पंथ द्वै काज ॥  
 जब तैं मधुवन कैं हम आए, फेरि गयो नहिँ कोइ ।  
 जुवतनि पै ताही कैं पठवैं, जो तुम लायक होइ ॥  
 इक प्रवीन अरु सखा हमारे, ज्ञानी तुम सरि कौन ।  
 सोइ कीजौ जातैं ब्रज-बाला, सावन सीलैं पौन ॥  
 श्रीमुख स्याम कइत यह बानी, ऊधौ सुनत सिहात ।  
 आयसु मानि सूर-प्रभु जैहैं, नारि मानिहैं बात ॥१२॥

हलधर कहत प्रीति जसुमति की ।

कहा रोहिनी इतनी पावै, वह बोलनि अति हित की ॥  
 एक दिवस हरि खेलत मो लँगा, मगारौ कीन्हौ पेलि ।  
 मोकैं दारि गोव करि लीन्हौ इनहिँ दिवौ कर ठेजि ॥

नंद बच्चा तब कान्ह रोद करि, खीमन लागे मोकैँ ।  
सूर स्याम मान्हौँ तेरो भैया, छोड न आवत तोकैँ ॥१३॥

जसुमति करति मोकैँ हेत ।

सुनी ऊधौ कहत बनत न, नैन भरि-भरि लेत ॥  
तुहुँनि कौ कुसखात कहिधौ, तुमहिँ भूलत नाहिँ ।  
स्याम हलधर सुत तुहारे, और के न कहाहिँ ॥  
आइ तुमकैँ धाइ मिलिहैँ, कलुक कारज और ।  
सूर हमकौँ तुम बिना सुख कौ नहीं कहूँ और ॥१४॥

तीन पाती तथा सदेश

स्याम कर पत्री लिखी बनाइ ।

नंद बाबा सौँ विनै, कर जोरि जसुदा माइ ॥

गोप ग्वाल सखान कौँ दिखि-मिलन बंठ खगाइ ।

और ब्रज-नर-नारि जे हैं, तिनहिँ प्रीति जनाइ ॥

गोपिकनि लिखि जोग पठयो, भाव जानि न जाइ ।

सूर-प्रभु मन और यह कहि, प्रेम लेत दिदाइ ॥१५॥

ऊधौ जात ब्रजहिँ सुने ।

देवकी बसुदेव सुनि कै, हृदै हेत गुने ॥

आपु सौँ पाती लिखी, कहि धन्य जसुमति नंद ।

सुत हमारे पालि पठपु, अति दियौ आनंद ॥

आइकैँ मिलि जात कबहुँ न, स्याम अह बलराम ।

इहौ कहत पठाइहौँ अब, तबहिँ तन बिस्वाम ॥

बाल-सुख सब तुमहिँ लूठ्यौ, मोहिँ मिले कुमार ।

सूर यह उपकार तुम तैँ, कहत बारंबार ॥१६॥

हम पर काहैँ सुकति ब्रजनारी ।

साके भाग नहीं काहू कौ, हरि की कृपा निनारी ॥

कुबिजा लिख्यौ सँदेस सबनि कौ, अरु कीन्ही मनुहारी ।

हौँ तौ कासी कंसराइ की, देखौ मनहिँ बिचारी ॥

फलनि मोंक ज्यौँ करुह तोमरी, रहत धुरे पर डारी ।

अब तौ हाथ परी जंझी के, बाजत राम दुलारी ॥

तनु तैँ टेढ़ी सब कोउ जानत, परसि भई अधिकारी ।

सूरदास स्वामी कहनामय, अपन हाथ सँवारी ॥१७॥

✓ सुनियत ऊधौ लए सँदेसौ, तुम गोकुल कौँ जात ।  
 पाछेँ करि गोपिनि सौँ कहियौ, एक हमारी बात ॥  
 मातु पिता कौ नेह समुक्ति कै, श्याम मधुपुरी आए ।  
 नाहिँ न कान्ह तुम्हारे प्रीतम, ना जसुदा के जाए ॥  
 देखौ बूझि आपने जिय मैं, तुम धौँ कौन सुख दीन्है ।  
 ये बालक तुम मत्त ग्वालिनी, सबे मूँड़ करि लीन्है ॥  
 तनक दही माखन के कारन, जसुदा त्रास दिखावै ।  
 तुम हँसि सब बँधन कौँ दौरीँ, काहू दया न आवै ॥  
 जो वृषभान-सुता उत कीन्ही, सो सब तुम जिय जानी ।  
 ताहीँ जाल तज्यौ ब्रज मोहन, सब काहँँ दुख मानौ ॥  
 सूरदास-प्रभु सुनि सुनि बातँ, रहे भूमि सिर नाए ।  
 इत कुबिजा उत प्रेम गोपिकनि, कहत न कछु बनि आए ॥८५॥

तव ऊधौ हरि निकट बुलायौ ।

लिखि पाती दोउ हाथ दर्द तिहिँ, औ मुख बचन सुनायौ ॥  
 ब्रजबासी जावत नारी नर, जल थल द्रुम बन-पात ।  
 जो जिहिँ बिधि तासौँ तैसेँ ही, मिलि कहियौ कुललात ॥  
 जो सुख स्थ.म तुमहिँ तैँ पावत, सो त्रिभुवन कहँँ नाहिँ ।  
 सूरज-प्रभु दर्द सौँह आपुनी, समुक्त हीँ मन माहिँ ॥१६॥

पहिलैँ प्रनाम नँदराइ सौँ ।

ता पाछेँ मेरौ पालागन, कहियौ जसुमति माइ सौँ ॥  
 बार एक तुम बरसाने लौँ, जाइ सबै सुधि लीजौ ।  
 कहि वृषभानु महर सौँ मेरौ, समाचार सब दीजौ ॥  
 श्रीदामाऽदि सकल ग्वालनि कौँ मेरौ कोतौ भँँव्यौ ।  
 सुख संदेश सुनाइ सबनि कौँ, दिन दिन कौँ दुख मेव्यौ ॥  
 भिन्न एक मन बसत हमारैँ, ताहिँ मिलैँ सुख पाइहौ ।  
 करि करि समाधान नीकी बिधि, मोकौँ माथौँ नाइहौ ॥  
 डरपहुँ जनि तुम सघन कुंज मैं, हँँ तहँँ के तरु भारी ।  
 वृँदावन मति रहति निरतर, कबहुँँ न होति निनारी ॥  
 ऊधौँ सौँँ समुक्ताइ प्रगट करि, अपने मन की बीती ।  
 सूरदास स्वामी औँ छुब सौँँ, कहीँ सकल ब्रज-प्रीती ॥२०॥

कथौ इतनी कहियौ जाइ ।

हम आवेंगे दोक भैया, मैया जनि अकुलाइ ॥  
याकौ बिलग बहुत हम मान्यौ, जो कहि पठ्यौ धाइ  
वह गुन हमकाँ कहा विखरिहै, बड़े किए पय प्याइ ॥  
अरु जब मिल्यौ नंद बाबा सौँ, तब कहियौ समुझाइ ।  
तौ लौँ दुखी होन नहिँ पावैँ, धौरी धूमरि गाइ ॥  
जद्यपि इहाँ अनेक भँति सुख, तदपि रखौ नहिँ जाइ ।  
सूरदास देखौँ ब्रजबासिनि, तबहीं हियौ सिराइ ॥२१॥

नीकें रहियौ जसुमति मैया ।

आवेंगे दिन चारि पाँच मैँ, हम हलधर दोउ भैया ॥  
नोई, बँत, बिपान, बाँसुरी, द्वार अबर सवेरैँ ।  
लौँ जनि जाइ चुराइ राधिका, कञ्जुव खिलौना मरे ॥  
जा दिन तैँ हम तुमतैँ बिछुरे, कोउ न कहत कन्हैया ।  
उठि न सवेरे कियौ कलेक, सँभ न चीधी धैया ॥  
कहिथे कहा नंद बाबा सौँ, जितौ निठुर मन कीन्हौ ।  
सूरदास पहुँचाइ मधुपुरी, फेरि न सोधौ लीन्हौ ॥२२॥

गहरु जनि लावहु गोकुल जाइ ।

तुमहिँ बिना ब्याकुल हम हूँहैँ, जदुपति करी चतुराइ ॥  
अपनौ ही रथ तुरत मँगायौ, दियौ तुरत पलनाइ ।  
अपने अंग अभूपन करि-करि, आपुन ही पहिराइ ॥  
अपनौ मुकुट पितंबर अपनौ, देत सबै सुख पाइ ।  
सूर स्याम तदरूप उपेंगसुत, भृगुपद एक बचाइ ॥२३॥

उद्धव ब्रज आगमन

जबहिँ चले ऊधौ मधुवन तैँ, गोपिनि मनहिँ जनाइ गई ।  
बार-बार अलि लागे खवननि, कञ्जु दुख कञ्जु हिय हर्ष भई ।  
जहँ तहँ काम उदावन लागी, हरि आवत उड़ि जाहिँ नहीँ ।  
समाचार कहि जबहिँ मनावतिँ, उड़ि बैठत सुनि औँचकहाँ ॥  
सखी परस्पर यह कही बातैँ, आजु स्याम कैँ आवत हैँ ।  
कियौ सूर कोऊ ब्रज पठ्यौ, आजु खबरि कैँ पावत हैँ ॥२४॥

आजु कोउ नीकी बात सुनावै ।

कैँ मधुवन तैँ नंद दादिलौँ कैँ ब वृत्त कोउ आवै ॥

## उद्धव संदेश

भौर एक चहुँदिसि तैँ उड़ि-उड़ि, कालन लागि-लगी रावै ।  
उत्तम भाषा ऊँचे चढ़ि-चढ़ि, अंग-अंग सगुनावै ॥  
भामिनि एक सखी सौँ बिनवै, नैन नीर भरि आवै ।  
सूरदास कोऊ ब्रज ऐसौ, जो ब्रजनाथ मिलावै ॥२५॥

तौ नू उड़ि न जाइ रे काग ।

जौ गुपाल गोकुल कोँ आवैँ, तौ हूँ है बड़भाग ॥  
दधि ओदन भरि दोनौ देहौँ, अरु अंचल की पाग ।  
मिलि हीँ हृदय सिराइ खवन सुनि, मेदि बिरह के दाग ॥  
जैसैँ मातु पिता नहिँ जानत, अंतर कोँ अनुराग ।  
सूरदास-प्रभु करैँ कृपा जत्र, तत्र तैँ देह सुहाग ॥२६॥

है कोउ वैसी ही अनुहारि ।

मधुवन तन तैँ आवत सखि री, देखौ नैन निहारि ॥  
बैसोइ मुकुट मनोहर कुंडल, पीत वसन रुचिकारि ।  
वैसहिँ बात कहत सारथि सौँ, ब्रज तन बाहँ पसारि ॥  
केतिक बीच कियो हरि अंतर, मनु बीते जुग चारि ।  
सूर सकल आतुर अकुलाती, जैसैँ मीन बिनु बारि ॥२७॥

बर धर इहै सब्द पर्यौ ।

सुनत जसुमति धाइ-निकली, हरष-हियो भर्यौ ॥  
नंद हरषित चलै अगौँ, सखा-हरषित अंग ।  
कुंड कुंडनि नारि हरषित, चलीँ उदधि तरंग ॥  
गाइ हरषित ते खवति धन, चौकरत गौ बाल ।  
उमंगि अंग न मात कोऊ, बिरध तरुनरु बाल ॥  
कोउ कहत बलराम नाहीँ, स्याम रथ पर एक ।  
कोउ कहत प्रभु सूर दोऊ, रचित बात अनेक ॥२८॥

कोउ भाई आवत है तनु स्याम ।

वैसे पट वैसिय रथ बैठनि, वैसीधै उर दाम ॥  
जो जैसैँ तैसैँ उठि धाईँ, छौँड़ि सकल गृह काम ।  
पुलक रोम गदगद तेहीँ छन, सोभित अंग अभिराम ॥  
इतने बीच आइ गए ऊधौ, रहीँ दगी सब बाम ।  
सूरदास प्रभु ह्यौँ कत आवैँ, बँधे कुबिजा रस-दाम ॥२९॥

जबहिँ कछौ भे स्याम नहीं ।

परी मुरछि धरनी ब्रजबाला, जो जहँ रही सु तही ॥  
सपने की रजधानी ह्वै गइ, जो जागी कछु नही ॥  
वार-वार रथ शोर निहारहिँ, स्याम बिना अकुलाही ॥  
कहा आइ करिहँ ब्रज मोहन, मिली कूबरी नारी ।  
सूर कहत सब उथौ आए, गइँ काम-सर मारी ॥३०॥

भली भई हरि सुरति करी ।

उथौ महरि कुललात वृष्णिपे, आनंद उमंग भरी ॥  
भुजा गइे गोपी परबोधति, मानहु सुफल घरी ।  
पाती लिखि कछु स्याम पढायौ, यह सुनि मनहिँ ढरी ॥  
निकट उषंगसुत आइ तुलाने, मानौ रूप हरी ।  
सूर स्याम कौ सखा यहै री, खवननि सुनी परी ॥३१॥

निरखत ऊधौ कौ सुख पायौ ।

सुंदर सुलज सुबंस देखिअत, यातँ स्याम पढायौ ॥  
नीकँ हरि-संदेस कहैवाँ, खवन सुनत सुख पैहै ।  
यह जानति हरि तुरत आइहँ, यह कहि ह्वै सिरहै ॥  
घेरि लिए रथ पास चहुँघा, नंद गोप ब्रजनारी ।  
महर खिवाइ गए निज मंदिर, हरपित लियौ उतारी ॥  
अरघ देत भीतर तिहिँ लीन्हौ, धनि धनि दिन कहिआज ।  
धनि धनि सूर उषंगसुत आए, सुदित कहत ब्रजरज ॥३२॥

कबहुँ सुधि करत गुपाल हमारी ।

सुलत पिता नंद ऊधौ सौँ, अरु जसुदा महसारी ॥  
बहुतै चूक परी अनजानत, कहा अबकँ पछिताने ।  
वासुदेव घर भीतर आए, मै अहीर करि जाने ॥  
पहिलै राँ कछौ हुतौ हमसौँ, संग दुःख गायौ भूल ।  
सूरदास स्वामी के बिलुरै, राति दिवस भयौ सुल ॥३३॥

कछौ कान्ह सुनि जसुदा भैया ।

आबहिँगे दिन चारि पाँच मैँ, हम हलधर दोउ भैया ॥  
मुरली बँत बिपान हमारी, कहुँ अबेर सबेरौ ।  
मति लै जाइ चुराइ राधिका, कछुब खिलौना मेरौ ॥

## उद्वेग संदेश

जा दिन तैँ हम तुम सौँ बिदुरे, काहु न कछौ कन्हैया ।  
 प्रात न कियौ कलेऊ कबहूँ, साँझ न पय पियौ दैया ॥  
 कहा कहौँ कछु कहत न आवै, जननी जो दुख पायौ ।  
 अब हमसौँ बसुदेव देवकी, कहत आपनौ जायौ ॥  
 कहिए कहा नंद बाबा सौँ, बहुत निदुर मन कोन्हौ ।  
 सूर हमहिँ पहुँचाइ मधुपुरी, बहुरि न सोधौ लीन्हौ ॥३४॥  
 हमतैँ कछु सेवा न भई ।

धोखैँ ही धोखैँ जु रहे हम, जाने नाहिँ त्रिलोकमई ॥  
 चरन पकरि कर दिनती करिबौ, सब अपराध छमा कीवै ।  
 ऐसी भाग होइगौ कबहूँ, स्वाम गोद पुनि मैँ लीवै ॥  
 कहै नंद आगौँ ऊधौँ के, एक बेर दरसन दीवै ।  
 सूरदास स्वामी मिलि अवकैँ, सबै दोष विज मन कीवै ॥३॥  
 ऊधौँ कहौँ साँची बात ।

दधि, मद्यौ नवनीत मायव, कौन के घर खात ॥  
 किन सखा संग संग लीन्है, गहै लकुटी हाथ ।  
 कौन की गैर्यौ चरावत, जात को धौँ साथ ॥  
 कौन गोपी कूल-जमुना, रहत गहि-गहि घाट ।  
 दान हड कै लेत कापै, रोकि किनकी घाट ॥  
 कौन ग्वालनि साथ भोजन, करत किनतैँ बात ।  
 कौन कैँ माखन चुरावन, जात उठिकैँ प्रात ॥  
 इतौ बूझत माइ जसुमति, परी सुरदित रात ।  
 सूरदास किसोर मिलवहु, मेदि हिय की तात ॥३६॥

सा गोपियों की पाती देना — इन की कन्हैया को  
 ब्रज घर-घर सब होति बधाइ ।

कंचन कलस दूर दधि रोचन लै वृंदावन आइ ॥  
 मिलि ब्रजनारि तिलक सिर कीनौ, करि प्रदक्षिणा तासु ।  
 पूछत कुसल नारि-नर हरपत, आए सब ब्रज-वासु ॥  
 सकसकात तन धक धकान उर, अकसकात सब ठाढ़े ।  
 सूर उपैग सुत बोलत नाईँ, अति विरदे हँ गाढ़े ॥३७॥  
 ऊधौँ कहौँ हरि कुलजात ।

कछौँ भावन किधौँ नाहीं, बोझिँ मुख बाध ॥

एक छिन जुग जात हमकौँ, बिनु सुने हरि प्रीति ।  
 आपु आपु करा कीन्ही, अब कहौ कछु नीति ॥  
 तब उपैंग सुन सबनि बोले, सुनौ श्रीमुख जोग ।  
 सूर सुनि सब दौरि आईँ, हृदकि दीन्हौ लोरा ॥३८॥

गोपी सुनहु हरि संदेस ।

गए सँग अक्रूर मधुवन, हत्यौ कंस नरेस ॥  
 रजक मारयौ बसन पहिरे, धनुष तोरयौ जाइ ।  
 कुबलय्या चानूर मुष्टिक, दिए धरनि गिराइ ॥  
 मातु पितु कं बंद छोरे, बासुदेव कुमार ।  
 राज दीन्हौ उपलेनहिँ, सौर निज कर डार ।  
 कह्यौ तुमकौँ ब्रह्म ध्यावन, छाँड़ि बिषय बिकार ।  
 सूर पाती दई लिखि मोहिँ, पढ़ौ गोप-कुमारि ॥३९॥

पाती मधुवन ही तैँ आई ।

सुंदर स्याम आपु लिखि पठई, आइ सुनौ री माई ॥  
 अपने अपने गृह तैँ दौरौँ, लै पाती उर लाई ।  
 नैननि निरखि निमेष न खंडित प्रेम-तृषा न बुझाई ॥  
 कहा करौँ सुनौ यह गोकुल, हरि बिनु कछु न सुहाई ।  
 सूरदास ब्रज कौन चूक तैँ, स्याम सुरति बिसराई ॥४०॥

निरखतिँ अंक स्याम सुंदर के बार बार लावतिँ लै छाती-  
 लोचन जल कागद मसि मिलि कै ह्वै गइ स्याम स्याम जू की पाती-  
 गोकुल बसत नंदनंदन के, कबहुँ बयारि न लागी ताती ।  
 अरु हम उती कहूँ कहौँ ऊधौँ, जत्र सुनि चेतु नाद सँग जाती ॥  
 उनकैँ लाइ बढ़ति नहिँ काहूँ, निसि दिन रसिक-रास-रस राती ।  
 प्रात-नाथ तुम कबहिँ मिलौंगे, सूरदास-प्रभु बाल-सँघाती ॥४१॥

पाती मधुवन तैँ आई ।

ऊधौँ हरि के परम सनेही, ताकैँ हाथ पडाई ॥  
 कोउ पड़ति, कोउ धरिन नैन पर, काहूँ हदई लगाई ।  
 कोउ पृथ्वि फिरी फिरी ऊधौँ कौँ आपुन लिखी कन्हाई ?  
 बहुरो दई फेरि ऊधौँ कौँ, तब उन बाँचि सुनाई ।  
 मन मैँ ध्यान इमारौँ राख्यौँ सूर सदा सुखदाई ॥४२॥



लिखि आई ब्रजनाथ की छापर ।

ऊधौ बाँधे फिरत सीस पर, बँचत आवै ताप ॥  
 उलटै रीति नंदनंदन की, घर-घर भयौ संताप ।  
 कहियौ जाइ जोग आराधेँ, अत्रगति अकथ अमाप ॥  
 हरि आगै कुदिजा अभिकारिनि, को जीये इहिँ बाप ।  
 सूर सँदेश सुनावन लागे, कहौ कौन यह पाप ॥४३॥  
 कोउ ब्रज बाँचत नाहिँव पाती ।

कल लिखि-लिखि पठवत नंद-नंदन कठिन-बिरह की काँती ॥  
 नैन सज्ज कागद अति कोमल, कर अँगुरी अति ताती ।  
 परलैँ जरे, बिलोकैँ सीजे, दुई अँति दुख छाती ॥  
 को बाँधे ये अँक सूर-प्रभु कठिन सदन-सर-धाती ।  
 सब सुख लै गए स्थान मोहर, हयसौँ दुख दै धाती ॥४४॥  
 उधौ कहा करैँ लै पाती ॥

जौ लौँ मदनगुपाल न देखैँ, बिरह जगदल छाती ॥  
 निमिष निमिष मोहि बिसरत नाहीं सरद गुहाई राती ।  
 पीर हमारी जानत नाहीं, तुम हौँ स्थान सँधाती ॥  
 यह पाती लै जाहु मधुपुरी, जहँ वै बसैँ सुजाती ।  
 मन जु हमारे उरैँ लै शय, कान कठिन सर धाती ॥  
 सूरदास-प्रभु कश चहत हँ, कोटक बान सुधाती ।  
 एक बेर सुख बहुरि दिखावहु, रहैँ चरण रज-धाती ॥४५॥

अपर रात —

इहिँ अंतर मधुकर इक आयौ ।

निज स्वभाव अनुमार निकट है, सुंदर सब सुजायौ ॥  
 पूजन लागतैँ ताहि मोबिना, कुबिजा लोहिँ पडायौ ।  
 कीयौँ सूर दान मंदर कौँ, हसैँ सँदेश लायौ ॥४६॥  
 ( मधुगुह्य ) कहौँ कहाँ लैँ प्राण हौ ।

जागति हँ अनुमान आयौ, तुम जनु-तप पडाव हौ ॥  
 धैरेइ पसाव, चरण मन मंदर, वेइ मधुपन सजि ल्याव हौ ।  
 लैँ लरनसु अँग सान लियारे, अत्र का पर पहिराय हौ ॥  
 अहो मधुप नकेँ मन सकौँ, लु लौँ उरैँ लैँ छाव हौ ।  
 अब यह मन सधान बहुरि धज ना करन उठे गए हौ ।

मधुवन की मानिनी मनोहर, तहीं जात जहँ भाए हौ ।  
सूर जहाँ लौँ स्थाम गात है, जानि भले करि पाए हौ ॥४७॥

रहु रे मधुकर मधु मतवारे ।

कौन काज या निरगुन सौँ, चिर जीवहु कान्ह हमारे ॥  
लोहत पीत पराग कीच मै, नीच न अंग सँहारे ।  
बारंबार सरक मदिरा की, अपरसु रटत उवारे ॥  
तुम जानत हौँ वैसी ग्यारिनि, जेमे कुसुम तिहारे ।  
घरी पहर सबहिनि पिरभावत, जेते आवत कारे ॥  
सुंदर बदन कमल-दल लोचन, जसुमति नंद-दुलारे ।  
तन मन सूर अरपि रहीं स्थामहि, कापै लेहिँ उधारे ॥४८॥

मधुकर हम न हांहिँ वै देखि ।

जिन भजि तजि तुम फिरत और रँग, करन कुसुम-रस केलि ।  
बारे तैं बर बारि बढी है, अरु पोषी पिय पानि ।  
बिनु पिय परस प्रात उठि फूलत, होति सदा हित हानि ॥  
ये बेसी बिरहीँ बृंदावन, उरकीँ स्थाम तमाल ।  
प्रेम-पुहुप-रस बास हमारे, बिलसत मधुप गोपाल ॥  
जोना समीर धीर नहिँ डोलति, रूप डार दृढ़ लागीँ ।  
सूर पराग न तजतिँ हिए तैं, श्री गुपाल अनुरागीँ ॥४९॥

उद्धव-गोपी संवाद

पहला संवाद

सुनौ गोपी हरि कौ संदेस ।

करि समाधि अंतर गति व्याचहु, यह उनकौ उपदेस ॥  
वै अविगत अविनासी पुरन, सब-घट रहे समाइ ।  
तब ज्ञान बिनु मुक्ति नहीं है, बेद-पुराननि गाइ ॥  
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावहु, इक चित इक मन लाइ ।  
वह उपाइ करि बिरह तरौ तुम, मिले ब्रह्म तब आइ ॥  
हुसह संदेस सुनत माधौ कौ, गोपी जन बिलखानी ।  
सूर बिरह की कौन जलावै, बूझतिँ मनु त्रिनु पावीँ ॥५०॥

परी पुकार द्वार गृह-गृह तैं, सुनौ सखी इक जोगी आधौ ।

एवन सधावन, भवन सुधावन, रवन-रमाख गोपाल पदाधौ ॥

## उद्धव संदेश

आसन बाँधि, परम ऊरथ चित, बनत न तिनहिँ कहा हित त्यागै ।  
 कनक बेलि, कामिनि ब्रजबाला, जोग अग्निनि दहिबे कौँ धायौ ।  
 भव-भय हरन, असुर मारन हित, कारन कान्ह मधुपुरी छायाँ  
 जावत मै ब्रज एकौँ नाहीं, काहँ उलटीँ जस विश्वराथौ ।  
 सुथल जु स्वाम थाम मै बैलौ, अबलनि प्रति अधिकार जनायौ  
 सूर विश्वारी प्रीति साँवरै, भली चतुरता जगत हँसायौ ।

देन आएँ ऊधौ मत नीकौ ।

आवहु री भिलि सुनहु सयानी, लेहु सुजस कौँ टीकौ ॥  
 तजन कहन अंबर आभूषन, गेह नेह सुत ही कौ ।  
 अंग भस्म करि सीस जटा धरि, सिखवत निरगुन फीकौ ॥  
 मिरे जान यहँ जुवतिनि फौँ, देत फिरत दुख पी कौ ।  
 ता सराप तँ भयौ स्वाम तन, तउन गहत डर जी कौ ॥  
 जाकी प्रकृति परी जिय जैसी, सोच न भली डुरी कौ ।  
 जैसेँ सूर व्याल रस चाखँ, मुख नहिँ होत अमी कौ ॥२२॥

प्रकृति जो जाकँ अंग परी ।

स्वान पूँज कोउ कोटिक लागै, सूधौ कहँ न करी ॥  
 जैसेँ काग भच्छ नहिँ छाँडै, जनमत जौन घरी ।  
 घोए रंग जात नहिँ कैसेहुँ, ज्यौँ कारी कमरी ॥  
 ज्यौँ अहि डसत उदर नहिँ पूरत, ऐसी धरनि घरी ।  
 'सूर होइ सो होइ सोच नहिँ, तैसेइ एऊ री ॥२३॥

समुक्ति न प्रति तिहारी ऊधौ ।

ऊधौ त्रिदोष उपजैँ जक लागत, बोलत वचन न सूधौ ॥  
 आपुन कौँ उपचार करौ अति तब औरनि सिख देहु ।  
 बड़ौ रोग उपज्यौँ है तुमकौँ भवन सबारैँ लेहु ॥  
 हँ भेषज नाना भौँतिन के, अरु मधु-रिपु से वैद ।  
 हम कातर डरपतिँ अपनैँ सिर, यह कलंक है खेद ॥  
 साँची बात छाँडि अलि, तंरी, मूठी को अब सुनिहै ।  
 सूरदास मुक्ताहल भोगी, हंस ज्वारि क्यौँ सुनिहै ॥२४॥

ऊधौ हम आजु भईँ बड़ भारी ।

जिन अँखियनि तुम स्वाम बिबोके ते अँखियाँ हम लागीँ

जैसे सुमन चाप लै आवत, पवन मधुन प्रसुरागी ।  
 अति आनंद होत है तैसे. शंभ-शंभ सुख रागी ॥  
 [ज्यों दरगन में दरस देखिवन, दृष्टि परम रचि लागी ।  
 तैसे सूर मिले हरि हमके, बिरह-प्रिया तन व्यापी ॥२१॥  
 (आलि हाँ) कैसँ कहैं सूरि के रूप रखई ।

अपने तन में भेद बहुत विधि, रसना जानै न नैन दसहिं ॥  
 जिन देखें ते आहिं बचन विनु, जिनहिं बचन दरसन न तिसहिं ॥  
 विनु वाली थे उमंगि प्रेम जात, सुमिरि-सुमिरि वा रूप जसहिं ॥  
 बार-बार पछितात यहै कदि, बड़ा करौ जो विधि न बसहिं ।  
 [सूर सकल श्रंगारि की यह गते, वनें समुनाई उपव पसहिं ॥२६॥  
 हम तो सब बाजनि सखु पायौ ।

गोद खिलाइ पिनाइ देह पय, पुनि पालनै सुलायौ ॥  
 देखति रही फगिन की अति ज्यों, मुकुन उतल सुलायौ ।  
 अब कहि समुनाति कौन पाय लै, जिन त रो उलटायौ ॥  
 दिनु देखैं पल-पल नहिं छन-छन, ये ही चित ही चायौ ।  
 अबहिं कठोर भइ ब्रजपति-सुत, रोवत मुँह न धुवायौ ॥  
 [तव हम दूध दही के कारन, घर-घर बहुत खिगायौ ।  
 सो अब सूर प्रगट ही लाग्यौ, योभासु ज्ञान पढायौ ॥२७॥

मधुकर कहिये काहि सुनाइ ।

हरि विह्वरत हम जिते सहे दुख, जिनै बिरह के चाइ ॥  
 बर भावौ मधुवन ही रहते, कत जमुदा कै आए ।  
 कत प्रभु गोप-बेव ब्रज धरि कै, कत ये सुख उपजाए ॥  
 कत गिरि धर्यौ, इंद्र मद सब्यौ, कत वन रास बनाए ।  
 अब कहा निहुर भगु अबलनि कै, लिखि लिखि जोग पढाए ॥  
 तुम परवीन सबै जानत हाँ, ताते यह कहि आई ।  
 अपनी को चालै सुनि सूरज, पिता जननि विसराई ॥२८॥

दूसरा संवाह

जानि करि बावरी जनि होहु ।

तव भजे वैसी हूँ जैही, पारस परसै लोहु ॥  
 मेरौ बचन सख्य करि मानौ, ज्यों सबकौ मोहु ।  
 तौ जनि सब पानी की चुपरी जौ अति आस्यत दोहु

## उद्धव संदेश

अरे मधुव ! बातें ये ऐसी, क्यों कहे आवतिं तोह ।  
सूर सुझरती छाड़ि परम सुख, हमें बतावत खोह ॥२६॥

ऊधौ हरि गुन हम चकडोर ।

गुन सों क्यों भावें क्यों फेरौ, यहै बात कौ ओर ॥  
पैड़ पैड़ चलिये तो चलिये, ऊबट रपटे पाइँ ।  
चकडोरी की रीति अबै फिरि, गुन हीं सौं लपटाइ ॥  
सूर सहज गुन प्रथि हमारै, ढई स्याम उर माहिँ ।  
हरि के साथ परे तौ छूटे, और जतन कछु नाहिँ ॥६०॥

उलटी रीति तिहारी ऊधौ, सुनै सो ऐसी को है ।  
अलग वयस अबला अहीरे सउ तिनहिँ जोग कत सोहै ॥  
बूची खुभी, आँवरी काजर, नकटी पहिरे बेसरि ।  
मुइली पटिया पारौ चाहै, कोढ़ी लावै केसरि ॥  
वहिरी पति सौ भती करे तौ, तैसोइ उत्तर पावै ।  
सो गति होइ सबै ताकी जो, ग्वारिनि जोग सिखावै ॥  
सिखई कहत श्याम की चतियाँ, तुमकौं नाहीं दोष ।  
राज राज तुम तै न सखौ, काथा अपनी पोष ॥  
जाते भूलि सबै दारय मै, इहाँ आनि का कहते ।  
भली भई सुधि रही सूर, जतु सोह धार मै बहते ॥६१॥

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।

देख्यौ चाहति कमलमैन कौं निसि दिन रहति उदासी ॥  
आए ऊधौ फिरि गए आँगन, डारि गए गर फाँसी ।  
केसरि तिलक मोतिनि की माला, बृंदावन के वासी ॥  
काहू के मन की कोउ जानत, लोगनि के मन हाँसी !  
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौं, करवत लौहौं कासी ॥६२॥

जब तै सुंदर बदन निहार्यौ ।

दिनतै मधुकर सत अट्ठभ्यौ, बहुत करी निकरे न निकार्यौ ॥  
पिता, पति, बंधु, सुजन, नहिँ, तिनहूँ कौ कहिबौ सिर धार्यौ ।  
न लोक लाज मुख निरखत, दुसह क्रोध फीकौ करि डार्यौ ॥  
होइ सु होइ कर्मवस, अत्र जी कौ सब सोच निवार्यौ  
मई उ सूरदास प्रभु मजौ पोच अनौ न बिचार्यौ ॥

और सकल अंगनि तैं ऊधौ, अखियाँ अधिक दुखारी ]  
 अतिहिँ पिरातिँ सिरातिँ न कवहुँ, बहुत जतन करि हारी ॥  
 मग जोवत पलकौ नहिँ लावतिँ, बिरह बिकल भई भारी ।  
 भरि गइ बिरह बयारि दरस बिनु, निसि दिन रहतिँ उवारी ॥  
 ते अलि अब ये ज्ञान सजाकै, क्यौँ सहि सकतिँ तिहारी ।  
 सूर सु अंजन अँजि रूप रस, आरति हरहु हमारी ॥ ६४ ॥

उरमा नैन न एक रही ।

कवि जन कहत कटुत सब आए, सुधि कर नहिँ कही ॥  
 कहि चकोर बिनु मुख बिनु जीवत, अमर नहीं उड़ि जात ।  
 हरि-मुख कमल कौष थिछुरे तैं, ठाले कत उदरान ॥  
 ऊधौ अधिक व्याध है आए, मृग सम क्यौँ न पलात ।  
 भागि जाहिँ बन सधन स्याम मैँ, जहाँ न कोऊ वात ॥  
 खंजन मन-रंजन न होहिँ ये, कवहुँ नहीं अकुजात ।  
 पंख पसारि न होत चपल गति, हरि समीप छुडुलात ॥  
 प्रेम न होइ कौन बिधि कहियै, सूठै हीँ तन आवत ।  
 सूरदास मीनता कछू इक, जल भरि कवहुँ न छाँड़त ॥ ६५ ॥

ऊधौ अखियाँ अति अनुरानी ।

इकटक मग जोवतिँ अरु रोवतिँ, भूलेहुँ पलक न लागी ॥  
 बिनु पावस पावस करि राखी, देखत हीँ विदमान ।  
 अब धौँ कहा कियौँ चाहत हो, छाँड़ौँ निरगुन ज्ञान ॥  
 तुम हीँ सखा स्याम सुंदर के, जानत सकल सुभाइ ।  
 जैसैँ मिलैँ सूर के स्वामी, सोई करहु उपाइ ॥ ६६ ॥

सब खोटे मधुवन के लोग ।

जिनके संग स्याम सुंदर सखि, सीखे हैं अपजोग ॥  
 आए हैं बज के हित ऊधौ, जुवतिनि कौ लै जोग ।  
 आसन, ध्यान नैन मूँदे सखि, कैसेँ कहुँ वियोग ॥  
 हम अहीरि इतनी का जानैँ, कुबिजा सीँ संजोग,  
 सूर सुवैद कहा लै कीजै, कहेँ न जानैँ रोग ॥ ६७ ॥

मधुवन लोगनि को पतिमाइ ।

सुख और अतराति सौरे, पखियाँ बलि पदवत उ बनाइ

ज्यों कोइल-सुत काग जियावै, भाव भगति भोजन जु खयाइ ।  
कुहुकि कुहुकि आएँ बसंत रितु, अंत मिलै अपने कुज जाइ ॥  
ज्यों मधुकर अंबुज रस चाख्यौ, बहुरि न बूझे बातें आइ ।  
सूर जहाँ लागि स्याम रात है, तिनसौँ बीजै कहा सगाइ ॥६८॥

आए जोग सिखावन पाँडे ।

परमारथी पुराननि लादे, ज्यों बतजारे टाँडे ।  
हमरे गति-पति कमल-नयन की, जोग सिखै ते राँडे ।  
कहौ मधुन कैसे समाहिँग, एक ज्ञान दो खॉडे ॥  
कुहु पदपद कैसे खैवलु है हाथेनि केँ संग जाँडे ।  
काकी भूख गई वगारि भवि, बिना वृध दूत माँडे ।  
काहे कौँ भाला लै मिलवन, कौन चार तुम ढाँडे ।  
सूरदास तीनौ नहिँ उपजन, धनिया, धान कुम्हांडे ॥६९॥

तीसरा संवाद

ज्ञान बिना कहूँ धै सुख नाही ।

घट घट व्यापक दारु अशिनि ज्यों, सदा बसै उर माहाँ ॥  
निरगुन छाँडि सगुन कौँ दीरति, सु धौँ कहौ किहिँ पाही ॥  
तव भजौ जो भिऊत न डूँडे, ज्यों तनु तैँ परझाही ॥  
तिहिँ तैँ कहौ कौन सुख पायौ, जिहिँ अब लौँ अवगाही ॥  
सूरदास ऐसै करि लागत, उद्यौँ कृपि कीन्हे पाही ॥७०॥  
कधौँ कही तु फेरि न कहिए ।

जौ तुम हमै जिवायौ चाहत, अनयोले हँ रहिए ॥  
ग्रान हमारे घात होत है, तुम्हरे भागुँ हाँसी ।  
या जीवन तैँ मरन भलो है, कर्षत लोहै कासी ॥  
पूरव प्रीति सँभारि हमारी, तुमकौँ कहन पठायौ ।  
हम तौ जरि बरि भस्म भईँ तुम, आनि मसान जगायौ ॥  
कै हरि हमकौँ आनि मिलावहु, कै लै चलिथै साथै ।  
सूर स्याम बिजु ग्रान सजति है, दोष तुम्हारे मायै ॥७१॥

घर ही के आड़े रावरे ।

नाहिन मीत-विचारा बस परे, अनव्योगि अलि बावरे ॥  
अरु मरि जाइ चरै नहिँ तिनुका, सिंह को यहै स्वभाव रे ।  
अवन सुधा मुरषी के पोषे, जोग जहर न सखाव रे ॥

अधौ हमहिँ सीख कह वैहौ, हरि बिनु अनत न ठॉव रे ।  
सूरजदास कहा लै कीजै, थाही नदिया नाव रे ॥७२॥

हमकैँ हरि की कथा सुनाउ ।

ये आपनी ज्ञान नाथा अलि, मधुग ही ले जाउ ॥  
नागारि नारि भलैँ समझैँशी, तेरौ बचन बनाउ ।  
पा लागौँ ऐसी इन बातनि, उनही जाइ रिझाउ ॥  
जौ सुचि सखा स्याम सुंदर कौ, अरु जिय मैँ सति जाउ ।  
तौ बारक आपुर इन नैननि, हरि मुख आनि दिवाउ ॥  
जौ कोउ कोटि करैँ कौखिहुँ दिवि, बल विद्या व्यथलाउ ।  
तउ सुनि सूर भीर कौँ जल बिनु, ना हँन और उपाउ ॥७३॥

अधौ धानी कौन ढरेगौ, तोसैँ उत्तर कौन करैंगौ ।

या पाती कं देखत हीँ अब, जल सावन कौ नैन ढरैगौ ॥  
बिरह-अग्नि तन जरत निसा-दिन, करहिँ छुवन दुव जोग जरैगौ ।  
नैन हमारे सजल हँ तारे, निरखत ही तेरौ ज्ञान गरैगौ ॥  
हमहिँ वियोग-रु सोग स्याम कौ, जोग रोग सैँ कौन अरैगौ ।  
दिन दस रहौँ छु गोकुल महिषौँ, तब तेरौ सब ज्ञान मरैगौ ॥  
सिंगी सेरही भसम-रु कथा, कहि अलि काके गरैँ परैगौ ।  
जे ये लट हरि सुमननि गूँधी, सीस जटा अब कौन धरैगौ ॥  
जोग सगुन लै जाहु मधुपुरी, ऐसैँ निरगुन कौन तरैगौ ।  
हमहिँ ध्यान पल छिन मोहन कौँ, बिनु दरसन कहुँ न ररैगौ ॥  
निशि दिन सुनिरन रहत स्याम कौ, जोग अग्नि मैँ कौन जरैगौ ।  
कैसेँ हु प्रेम नम सोदन कौँ, हित चित लैँ हमरैँ न टरैगौ ॥  
निन उठि आवत जोग सिखावन, ऐसी बातनि कौन भरैगौ ।  
कथा तुम्हारी सुनत न कोऊ, ठाढ़े ही अब आप ररैगौ ॥  
वादिहिँ रत उठत अपन जिय, को तोसैँँ बेकाज खरैगौ ।  
हम अंत अंश स्यास रँग सीनी, को इन बातनि सूर डरैगौ ॥७४॥

अधौ गुप्त मज की दसा बिचारौ ।

या पाती यह सिद्धि आपनी, जोग कथा विस्तारौ ॥  
जा करत तुम पठणु माधौ, सो सोचौ जिय माहीँ ।  
केहिँ ईज निरह परमारथ- जानत हैँ किधौँ नाहीँ ॥



तुम परवीन चलुर कहियत हो, संतत निकट रहन हो ।  
 जल बुड़त अवलां व फेन कौ, फिरि फिरि कहा कहत हो ॥  
 वह मुसकान मनोहर चितवनि, कैजँ उर तेँ टागँ ।  
 जोग जुक्ति अरु मुक्ति परम निधि, वा मुरली पर चारैँ ॥  
 जिहिँ उर कमल-नवन जु बसत हैँ, तिहिँ निरगुन क्यों आवै ॥ १ ॥  
 सूरदास सो भजन बड़ाऊँ, जाहि दूसरौ भावै ॥ ७२ ॥

ऊधौ हरि काहे के अंतरजामी ।

अजहुँ न आइ मिलत इहँ अवसर, अचधि बतावत लामी ॥  
 अपनी चोप आइ उड़ि बैठत, अलि ज्यैँ रस के कामी ।  
 तिनकौ कान परेगौ कीजा, जे हैं गहड़ के रामी ॥  
 आई उधरि भीते कछई सी, जैसी खाटी आमी ।  
 सूर इते पर अनखनि मरियत, ऊधौ पीवत मामी ॥ ७६ ॥

निरगुन कौन देस कौ बासी ?

मबुकर कहि समुझाइ सौँइ दे, बूझतिँ सौँच न हौँसी ॥  
 को हैँ जनक, कौन हैँ जननी, कौन नारि, को दासी ?  
 कैसो वरन, भेष हैँ कैसौ, किहिँ रस मैँ अभिलापी ?  
 पावैगौ पुनि किशौ आपनै, जो रे करेगौ गौँसी ।  
 सुनत मौन हौँ रह्यौ बावरा, सूर सबै मति नासी ॥ ७७ ॥

कहियौ ठकुराइति हम जानी ।

अव दिन चारि चलहु गोकुल मैँ, सेवहु आइ बहुरि रजधानी ॥  
 हमकौँ हौँल बहुत देखन की संग खियँ कुबिजा पटरानी ।  
 पहुगई अज कौ दधि भावन, बड़ौ पलंग, अरु तातौ पानी ॥  
 तुम जनि डरौ उखल तो तौँज्यौ, दौँवरिहु अब भई पुरानी ।  
 वह बल कहुँ जसोभति कैँ कर, देह रावरैँ सोच बुहानी ॥  
 मुरभी यँटि दई ग्वालनि कैँ, मोर-चंद्रिका सबै उड़ानी ।  
 सूर गंद जू के पालागौँ, देखहु आइ राधिका स्यानी ॥ ७८ ॥

सुनि सुनि ऊधौ आवति हौँसी ।

कहँ थैँ ब्रह्मादिक के ठाकुर, कहुँ कंस की दासी ॥  
 इद्रादिक की कौन चलावै, संकर करत खदासी ।  
 निराम आदि अंदीजन जाके, सेष सीस के बासी ॥

जाकेँ रमा रहति चरननि तर, कौन भनै कुबिजा सी ।  
सूरदास-प्रभु दृढ़ करि बाँधि, प्रेम-पुंज की पासी ॥७९॥

काहे कौँ गोपीनाथ कहायत ।

जौ मधुकर वै स्याम हमारे, क्यौँ न इहाँ लौँ आवत ॥  
सपने की पहिचानि मानि जिय हमहिँ कलंक लगावत ।  
जौ पै कृष्ण कुवरी रीके सोइ किन विरद बुलावत ॥  
ज्यौँ राजराज काज के औरै, औरै दसन दिखावत ।  
ऐसैँ हम कहिये सुनिबे कौँ, मूर अनत बिरमावत ॥८०॥

साँवरै साँधरी रैनि कौ जायौ ।

आधी राति कंस के त्रासनि, बभ्रुवौ मोकुल ल्यायौ ॥  
नंद पिता अरु मातु जसोदा, माखन मही खवायौ ।  
हाथ लकड़ कामरि कौंधे पर, बछरुन साथ डुलायौ ॥  
कहा भयौ मधुपुरी अत्रतरे, गोपीनाथ कहायौ ।  
ब्रज बधुअनि भिलि साँट कडीली, कपि ज्यौँ नाच नचायौ ॥  
अब लौँ कहाँ रहे हो ऊधौ, लिखि-लिखि जोग पठायौ ॥  
सूरदास हम यहै परेखौ, कुवरी हाथ बिकायौ ॥८१॥

जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै ।

सूरी के पातनि के बदलैँ, को मुक्ताइल हैहै ॥  
यह ज्यौपार तुम्हारे ऊधौ, ऐसैँ ही धर्यौ रहैहै ।  
जिन पै तैँ लैँ आए ऊधौ, तिनहिँ के पेट समैहै ॥  
दाख छौँडि कै कटुक निबैरी, को अपने मुख खैहै ।  
गुन करि माँही सूर सावरैँ, को निरगुन निरबैहै ॥८२॥

सीटी बातनि में कहा लीजै ।

जौ पै वै हरि होहिँ हमारे, करन कहैँ सोइ कीजै ॥  
जिन मोहन अपनेँ कर काननि, करनफूल पहिराए ।  
तिन मोहन माटी के सुझा, मधुकर हाथ पठाए ॥  
एक दिवस बेती बृंदावन, रचि पचि विधि बनाइ ।  
ते अब कहत जटा माथे पर, बदलौ नाम कन्हाइ ॥  
लाइ सुगंध बनाइ अशुषन, अरु कीन्ही अरधंग ।  
सो वै अब कहि कहि पठवत हैँ असम चढ़ावन अंग ॥

हम कहा करें दूरि नंद-नंदन, तुम तु मधुप मधुपती ।  
सूर न होहिँ स्याम के मुख की, जाहु न जारहु छाती ॥८३॥

ऊधौ तुम हौ निकट के बासी ।

यह निरगुन लै तिनहिँ सुनावहु, जे मुडिवा बसै कासी ॥  
सुरलीधरन सकल अंग सुंदर, रुरसिधु की रासी ।  
जोग बटारे लिए फिरत हौ, ब्रजवासिन की फाँसी ॥  
राजकुमार भलै हम जाने, वर मैँ कंस की दासी ।  
सूरदास जदुकुलहिँ लजावत, ब्रज मैँ होति है हंसी ॥८४॥

जा दिन तैँ गोपाल चले ।

ता दिन तैँ ऊधौ या ब्रज के, सब स्वभाव बदले ॥  
घंट अहार बिहार हरष हित, सुख सोभा गुन गान ।  
ओज तेज सवरहित सकल बिधि, आरति असम समान ॥  
बाढ़ी निसा, बलय आभूपन, उर-कंचुकी उसास ।  
नैननि जल अंजन अंचल प्रति, आवन अवधि की आस ॥  
अब थह दसा प्रगट था तन की, कहियौ जाइ सुनाइ ।  
सूरदास प्रभुसो कीजौ जिहिँ, बेगि मिलहिँ अब आइ ॥८५॥

हम तौ कान्ह कलि की भूखी ।

कहा करें लै निरगुन तुम्हरी, बिरहिनि बिरह बिदूषी ॥  
कहियै कहा यहै नहिँ जानत, कहौ जोग किहि जोग ।  
पालागौँ तुमहीँ से वा पुर, बसत बावरे लोग ॥  
चंदन, अमरन, चीर चारु बर, नंकु आपु तन कीजै ।  
दंड, कर्मडल, भसम, अधारी, तब जुवतिनि कौँ दीजै ॥  
सूर देखि दृढ़ता गोपिन की, ऊधौ दृढ़ ब्रत पायौ ।  
करी कृपा जदुनाथ मधुप कौँ, प्रेमहिँ पढ़न पठायौ ॥८६॥

चौथा संवाद

गोपी सुनहु हरि संदेश ।

कहौ पूरन ब्रह्म ध्यावहु, त्रिगुन दिव्या भेष ॥  
मैँ कहौँ सो सत्य मानहु, सगुन डारहु नाखि ।  
पंच त्रय-गुन सकल देही, जगत ऐसौ भाधि ॥

ज्ञान बिनु नर-मुक्ति नाही, यह विषय संसार ।  
 रूप-रेख, न नाम जल थल, वरन अबरन सार ॥  
 मातु पिनु कोउ नाहि नारी, जगत मिथ्या लाइ ।  
 सूर सुख-दुख नहीं जाकै, भजौ ताकै जाइ ॥८७॥

ऐसी बात कहौ जनि ऊधौ ।

कमलनैन की कानि करति है, आचत बचन न सूधौ ॥  
 बातनि ही उढ़ि जाहि और ज्यौ, त्यौं नाही हम कौंधी ।  
 मन, बच, कर्म सोधि एकै मत, नंद-नंदन रंग रांची ॥  
 सो कहु जतन करौ पालागौ, भिटे हिये की सूख ।  
 सुरली धरहि आनि दिखरावहु, छोड़े पीत दुकूल ॥  
 इनहौं बातनि भए स्थाभ तनु, मिलवत हौ गढ़ि छोलि ।  
 सूर बचन सुनि रह्यौ ठगौसौ, बहुरि न आयौ बोलि ॥८८॥

फिरि फिरि कहा बनावत बात ।

प्रात काल उठि खेलत ऊधौ घर-घर माखन खात ॥  
 जिनकी बात कहत तुम हमसौं, सो है हमसौं दूरि ।  
 ह्यौं हैं निकट जसोदा-नंदन, प्रान सजीवन मूरि ॥  
 बालक संग लिये दधि चोरत, खात खवावत डोलत ।  
 सूर सीस नीचौ कत नावत, अब काहें नाहि बोलत ॥८९॥

फिरि-फिरि कहा सिखावत मौन ।

बचन दुसह लागत अलि तेरे, उधौं पजरे पर लौन ॥  
 स्वंगी, सुजा, भस्म, त्वचा-मृग, अरु अवराधन पौन ।  
 हम अबला अहीरि सठ मधुकर, धरि जानहिं कहि कौन ॥  
 यह मत जाइ तिनहिं तुम सिखवहु, जिनहिं आजु सब सोहत ।  
 सूरदास कहुं सुनी न देखी, पोत सूतरी पोहत ॥९०॥

ऊधौं हमहिं न जोग सिखैये ।

जिहिं उपदेस मिलै हरि-हमकौं, सो व्रत नेम बतैये ॥  
 मुक्ति रहौ घर बैठि आपने, निर्गुन सुनि दुख पैये ।  
 जिहिं तिर केस कुमुभ भरि गूँदे, कैसै भस्म चढ़ैये ॥  
 जानि जानि सब मगन भई हैं, आपुन आपु लखैये ।  
 सूरदास-प्रभु सुनहु नवौ निधि, बहुरि कि इहिं बज अह्यै ॥९१॥

मधुकर स्याम हमारे ईस ।

तिनको ध्यान धरे निसि बासर, औरहिँ नवै न सीस ॥

जोगिनि जाइ जोग उपदेशहु, जिनके मन दस-बीस ।

एकै चित एकै वह मूरति, तिन चितवतिँ दिन तीस ॥

काहेँ निरगुन ग्यान आपनौ, जित कित डारत खीस ।

सूरदास-प्रभु नंदनंदन बिनु, हमरे को जगदीस ॥६२॥

सतगुरुचरन भजे बिनु विद्या, कहु कैसेँ कोउ पावै ।

उपदेशक हरि दूरि रहे तैँ, क्याँ हमरे मन आवै ॥

जो हित कियौ तौ अधिक करहि किन, आपुन आनि सिखावै ।

जोग बोझ तेँ चलि न सकैँ तौ, हमहीँ क्याँ न बुलावै ॥

जोग ज्ञान मुनि नगर तजे बरु, सघन गहन बन धावै ।

आसन भोज नेम मन संजम, बिपिन मध्य बनि आवै ॥

आपुन कहैँ करैँ कहु औरे, हम सबहिनि डहकावै ।

सूरदास ऊधौँ सौँ स्यामा, अति संकेत जनावै ॥६३॥

ऊधौँ मन नहिँ हाथ हमारैँ ।

रथ चढ़ाइ हरि संग गएँ लै, मथुरा जवाहिँ सिधारे ॥

नातरु कहा जोग हम छोँडि, अति रुचि कैँ तुम ल्याए ।

हम तौ भँखतिँ स्याम की करनी, मन लैँ जोग पठाए ॥

अजहँँ मन अपनौ हम पावैँ, तुम तेँ होइ तौ होइ ।

सूर सपथ हमैँ कोटि तिहारी, कहीँ करैँगी सोइ । ६४ ॥

ऊधौँ मन न भएँ दस बीस ।

एक हुतौ सो गयौँ स्याम संग, को अघराधैँ ईस ॥

इंद्री सिथिल भईँ केसव बिनु, ज्यैँ देहीँ बिनु सीस ।

आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिँ कोटि बरीस ॥

तुम तौ सखा स्याम सुंदर के, सकल जोग के ईस ।

सूर हमारैँ नंद-नंदन बिनु और, नहींँ जगदीस ॥६५॥

इहिँ उर मागुन चोर गडे ।

अब कैसेँ निकसत सुनि ऊधौँ, तिरछे हूँ जु अडे ॥

जदपि अहीर जसोदा-नंदन, कैसेँ जात छँडे ।

हाँ जादौपति प्रभु कहियत हैँ, हमैँ न लगत बडे ॥

को बसुदेव देवकी नंदन, को जानै को बूझै ।  
सूर नंदनंदन के देखत, और न कोऊ सूझै ॥६६॥

मन मैँ रह्यौ नाहिँन ठौर । निश्चिन्त क  
नंदनंदन अछत कैसेँ, अनिधै उर और ॥  
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत राति ।  
हृदय तैँ वह मदन मूरति, छिन न इत उत जाति ॥  
कहत कथा अनेक ऊधौ, लोभ-लोभ दिखाइ ।  
कह करौँ मन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समाइ ॥  
स्याम गात सरोज-आनन, लखिन मृदु मुख हास ।  
सूर इनकैँ दरस कारन, भरत लोचन प्यास ॥६७॥

मधुकर स्याम हमारे चोर ।

मन हरि लियौ तनक चितवनि मैँ, चपल नैन की कोर ॥  
पकरे हुते हृदय उर अंतर, प्रेम प्रीति कैँ जोर ।  
गए छँडाइ तोरि सब बंधन, दैँ गएँ हँसनि अँकोर ॥  
चौकि परीँ जागत निसि बीती, बूर मिल्यौ इक भौर ।  
सूरदास-प्रभु सरबस लूठ्यौ, नागर नवल-किसोर ॥६८॥

सब दिन एकहिँ से नहिँ होते ।

तब अलि ससि सीरौ अब तातौ, भयो बिरह जरि मो तैँ ॥  
तब षट मास रास-रस-अंतर, एकनु निमिष न जाने ।  
अब औरै गति भई कान्ह बिनु पल पूरन जुग माने ॥  
कहा मति जोग ज्ञान साखा सति ते किन कहे घनेरे ।  
अब कछु और सुहाइ सूर नहिँ, सुमिरि स्याम गुन केरे ॥६९॥

सखी री स्याम सबै इक सार ।

मिठे बचन सुहाए बोलत, अंतर-जारनहार ॥  
भँवर कुरंग काक अरु कोकिल, कपटिन की चटसार ।  
कमलनैन मधुपुरी सिधारे, मिठे रायौ मंगलचार ॥  
सुनहु सखी री दोष न काहूँ, जो बिधि लिख्यौ लिखार ।  
अह करतूति उनहिँ की नाही, पूरव-बिबिध बिचार ॥  
कारी घटा देखि बादर की, सोभा देति अपार ।  
सूरदास सरिता सर पोषत, चातक करत पुकार ॥१००॥

## उद्धव संदेश

बिलग जानि मानौ ऊधौ कारे ।

वह मथुरा काजर की ओबरी, जे आवै ते कारे ॥  
 तुम कारे सुफलक सुत कारे, कारे कुटिल सँवारै ॥  
 कमलनैन की कौन चलावै, सबहिनि मै मनियारे ॥  
 मानौ नील माट तै काड़े, जमुना आइ पखारे ।  
 तातै स्याम भई कालिंदी, सूर स्याम गुन न्यारे ॥१०१॥

ऊधौ भली भई ब्रज आए ।

बिधि कुलाल कीन्हे कौंचे घट ते तुम आनि पकाए ॥ →  
 रंग दीन्हौ हो कान्ह साँवरै, अँग-अँग चित्र बनाए ।  
 पातै गारे न नैन नेह तै, अवधि अटा पर छाए ॥  
 ब्रज करि अँघा जोग ई धन करि, सुरति आनि सुलगाए ।  
 फँक उसास बिरह प्रजरनि सँग, ध्यान दरस सियराए ॥  
 भरे सँपूरन सकल प्रेम-जल, छुवन न काहू पाए । ✓  
 राज काज तै गए सूर-प्रभु, नंद-नंदन कर लाए ॥१०२॥

जौ पै हिरदै माँक हरी ।

तौ कहि इती अवज्ञा उनपै, कैसै सही परी ॥  
 सब दावानल दहन न पायौ, अब इहि बिरह जरी ।  
 उर तै निकसि नंद नंदन हम, सीतल क्यों न करी ॥  
 दिन प्रति नैन इंद्र जल बरषत, घटत न एक घरी ।  
 अति ही सीत भीत तन भी जत, गिरि अंचल न धरी ॥  
 कर-कंकन दरपन लै देखौ, इहि अति अनख मरी ।  
 क्यों अब जियहि जोगा सुनि सूरज, बिरहिनि बिरह भरी ॥१०३॥

ऐसौ जोग न हम पै होइ ।

गोखि मूदि कह पावै इँद्रे, अँधरे ज्यौ टकटोइ ॥  
 भसम लगावत कहत जु हमकौ, अँग कुंकमा धोइ ।  
 सुनि कै बचन तुम्हारे ऊधौ, नैना रीवत ओइ ॥  
 कुंतल कुटिल मुकुट कुंडल छबि, रही जु चित मै पोइ ।  
 पूरज प्रभु बिनु प्रान रहै नहि, कोटि करौ किन कोइ ॥१०४॥

हमसौ उनसौ कौन सगाई ।

हम अहीर अबला बजवासी वै अमुपति जदुराई ॥

कहा भयौ जु भए जदुनंदन, अब यह पदभी पाई ।  
सकुच न आवत दोष बसत की, तजि ब्रज गए पराई ॥  
ऐसे भए उहाँ जादौपति, गए गोप बिलराई ।  
सूरदास यह ब्रज कौ नाती, भूलि गए बलभाई ॥१०५॥

तौ हम मानै बात तुम्हारी ।

अपनौ ब्रह्म दिखावहु ऊधौ, सुकुट पितांबर धारी ॥  
भनिहै तब ताकौ सब गोपी, सहि रहिहै बरु गारी ।  
भूत समान बतावत हमकौ, डारहु स्याम बिसारी ॥  
जे मुख सदाँ अचवत हैं, ते बिप क्यौ अधिकारी ।  
सूरदास-प्रभु एक अंग पर, रीझि रही ब्रजनारी ॥१०६॥

ऊधौ जोग बिसरि जनि जाहु ।

बाँधौ गॉठि छूटि परिहै कहुँ, फिरि पाऊँ पछिताहु ॥  
ऐसी बहुत अनूपम मधुकर, मरम न जानै और ।  
ब्रज बनितनि के नहीं काम की, है तुम्हरेई और ॥  
जो हित करि पठ्यौ मनमोहन, सो हम तुमकौ वीनौ ।  
सूरदास ज्यौँ बिप्र नारियर, करही बंदन कीनौ ॥१०७॥

ऊधौ काहे कौ भक्त कहावत ।

जु पै जोग लिखि पठ्यौ हमकौ, तुमहूँ न भस्म चढ़ावत ॥  
श्रंगी सुद्रा भस्म अधारी, हमही कहा सिखावत ॥  
कुबिजा अधिक स्याम की ध्यारी, ताहि नहीं पहिरावत ॥  
यह तौ हमकौ तबहि न सिख्यौ, जब तै गाइ चरावत ।  
सूरदास-प्रभु कौ कहियौ अब, लिखि-लिखि कहा पठावत ॥१०८॥

(ऊधौ) ना हम बिरडिनि ना तुम दास ।

कहत मुनत घट प्रान रहत है, हरि तजि भजहु अकास ॥  
बिरही मीन मरे जल बिछुरै, छुँडि जियन की आस ।  
दास भाव नहिँ तजत पपीहा, बरपत मरत पियास ॥  
पंकज-पद्म कौँज भौँ बिहरत, बिधि कियौ नीर निरास ।  
राजिव रवि औ दोष न मानस, ससि सौँ सहज उदास ॥  
प्रगत प्रेति वसरथ प्रतिपाली, प्रीतम कै वनबास ।  
सूर स्याम सौँ इड व्रत राख्यौ, मेदि जगत उपदास ॥१०९॥



ऊधौ लै चल लै चल ।

जहँ वै सुंदर स्याम विहारी, हमकोँ तहँ लै चल ॥  
 आवन-आवन कहि गए ऊधौ, करि गए हमसौँ छल ।  
 हृदय की प्रीति स्याम जू जानत, कितिक दूरि गोकुल ॥  
 आपुन जाइ मधुपुरी छाए, उहाँ रहे हिलि मिल ।  
 सूरदास स्वामी के बिहुरैँ, नैननि नीर प्रबल ॥११०॥

गुप्त मते की बात कहाँ, जो कहौ न काहू आगैँ ।  
 कै हम जानैँ हे हरि तुमहूँ, इतनी पावहिँ माँगैँ ॥  
 एक बेर खेलत वृंदावन, कंटक चुभि गयो पाई ।  
 कंटक सौँ कंटक लै काढ़्यौ, अपनेँ हाथ सुभाइ ॥  
 एक दिवस बिहरत बन भीतर, मैँ जु सुनाई भूख ।  
 पाके फल वै देखि मनोहर, चढ़े कृपा करि रूख ॥  
 ऐसी प्रीति हमारी उनकी, असतैँ गोकुल बास ।  
 सूरदास-प्रभु सब बिसराई, मधुवन कियौ निवास ॥१११॥

ऊधौ जौ हरि हितू तुम्हारे ।

रहै तुम कहियौ जाइ कृपा करि, ए दुख-सबै हमारे ॥  
 तन तरिवर उर स्वास पवन मैँ, बिरह-दवा अति जारे ।  
 नहिँ सिरात नहिँ जात द्वार हूँ, सुलगि-सुलगि भए कारे ।  
 जद्यपि प्रेम उमँगि जल सीँचे, धरपि-धरपि वन हारे ।  
 जौ सीँचे इहिँ भाँति जतन करि, तो एतैँ अतिपारे ॥  
 कीर कपोत कोकिला आतक, अधिक विरोग विहारे ।  
 क्यौँ जीवैँ इहिँ भाँति सूर प्रभु, ब्रज के लोग बिचारे ॥११२॥

विलास हम मानैँ ऊधौ काकौ ।

तरसत रहे बसुदेय देवकी, नहिँ हित मातु पिता कौ ॥  
 काके मातु पिता को काकौ, दूध पियौ हरि जाकौ ।  
 नंद जसोदा लाइ लड़ायौ, नाहिँ भयौ हरि ताकौ ॥  
 कहियौ जाइ बनाइ बात यह, को हित है अबला कौ ।  
 सूरदास प्रभु प्रीति है कासैँ, कुटिल मीत कुबिजा-कौ ॥११३॥

जीवन मुख देखे कौ नीकौ ।

करस परस दिन राति पाह्यस स्याम पियारे पी कौ ।

सूनौ जोग कहा लै कीजै, जहाँ ज्यात है जी कौ ।  
 नैननि मूँदि मूँदि कह देखौ, बँधौ ज्ञान दोषी कौ ॥  
 आछे सुंदर स्याम हमारे, और जगत सब फीकौ ।  
 खाटी मही कहा रुचि मानै, सूर खवैया घी कौ ॥११४॥

अपने सगुन गोपालहिँ माई इहिँ बिधि काहै हेति ।  
 ऊधौ की इन मीठी बातनि, निर्गुन कैयँ लेति ॥  
 धर्म, अर्थ, कामना सुनावत, सब सुख मुक्ति समेति ।  
 काकी भुख गई मन लडू, सो देखहु चित्त भेति ॥  
 जाकौ मोक्ष बिचारत बरनत, निगम कहत है नेति ।  
 सूर स्याम तजि को भुस फटकै, मधुप तुम्हारे हेति ॥११५॥

### पाँचवाँ संवाद

वे हरि सकल ठौर के बासी ।

पूरन ब्रह्म अखंडित मंडित, पंडित मुनिनि बिलासी ॥  
 सस पताल ऊरध अध पृथ्वी, तल नभ बरेन बयारी ।  
 अभ्यंतर दृष्टी देखन कौँ, कारन रूप सुरारी ॥  
 मन बुधि चित्त अहंकार दसैंद्रिय प्रेरक थंभनकारी ।  
 ताकै काज वियोग बिचारत, ये अबला-व्रजनारी ॥  
 जाकौँ जैसौ रूप मन हवै, सो अपबस करि लीजै ।  
 आसन बैसन ध्यान धारना, मन आरोहन कीजै ॥  
 षट दल अठ द्वादस दल निरमल, अजपा जाप जपाली ।  
 त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि, यौँ मिलिहै बनमाली ॥  
 एकादस गीता स्तुति साखी, जिहिँ बिधि मुनि समुकाए ।  
 ते संदेस श्रीमुख गोपिनि कौ, सूर सु मधुप सुनाए ॥११६॥

ऊधौ हमरी सौँ तुम जाहु ।

यह गोकुल पूनौ कौ चंदा, तुम हँ आप राहु ॥  
 अह के प्रसे गुसा परगास्यौ, अब लौँ करि निरबाहु ।  
 सब रस लै नंदखाल सिधारे, तुम पठए बढ साहु ॥  
 जोग बेचि कौ तंदुल लीजै, बीच बसेरे खाहु ।  
 सूरस अबाहीँ उठि जैहौ, मिटिहै मन कौ दाहु ॥११७॥

ऊधौ मौन साधि रहे ।

जोग कहि पछितात मन-मन, बहुरि कछु न कहे ॥  
 स्थाम कौ यह नही वूकै, अतिहि रहे खिसाइ ।  
 कहा मै कहि-कहि लजानी, नार रखौ नवाइ ॥  
 'प्रथम ही कहि बचन एकै, रह्यौ गुरु करि मानि ।  
 सूर-प्रभु भोकै पढायौ, यहै कारन जानि ॥११८॥

मधुकर भली करी तुम आए ।

वै बातें कहि कहि या दुख मै, ब्रज के लोग हँसाए-॥  
 मोर सुकृष्ट सुरली पीतांबर, पठवहु खोज हमारी ।  
 १. आयुन जटाघुट, सुद्रा धरि, लीजै भस्म अघारी ॥  
 कौन काज वृंदावन कौ सुख, दही भात की छाक ।  
 अब वै स्थाम कूबरी दोऊ, बने एक ही ताक ॥  
 वै प्रभु बड़े सखा तुम उनके, जिनके सुगम अनीति ।  
 या जमुना जत कौ सुभाव यह, सूर विरह की प्रीति ॥११९॥

काहे कौं रोकत मारग सुधौ ।

सुनहु मधुप निरगुन कंटक तैं, राजपंथ क्यौं हँधौं ॥  
 के तुम सिखि पठए हौ कुबिजा, क्यौं स्थामवनहँधौं ॥  
 वेद पुरान सुभृति सब हँधौं, जुवतिनि जोग कहँ धौं ॥  
 ताकौ कहा परेखौ कीजै, जानै छँड़ न दूधौ ।  
 सूर सूर अक्रूर गयौ लै, न्याज निबेरत ऊधौ ॥१२०॥

ऊधौ कोउ नाहिँ न अधिकारी ।

लौ न जाहु यह जोग आपनौ, कत तुम होत दुखारी ॥  
 यह तौ वेद उपनिषद् मत है, महा पुरुष प्रतधारी ।  
 हम अबला अहीरि ब्रज-वासिनि, नाहीं परत सँभारी ॥  
 को है सुनत कइत हौ कासैं, कौन कथा बिस्तारी ।  
 सूर स्थाम कौ संग गयौ मन, अहि कौंचुली उतारी ॥१२१॥

वै बातें जमुना-तीर की ।

कबहुँक सुरति करत हँ मधुकर, हरन हमारे चीर की ॥  
 बीन्हे वसन देखि ऊँचे द्रुम, रबकि धवन बखबीर की

दोज हाथ जोरि करि माँगै, धवाई नंद अहीर की ।  
सूरदास-प्रभु सब सुख-दाता, जानत हैं पर पीर की ॥१२

प्रेम न शक्त हमारे बूतै ।

किहँ गायंद बॉध्याँ सुनि मधुकर, पदुम नाल के काँचे सूतै ।  
सोवत मनसिज आनि जगायौ, पठै सँदेस स्याम के दूतै ।  
बिरह-समुद्र सुखाइ कौन बिधि, रंचक जोग अग्नि के लूतै ॥  
सुफलक सुत अरु तुम दोऊ मिलि, लीजै मुकुति हमारे दूतै ।  
चाहतिँ मिलन सूर के प्रभु कौँ, क्यों पतिथाहँ तुम्हारे धूतै ॥

ऊधौ सुनहु नैकु जो बात ।

अबलनि कौँ तुम जोग सिखावत, कहत नहीं पछितात ॥  
ज्यौँ ससि बिना मलीन कुमुदिनी, रवि विनुहीँ जलजात ।  
त्यौँ हम कमलनेन विनु देखे, तलफि-तलफि सुरभात ॥  
जिन खवननि सुरलीँ सुर अँवयौ, मुद्रा सुनत डरात ।  
जिन अवरनि अमृत-फल चाख्यौ, ते वधौँ कटु फल खात ॥  
कुंकुम चंदन घसि तन लावतिँ, तिहिँ न बिभूति सुहात ।  
सूरदास प्रभु विनु हम यौँ हैँ, ज्यौँ तरु जीरन पात ॥१

ऊधौँ जोग जोग हम नाहीँ ।

अबला सार-ज्ञान कह जानैँ, कैसैँ ध्यान धराहीँ ॥  
तेईँ मूँदन नैन कहत हौ, हरि मूरति जिन भाहीँ ।  
ऐसी कथा कपट की मधुकर, हमतैँ सुनी न जाहीँ ॥  
खवन चीरि सिर जटा बँधावहु, थे दुख कौन समाहीँ ।  
चंदन तजि अंग भस्म बतावत, बिरह-अनल अति दाहीँ ॥  
जोगी भ्रमत जाहि लनि भूले, सो तौ हैँ अप माहीँ ।  
सूरस्याम तैँ न्यारी न पल-छिन, ज्यौँ घट तैँ परछाहीँ ॥१२

हम तौ नंद-घोष के बासी-

नाम गुपाल जाति कुल गोपक, गोप-गुपाल-उपासी ॥  
गिरिवर धारी गोधन चारी, बृंदावन अभिलाषी ।  
राजा नंद जसोदा रानी, सजल-नदी जमुना सी ॥  
सीत हमारे परम मनोहर, कमलनेन सुख-रासी ।  
सूरदास-प्रभु कहौँ कहाँ लौँ, अष्ट महा-सिधि दासी ॥१२

उद्धव संदेश

बह गोकुल गोपाल-उपासी ।

जे गाहक निरगुन के ऊधौ, ते सब बसत ईस-पुर कासी ॥  
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि, तदपि रहति चरननि रस रासी ॥  
अपनी सीतलता नहि छौंइत, जद्यपि बिधु भयो राहु-गरासी ॥  
किहि अपराध जोग लिखि पठवत, प्रेम भगति तै करत उदासी ॥  
सूरदास ऐसी को बिरहिनि, मोंगि मुक्ति छौंइ गुन रासी ॥ १

ऐसौ सुनिवत द्वै बैसाख । -

देखति नहीँ उधौँत जीव कौ, जतन करौ कोउ लाख ॥

मृगमद मलय कपूर कुमकुमा, केंसर मलिये साख ॥

जरत अगिनि मैँ उधौँ घृत नाथौँ, तन जरि हूँ है राख ॥

ता ऊपर लिखि जोग पठावत, खाहु नीम, तजि दाख ॥

सूरदास ऊधौँ की बलिधौँ, सब उधि बैठीँ ताल ॥ १२५ ॥

इहिँ बिधि पावस सदा हमार ।

पूरव पवन स्वास उर ऊरध, आनि मिले इकठारैँ ॥

बादर स्याम सेत नैननि मैँ, बरसि आँसु जल टारैँ ।

अरुन प्रकास पलक दुति दामिनि, गरजनि नाम पियारैँ ॥

चातक दादुर मोर प्रकट ब्रज, बसत निरंतर धारैँ ।

ऊरव येँ तव तैँ अटके ब्रज, स्याम रहे हित टारैँ ॥

कहिऐ कहि सुनैँ कत कोऊ, या ब्रज के व्यौहारैँ ।

तुमहीँ सौँ कहि-कहि पछितानी, सूर बिरह के धारैँ ॥ १२६ ॥

ऊधौँ कोकिल कूजत कानन ।

तुम हमकैँ उपदेश करत हौ, भस्म लगावन आनन ॥

औरौँ सिखी सखा सँग लैँ लैँ, डेरत चढ़े पखानन ।

बहुरौँ आइ पपीहा कैँ मिस, मदन हनत निज बानन ॥

हमतीँ निपट अहीँरि बावरी, जोग दीजिएँ जानन ।

कहा कथत मासी के आगैँ, जानत नानी नानन ॥

तुम तौँ हमैँ सिखावन आएँ, जोग होइ निरवानन ।

सूर मुक्ति कैसेँ पूजति है, वा मुरली केँ तानन ॥ १२७ ॥

हमतैँ हरि कबहूँ न उदास ।

रास खिळाइ पिळाइ अधर रस, क्योंँ विसरत ब्रज बास ॥

तुमसौँ प्रेम कथा कौ कहिबौ, मनौ काटिबौ घास  
बहिरो तान-स्वाद कह जानै, गूँगौ बात मिठास  
सुनि री सग्वी बहुरि हरि ऐहैं, वह सुख वहै बिलाम  
सूरदास ऊधौ अब हमकौँ, भए तेरहैं मास

आयौ घोष बड़ौ ब्यौपारी

खेप खादि गुरु ज्ञान जोग की, बज्र मैँ आनि उतारी ॥  
फाटक दै कै हाटक भाँगत, भोरौ निपट सुधारी ॥  
धुरही तैँ खोटी खायौ हैं, जिये फिरत सिर भारी ॥  
इनकैँ कहे कौन डहकावे, ऐसी कौन अनारी ॥  
अपनौ दूध छौँडि को पिये, खारे कूप कौ घारी ॥  
ऊधौ जाहु सबारैँ छौँ तैँ, बेगि गहरु जनि लावहु ॥  
सुख मागौ पैहौ सूरज प्रभु, साहुहिँ आनि दिखावहु ॥

ऊधौ जोग कहा है कीजनु ।

ओदियत है कि बिछैयत है, किधौँ खैयत है किधौँ पीजत ॥  
कीधौँ कछु खिलौना सुंदर, की कछु भूषन नीकौ ॥  
हमरे नंद-नंदन जो चाहियतु, मोहन जीवन जी कौ ॥  
तुम जु कहत हरि निगुन निरंतर, निगम नेति है रीति ॥  
प्रगट रूप की रासि मनोहर, क्योंँ छौँडे परतीति ॥  
गाइ चरावन राए घोष तैँ, अबहीँ हैंँ फिरि आवत ॥  
सोई सूर सहाइ हमारं, बेनु रसाल बजावत ॥१३

अपने स्वारथ के सब कोऊ ।

चुप करि रहौ मधुप रस-लंपट, तुम देखे अरु ओऊ ॥  
जो कछु क्यौँ क्यौँ चाहत हो, कहि निरवारौ सोऊ ॥  
अब मेरैँ मन ऐसियैँ पटपट, होनी होउ सु होऊ ॥  
तब कत रास रच्यौँ वृंदावन, जौ पै ज्ञान हुतोऊ ॥  
लीन्हे जोग फिरत जुवतिनि मैँ, बड़े सुपत तुम दोऊ ॥  
छुटि गयौ मान परेखौँ रे अलि, हृदे हुतौ वह जोऊ ॥  
सूरदास-प्रभु गोकुल बिसर्यौ, चित चिंतामनि खोऊ ॥१४

मधुकर प्रीति किये पड़ितानी ।

हम जावीँ ऐसैँ हि निबहैसी उन कहुँ औरैँ ठानी ॥

वा मौहन कैँ कौन पतीजै, बोलत मधुरी बानी ।  
 हमकैँ लिखि लिखि जोग पठावत, आपु करत रजधानी ॥  
 सूनी मेज सुहाइ न हरि बिनु, जागत रैनि बिहानी ।  
 जब तैँ गवन कियौ मधुवन कैँ, नैननि बरषत पानी ॥  
 कहियौ जाइ श्याम सुंदर कैँ, अंतरगत की जानी ।  
 सूरदास प्रभु मिलि कैँ बिकुरे, तातैँ भईँ दिवानी ॥१३५॥

✓ हमारैँ हरि, हारिल की लकरी ।

मनकम बचन नंद-नंदन उर, यह इढ़ करि पकरी ॥  
 जागत सोवत स्वप्न दिवस-निसिः कान्ह-कान्ह जकरी ।  
 सुनत जोग लागत हैँ ऐंसौ, ज्यौँ कहुँ ककरी ॥  
 सु तौ व्याधि हमकैँ लैँ आपु, देखी सुनी न करी ।  
 यह तौ सूर नितहिँ लेँ सौँपौ, जिनके मन चकरी ॥१३६॥ ६

कहा होत जो हरि हित चित धरि, एक बार ब्रज आवते ।  
 तरसत ब्रज के लोग दरस कैँ, निरखि-निरखि सुख पावते ॥  
 मुरली सद्द सुनावत सबहिनि, हरते तन की पीर ।  
 मधुरे बचन बोलि अमृत मुख, बिरहिनि देते धीर ॥  
 सब मिलि जग जस गावत उनकौ, हरष मानि उर आनत ।  
 नासत चिन्ता ब्रज बनितनि की, जनम सुफल करि जानत ॥  
 दुरी दुरा कौ खेल न कोऊ, खेलत हैँ ब्रज महियाँ ।  
 बाल दसा लपटाइ गहत हे, हँसि-हँसि हमरी बहियाँ ॥  
 हम दासी बिनु मोल की उनकी, हमहिँ जु चित्त बिसारी ।  
 इत तैँ उन हरि रमि रहे अग्र तौ, कुबिजा भईँ पियारी ॥  
 हिय मैँ बातैँ समुक्ति-समुक्ति कैँ, लोचन भरि-भरि आपु ।  
 सूर सनेही श्याम प्रीति के, ते अब भए पराए ॥१३७॥

मधुकर आपुन होहिँ बिराने ।

गहर हेत हितू कहवावत, भीतर काज सयाने ॥  
 यैँ सुक पिंजर माहिँ उचारत, ज्यौँ ज्यौँ कहत बखाने ।  
 छूटत हीँ उड़ि मिलैँ अपुन कुल, प्रीति न पल ठहराने ॥  
 तद्यपि मन नहिँ तजत मनोहर, तद्यपि कपटी जाने ।  
 सूरदास प्रभु कौन काज कैँ माखी मधु लपटाने ॥१३८॥

हरि तैं भली सुपति सीता कौ ।  
 जाकैं बिरह जतन ए कीन्हे, सिंधु कियो बीता कौ ॥  
 लंका जारि सकल रिपु मारे, देख्यौ भुख पुनि ताकौ ।  
 दूत हाथ उन लिखि जु पठायौ, ज्ञान कह्यौ गीता कौ ॥  
 तिनकौ कहा परेखा कीजै, कुविजा के सीता कौ ।  
 चढ़े सेज सातैं सुधि बिसरी, ज्यों पीता चीता कौ ॥  
 करि अति कृपा जोग लिखि पठायौ, देखि डराईं ताकौ ।  
 सूरजदास प्रीति कह जानैं, लोभी नवनीता कौ ॥१३६॥

ऊधौ क्यौं विसरत वह नेह ।  
 हमरैं हृदय आनि नंदनंदन, रचि-रचि कीन्हे गेह ॥  
 एक दिक्स गई गाइ दुहावन, वहाँ जु बरष्यौ मेह ।  
 लिए उड़ाइ कामरी मोहन, निज करे मानी देह ॥  
 अब हमकैं लिखि-लिखि पठवत है जोग जुगुति तुम लेह ।  
 सूरदास बिरहिनि क्यौं जीवैं कौन सयानप एह ॥१३७॥

ऊधौ मन माने की बात ।

वाल छुहारा छौं बि अमृत-फल, विपकीरा विष खान ॥  
 ज्यों चकोर कैं देइ कपूर कोउ, तजि अंगार अघाल । —  
 मधुप करत घर भोरि काठ भैं, बंधत कमल के पात ॥  
 ज्यों पतंग हित जानि आपनौ, दीपक सौं लपटात ।  
 सूरदास जाकौ मन जासौं, सोई ताहि सुहात ॥१३८॥

इहिं डर बहुरि न गोकुल आए ।

सुनि री सखी हमारी करनी, समुक्ति मधुपुरी झाए ॥  
 अघरातक तैं उठि सब वालक, मोहिं टेरें गे आइ ।  
 मानु पिता मौकौं पठयेंगे, बनहिं चरावन गाइ ॥  
 सूने भवन आइ रौकेंगी, दधि-धोरत नवनीत ।  
 पकरि जसोदा पै लै जैहैं, नाचहु गावहु गीत ॥  
 भचारिनि मोहिं बहुरि बाँधेंगी, कैतव बचन सुनाइ ।  
 वै दुख सूर सुसिरि मन ही मन, बहुरि सहै को जाइ ॥१३९॥

जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख जाने ।

तौ तजि सगुन सँकरी मूरति, फल उपदसै जानै



कुसुद चकोर मुदित बिभु निरखत, कहा करै लै भानै ।  
चातक सदा स्वाति कौ सेवक, दुखित होत बिनु पानै ॥  
भौर, कुरंग, काग, कोइल कौ, कविजन कपट बखानै ।  
सूरदास जौ सरबस दीजै, कारे कृतहि न मानै ॥१४३॥

ऊधौ सुधि नाही या तन की ।

जाइ कहौ तुम कित हौ भूले, हमश्च भई बन-वन की ।  
इक बन हूँदि सकल बन हूँदे, बन बेली मधुवन की ॥  
हारी परी वृंदावन हूँदत, सुधि न मिली मोहन की ।  
किए बिचार उपचार न लागत, कठिन बिथा भइ मन की ॥  
सूरदास कोउ कहै स्याम सौँ, सुरति करै गोपिनि की ॥१४४॥

लरिकाई कौ प्रेम कहाँ अलि कैसेँ छूटत ।

कहा कहैँ ब्रजनाथ चरित, अंतरगति लूटत ॥

वह चितवनि वह चाल मनोहर, वह मुसकानि मंद-धुनि गावनि ।  
नटवर-भेष नंद-नंदन कौ वह विनोद, वह बन तै आवनि ॥  
चरन कमल की सौँह करति हैँ, यह संदेश मोहिँ विष लारात ।  
सूरदास पल मोहिँ न बिसरति, मोहन मूरति सोवत जागत ॥१४५॥  
हृदय परिवर्तन तथा गोपी संदेश

मैँ ब्रजवासिन की बलिहारी ।

जिनके संग सदा क्रीडत हैँ, श्री गोबरधन-धारी ॥  
किनहूँ कैँ घर माखन चोरत, किनहूँ कैँ संग दानी ।  
किनहूँ कैँ संग धेनु चरावत, हरि की अकथ कहानी ॥  
किनहूँ कैँ संग जमुना कैँ सर, बंसी टेरी सुनावत ।  
सूरदास अलि बलि चरननि की, यह सुख मोहिँ नित भावत ॥१४६॥

हैँ इन मोरनि की बलिहारी ।

जिनकी सुभग चंद्रिका भायैँ, धरत गोबरधनधारी ।  
बलिहारी वा बाँस-बंस की, बंसी सी सुकुमारी ।  
सदा रहति हैँ कर जु स्याम कैँ, नैकहूँ होति न न्यारी ॥  
बलिहारी वा गुंज-जाति की, उपजी जगत उज्यारी ।  
सुंदर हृदय रहत मोहन कैँ, कबहूँ दरत न टारी ॥  
बलिहारी कुल सैल सरित जिहिँ, कहत कलिंद-दुलारी ।  
निसि-दिन कान्ह अंघ्रा आलिंगन आपुनहूँ भई कारी ॥

बलिहारी वृंदावन भूमिहिँ, सुतौ भाग की सारी ।  
सूरदास-प्रभु नॉगे पाइनि, दिन प्रति गैया चारी ॥१४७

हम पर हेत किये रहिबौ ।

या ब्रज कौ व्यौहार सखा तुम, हरि सौँ सब कहिबौ ॥  
देखे जात आपनी अँखियनि, या तन कौ दहिबौ ।  
तन की बिथा कहा कहौँ तुमसौँ, अह हमकौँ सहिबौ ॥  
तब न कियौ प्रहार प्राननि कौ, फिरि फिरि क्यौँ चहिबौ ।  
अब न देह जरि जाइ सूर इनि नैननि कौ बहिबौ ॥१४८

स्वामी पहिलौ प्रेम सँभारौ ।

ऊधौ जाइ चरन गाहि कहियै, जी तैँ हित न उतारौ ॥  
जो तुम मधुवन राज काज भए, गोकुल हम न अधारौ ।  
कमल नयन सो चैन न देखौ, नित उठि गोधन चारौ ॥  
ये ब्रज लोग मया के सेवक, तिनसौँ क्यौँ न बिहारौ ।

सूरदास-प्रभु एक बार भिलि, सकल विरह दुख टारौ ॥१४९॥

इतनी बात अलि कहियौ हरि सौँ, कब लागि यह मन दुख मैँ गारैँ  
पथ जोहत तन कोकिल बरन भईँ, निस्सि न नीँद पिय पियहिँ पुकारैँ ।  
जा दिन तैँ बिछुरे नँद-नंदन अति दुख दारुन क्यौँ निरवारैँ  
सूरदास प्रभु बिनु यह बिपदा, काकौ दरसन देखि बिसारैँ ॥१५०॥

ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौँ जाइ, हमारे हिय कौ दरद ।  
दिन नहिँ चैन, रैन नहिँ सोवति, पावक भई जुन्हाई सरद ॥  
जबतैँ लै अक्रूर गए हैँ भई विरह तन बाइ छरद ।  
काम प्रबल जाके अति ऊधौ, सोखत भइ अस पीत-हरद ॥  
सखा प्रवीन निरंतर हरि के, तातैँ कहति हैँ खोलि परद ।  
ध्यावतिँ रूप दरस तजि हरि कौ, सूर मूरि बिनु होतिँ मुरद ॥१५१॥

✓ ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै ।

घरन लागि गोबिँद सौँ कहियौ, खिलौ हमारौ दीजै ॥  
हम तौ कौन रूप गुन आगारि, जिहिँ गुपाल जू रीमँ ।  
निरखत नैन-नीर भरि आए, अरु कंचुकि पट भीजैँ ॥  
तलफत रहति मीन चातकज्यौँ, जल बिनु तृषा न छीजैँ ।  
अति व्याकुल अकुलातिँ बिरहिनी. सुरति हमरी कीजैँ ॥

अँखियाँ खरी निहारतिँ मधुवन, हरि-विनु ब्रज बिष पीजै ।  
सूरदास-प्रभु कबहिँ मिलैँगे, देखि देखि सुख जीजै ॥१५२॥

हम मति हीन कहा कछु जानैँ, ब्रजवासिनी अहीर ।  
वै जु किसोर नवल नागर तन, बहुत भूप की भीर ॥  
बचन की लाज सुरति कर राखौ, तुम अलि इतनौ कहियौ ।  
भली भई जो दूत पठायौ, इतनौ बोल निबहियौ ॥  
एक बार तौ मिलौ कृपा करि, जौ अपनौ ब्रज जानौ ।  
यहै रीति संसार सबनि की, कहा रंक कह रानौ ॥  
हम अनाथ तुम नाथ गुसाईँ राखौ, क्यों, नहिँ सोई ।  
षट रिनु ब्रज पै आनि पुकारैँ, सूरदास अब कोई ॥१५३॥

नंदनँदन सौँ इतनी कहियौ ।

जद्यपि ब्रज अनाथ करि डारथौ, तद्यपि सुरति किये चित रहियौ ॥  
तिनका-तोर करहु जनि हम सौँ, एक बास की लाज निबहियौ ।  
गुन औगुननि दोष नाहिँ कीजतु, हम दासिनि की इतनी सहियौ ॥  
तुम विनु प्रान कहा हम करिहैँ, यह अवलंब न सुपनेहु लहियौ ।  
सूरदास पाती लिखि पठई, जहाँ प्रीति तहँ ओर निबहियौ ॥१५४॥

—विनु गुपाल बैरिनि भईँ कुँजैँ ।

तब वै लता लगति तन सीतल, अब भईँ बिपम ज्वाल की पुँजैँ ॥  
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल-फूलनि अलि-गुँजैँ ।  
पवन-पान, घनसार, सजीवन, दधि-सूत किरनि भानु भईँ भुँजैँ ॥  
यह ऊँचौ कहियौ — माधौ सौँ, — मदन मारि कीन्हीँ — हम लुँजैँ ।  
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस कौँ, मग-जोवत अँखियाँ भईँ कुँजैँ ॥१५५॥

ऊँचौ इतनी कहियौ बात ।

मदन गुपाल बिना या ब्रज मैँ, होन लगे उत्तपात ॥  
तृनावर्त, बक, बकी, अधासुर, धेनुक फिरि-फिरि जात ।  
द्योम, प्रलंब, कंस कैसेँ इत, करत जिअनि की घात ॥  
काली काल-रूप दिखियत है, जमुना जलहिँ अन्हात ।  
बरुन फौंस फौंस्यौ चाहत है, सुनियत अति मुरकात ॥  
इंद्र आपने परिहँस कारन, बार-बार अनखात ।  
गोपी गाइ, गोप, गोसुत सब, थर थर अँपत सात ॥

अंचल फारति जननि जलोदा, पाग लिये कर तात ।  
लागौ बेगि गुहारि सूर-प्रभु, गोकुल बैरिनि घात ॥१२६॥

✓ ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।

अति कृस गात भईं ये तुम बिनु, परम दुखारी ॥  
जल समूह बरषति दोउ अंखियाँ, हूँकति खीन्है नाउँ ।  
जहाँ जहाँ गो दोहन कीन्हौ, सूँवति सोई ठाउँ ॥  
परति पछार खाइ छिन ही छिन, अति आतुर हूँ दीन ।  
मानहु सूर काढ़ि डारी है, बारी मध्य तैं मीन ॥१२७॥

✓ अति मलीन वृषभानु-कुमारी ।

हरि खम-जल भींज्यौ उर-अंचल, तिहिँ लालध न धुवावति सारी ॥  
अध मुख रहति अनत नहिँ चितवति, ज्यौँ राथ हारे थकित जुवारी ॥  
छूटे चिकुर बदन कुम्हिलाने, ज्यौँ नलिनी हिमकर की मारी ॥  
हरि संदेस सुनि सहज मृतक भइ, इक बिरहिनि, दूजे अलि जारी ।  
सूरदास कैसेँ करि जीवै, ब्रज बनिता बिन स्याम दुखारी ॥१३॥  
ऊधौ तिहारे पा लागति हैं, बढुरिहुँ इहिँ ब्रज करबी भाँवरी ।  
निसि न नींद भोजन नहिँ भावै; चितवत मग भइ दृष्टि भाँवरी ॥  
वहै वृंदावन वहै कुंज-वन, वहै जमुना वहै सुभग साँवरी ।  
एक स्याम बिनु कछु न भावै, रटति फिरति ज्यौँ बकति बावरी ॥  
चलि न सकति मग डुलत धरत-पग, आवति बैठत उठत ताँवरी ।  
सूरदास-प्रभु आनि मिलावहु, जग मैँ कीरति होइ रावरी ॥१३॥

पूरा परिवर्तन तथा यशोदा संदेश

अब अति चकितवंत मन मेरौ ।

आयौ हो निरगुन उपदेसन, भयौ सगुन कौ चेरौ ॥  
जो मैँ ज्ञान कह्यौ गीता कौ, तुमहिँ न परस्यौ नेरौ ।  
अति अज्ञान कछु कहत न आवै, दूत भयौ हरि केरौ ॥  
निज जन जानि मानि जतननि तुम कीन्हौ नेह धनेरौ ।  
सूर मधुप उठि चले मधुपुरी, बोरि जोग को बेरौ ॥१३०॥  
ऊधौ पा लागति हैं कहियौ, स्यामहिँ इतनी बात ।  
इतनी दूरि बसत क्यौँ बिसरे, अपने जननी-तात ॥  
जा दिन तैं मधुपुरी सिधारे, स्याम मनोहर गात ।  
वा दिन तै मेरे नैन परीक्षा, दरस प्य स अकुशात ॥

## उद्धव संदेश

जहँ खेलन के ठौर तुम्हारे, नंद देखि मुरझात ।  
 जौ कबहुँ उठि जात खरिक लौँ, गाइ दुहावन प्रात ॥  
 दुहत देखि औरनि के लरिका, प्राण निकसि नहिँ जात ।  
 सूरदास बहुरौ कब देखौँ, कोमल कर दधि-खात ॥१६१॥  
 तब तुम मेरँ काहे कौँ आए ।

मधुरा क्यौँ न रहे जटुनंदन, जौ पै कान्ह देवकी जाए ॥  
 दूध, दही काहे कौँ चोरयो, काहे कौँ बन बच्छ चराए ।  
 अथ अरिष्ट, काली फनि काढ़यो, विष जल तँ सब सखा जिवाए ॥  
 पथ पीवत हरे प्रात पूनना, सदा किए जसुमति के भाए ।  
 सूरदास लोगनि के भुरए, काहँ कान्ह, अब होत पराए ॥१६२॥  
 (मोहन) अपनी गैयो घेरि लै ।

बिडरी जातिँ काहु नहिँ मानतिँ, नैँकु सुरलि की डेर दै ॥  
 धौरी, धूमरि, पीरी, का करि, बन-बन फिरती पीय ।  
 अपनी जानि कै आनि सँभारहु, धरौं चेत अब जीय ॥  
 तुम हौ जग जीवनि प्रतिपालक, निठुराई नहिँ कीजै ।  
 ग्वालसू बाल बच्छ गो बिलखत, सूर सु दरसन दीजै ॥१६३॥  
 तब तँ छीन सरीर सुबाहु ।

आथौ भोजन सुबल करत है, सब ग्वालनि उर दाहु ॥  
 नंद गोप पिछुबारे डोलत, नैननि नीर प्रवाहु ।  
 आनंद मिथ्यौ मिठी सब लीला, काहु मन न उछाहु ॥  
 एक बेर बहुरौ ब्रज आवहु, दूध पनूखी खाहु ।  
 सूर सपथ गोकुल जौ पैठहु, उलटि मधुपुरी जाहु ॥१६४॥  
 कहियौ जसुमति की आसीस ।

जहाँ रहौ तहँ नंद लाडिलौ, जीवौ कोटि बरीस ॥  
 मुरली दई दोहनी घृत भरि, ऊधौ धरि लइ सीस ।  
 यह तौ घृत उनही सुरभिति कौ, जे प्यारी जगदीस ॥  
 ऊधौ चलत सखा मिलि आए, ग्वाल बाल दस-धीस ।  
 अबकँ यह ब्रज फेरि बसावहु, सूरदास के ईस ॥१६५॥  
 रा प्रत्यागमन तथा कृष्ण उद्धव संवाद

ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ ।

बकी कृपा करि कहियै, हम सुनिहँ मन छाइ ॥

बाबा नंद, जसोदा मैया, मिले कौन हित आई ?  
 कबहूँ सुरति करत माखन की, किधौँ रहे बिसराइ ॥  
 गोप सखा दधि-भात खात बन, अरु चाखते चखाइ ।  
 गऊ बच्छु मुरली सुनि उमड़त, अब जु रहत किहिँ भाइ ॥  
 गोपिन गृह व्यवहार बिसारे, सुख सन्मुख सुख पाइ ।  
 पलक ओट निमि पर अनखाती, यह दुख कहाँ समाइ ॥  
 एक सखी उनमें जो राधा, लेति मनहिँ जु चुराइ ।  
 सूर स्याम यह बार बार कहि मनहीँ मन पछिताइ ॥ १६६ ॥

जब मैँ इहाँ तैँ जु गयो ।

तब ब्रजराज सकल गोपी जन, आगौँ होइ लयो ।  
 उतरे जाइ नंद बाबा कैँ, सबहीँ सोध लह्यौ ॥  
 मेरी सौँ मोसौँ साँधी कहि, मैया कहा कछौँ ?  
 बारबार कुसल पूछी मोहिँ, लै लै तुम्हरो नाम ।  
 ज्यौँ जल तृषा बड़ी चातक चित, कृष्ण-कृष्ण बलराम ॥  
 सुंदर परम बिचित्र मनोहर, यह मुरली दे घाली ।  
 लई उठाउ सुख मानि सूर-प्रभु प्रीति आनि उर साली ॥ १६७ ॥

सुनियै ब्रज की दसा गुसाईँ

रथ की धुजा पीत-पट भूषन देखत ही उठि घाईँ ॥  
 जो तुम कही जोग की बातैँ, सो हम सबैँ बताईँ ।  
 श्रवन भूँदि गुन-कर्म तुम्हारे, प्रेम मगन मन गाईँ ॥  
 औरौ कछूँ सँदेस सखी इक, कहत दूरि लौँ आईँ ।  
 हुतौ कछूँ हमहूँ सौँ नातौ निपट कहा बिसराईँ ॥  
 सूरदास प्रभु बन बिनोद करि, जे तुम गाइँ चराईँ ।  
 ते गाईँ अब ग्वाल न घेरत, मानौँ भईँ पराईँ ॥ १६८ ॥

ब्रज के बिरही लोग दुखारे ।

बिन गोपाल ठगे सँ ठाड़े, अति दुबल तन करे ॥  
 नंद, जसोदा मारग जोवति, निसि-दिन साँक, सकारे ।  
 चहूँ-दिसि कान्ह-कान्ह कहि टेरत, अँसुवन बहत पतारे ॥  
 गोपी, ग्वाल, गाइँ, गो-सुत सब, अतिहीँ दीन बिचारे ।  
 सूरदास-प्रभु बिनु दौँ देखिबत चप बिना ज्यौँ वारे ॥ १६९ ॥

## उद्धव संदेश

सुनहु स्याम वै सब ब्रज-बनिता विरह तुम्हारेँ भईँ बावरी ।  
 नाहीँ बात और कहि आवति, छुँडि जहाँ लागि कथा रावरी ॥  
 कबहुँ कहतिँ हरि माखन खायौ, कौन बसै या कठिन गाँव री ।  
 कबहुँ कहतिँ हरि ऊखल बाँधे, घर-घर ते लै चलौ दौवरी ॥  
 कबहुँ कहतिँ ब्रजनाथ बन गए, जोवत-मग भईँ दृष्टि झौँवरी ।  
 कबहुँ कहति वा मुरली भदियौँ लै-लै बोलत हमरो नावँ री ॥  
 कबहुँ कहतिँ ब्रजनाथ साथ तैँ, चंद उयौँ है इहैँ ठाँव री ।  
 सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु अब वह मूरति भईँ सौँवरी ॥१७०॥

फिरि ब्रज बसौ नंदकुमार ।

हरि तिहारे विरह राधा, भईँ तन जरि छार ॥  
 बिनु अभूपन मैँ जु देखी, परी है बिकरार ।  
 एकडे रट रटत भामिनि, पीव पीव पुकार ॥  
 सजल लोचन चुअत उनके, बहति जमुना धार ।  
 विरह अगिनि प्रचंड उनकैँ, जरे हाथ लुहार ॥  
 दूसरी गति और नाहीँ, रटति बारंबार ।  
 सूर प्रभु कौ नाम उनकैँ, लकुट अंध अधार ॥१७१॥

ब्रज तैँ द्वै रितु पै न गई ।

ग्रीषम अरु पावस प्रवीन हरि, तुम बिनु अधिक भईँ ॥  
 ऊर्ध्व उसास समीर नैन घन, सब जल जोग जुरे ।  
 वरषि प्रगट कीन्हे दुख दादुर, हुते जो दूरि हुरे ॥  
 विषम वियोग जु वृष दिनकर सम, हिय अति उडौँ करै ।  
 हरि-पद विमुख भए सुनि सूरज, को तन ताप हरे ॥१७२॥

दिन दस घोष चलहु गोपाल ।

गाइनि की अवसेरि मिटावहु, मिलहु आपने ग्वाल ॥  
 नाचत नहीं मोर ता दिन तैँ, रटत न बरषा-काल ।  
 मृग दुबरे तुम्हरे दरसन बिनु, सुनत न बेनु रसाल ॥  
 वृंदावन हरयौँ होत न आवत, देख्यौँ स्याम तमाल ।  
 सूरदास मैया अनाथ है, धर चलिथै नंदलाल ॥१७३॥

ऊधौँ भलौँ ज्ञान समुझायौँ ।

म मोसौँ अब कहा कहत हौ मैँ कहि कहा पठायौँ

कहावावत हौ बड़े चतुर पै, उहौं न कछु कहि आयौ ।  
सूरदास ब्रज बासिन कौ हित, हरि हिय माहँ दुरायौ ॥१७४॥

मैं समुझाई अलि अपनौ सौ ।

तदपि उन्हें परतीति न उपजी, सबै लख्यौ सपनौ सौ ॥  
कही तुम्हारी सबै कही मैं, और कही कछु अपनी ।  
खवनि बचन सुनत भइ उनकै, ज्यौं श्रुत नापे अगानी ।  
कोऊ कही बनाइ पचासक, उनकी बात जु एक ।  
धन्य धन्य ब्रजनारि बापुरी, जिनकी और न टेक ॥  
देखत उमग्यौ प्रेम इहाँ कौ, धरे रहे सब ऊखौ ।  
सूर स्याम हैं रझौ थक्यौ सौ, ज्यौं मृग चौका भूलौ ॥१७५॥

बातैं सुनहु तौ स्याम सुनाऊँ ।

श्रुतिनि सं कहि कथा जोग की, क्यौं न इतौ दुख पाऊँ ॥  
हैं पचि एक कहैं निरगुन की, ताहु मैं अटकाऊँ ।  
वै उमडै बारिधि के जल ज्यौं, क्यौं हूँ थाह न पाऊँ ॥  
कौन कौन कौ उत्तर दीजै, तातैं भज्यौ अगाऊँ ।  
वै मेरे सिर पटिया पारै, कथा काहि उदाऊँ ॥  
एक आँधरौ, हिय की फूटी, दारत पहिरि खराऊँ ।  
सूर सकल पट दरसन वै, हैं बारहखरी पदाऊँ ॥१७६॥

कहिबे मैं न कछु सक राखी ।

बुधि विवेक अनुमान आपनै, सुख आई सो भापी ॥  
हैं मरि एक कहैं पहरक मैं, वै पल माहँ अनेक ।  
हारि मानि उठि चलयौ दीन ह्यै, छुँडि आपनी टेक ॥  
हैं पठ्यौ कतही बे काजै, सठ मूरख जु अथानौ ।  
तुमहि वृक्ष बहुते बातनि की, उहाँ जाहु तौ जानौ ॥  
श्री मुख के सिखणु भंथादिक, ते सब भए कहानी ।  
एक होइ तौ उत्तर दीजै, सूर सु मठी उफानी ॥१७७॥

कोऊ सुनत न बात हमारी ।

मानै कहा जोग जादवपति, प्रगट प्रेम ब्रजनारी ॥  
कोऊ कहति हरि राए कुंज बन, सैन धाम वै देत ।  
कोऊ कदसि इंद्र बरषा तकि, गिरि गोबर्धन जेत ॥



## उद्धव संदेश

कोऊ कहति नाग काली सुनि, हरि गए जमुना तीर ।  
कोऊ कहति अघासुर मारन, गए संग बलवीर ॥  
कोऊ कहत ग्वाल बालनि संग, खेलत बनहि लुकाने ।  
सूर सुमिरि गुन नाथ तुम्हारे, कोऊ कह्यौ न माने ॥१७८

माधौ जू कहा कह्यौ उनकी गति ।

देखत बनै कहत नहि आवै, अति प्रतीति तुम तै रति ॥  
जद्यपि ह्यै षट मास रह्यो ढिग, लही नहीं उनकी भति ।  
तास्यै कह्यौ सबै एकै बुधि, परमोधी नहि मानति ॥  
तुम कृपालु कहनामय कहियत, तातै मिलत कहा दृति ।  
सूरदास-प्रभु सोई कीजै, जातै तुम पाबहु पति ॥१७९

व्रज में एकै धरम रह्यौ ।

धृति सुमृति और वेद पुराननि, सबै गोविंद कह्यौ ॥  
बालक बुद्ध तरुन अबलनि कौ, एक प्रेम निबह्यौ ।  
सूरदास-प्रभु छाडि जमुन जल, हरि की स्वरन गह्यौ ॥१८०॥

तब तै इन सबहिनि सञ्चु पायौ ।

जब तै हरि संदेस तुम्हारौ, सुनत ताँवरौ आयौ ॥  
फूल ब्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पंठ भरि खायौ ।  
खोले मृगनि चौक चरननि के, हुतौ जु जिय बिसरायौ ॥  
कँचे बैठि बिहंग सभा मै, सुक बनराइ कहायौ ।  
किलकि-किलकिकुल सहित आपनै, कोकिल मंगलगायौ ॥  
निकासि कंदराहू तै वेहरि, पूँछ मूँड़ पर ल्यायौ ।  
गहवर तै गजराज आइकै, अंगहि गर्व बढ़ायौ ॥  
अब जानि गहरु करहु हो मोहन, जौ चाहत हौ ज्यायौ ।  
सूर बहुरि ह्यै राधा कौ, सब बैरिनि कौ भायौ ॥१८१॥

माधौ जू मै अतिही सञ्चु पायौ ।

अपनौ जानि संदेस ब्याज करि, व्रज जन मित्रन पठायौ ॥  
झुमा करौ तौ करै बिनती, उनहि देखि जौ आयौ ।  
श्रीमुख ग्यान पंथ जौ उचर्यौ, सो पै कछु न सुहायौ ॥  
सकल निगम सिद्धांत जन्म क्रम, स्थाभा सहज सुनायौ ।  
नहि धृति सेव महेश प्रप्रापसि ओ रस गोपिनि गायौ ॥

कटुक-कथा लागी मोहिँ मेरी, वह रस सिंधु उग्हायौ ।  
 उत तुम देखे और भौँति मैँ, सकल तृषा जु झुझायौ ॥  
 तुम्हरी अकथ कथा तुम जानौ, हम जन नाहिँ बसायौ ।  
 सूर स्याम सुंदर यह सुनि कै, नैननि नीर बहायौ ॥  
 ब्रज मैँ संभ्रम मोहिँ भयौ ।

तुम्हरी ज्ञान संदेसौ प्रभु जू, सबै जू भूलि गयो ॥  
 तुमहीँ सौँ बालक किसोर बपु, मैँ घर-घर प्रति देख्यौ ।  
 सुरकीधर वन स्याम मनोहर, अद्भुत नटवर पेख्यौ ॥  
 कौतुक रूप भवाल वृंदनि संग, गाइ चरावन जात ।  
 सौँभ प्रभातहिँ गो दोहन मिस, चोरी माखन खात ॥  
 नंद-नंदन अनेक लीला करि, गोपिनि चित्त चुरावत ।  
 वह सुख देखि जु नैन हमारे, ब्रह्म न देख्यौ भावत ॥  
 करि करुना उन दरसन दीन्हौ, मैँ पचि जोग बह्यौ ।  
 छन मानहु षट्मास सूर-प्रभु, देखत भूलि रह्यौ ॥ १  
 ब्रज मैँ एक अचंभौ देख्यौ ।

मोर मुकुट पीतांबर धारे, तुम गाइनि संग पेख्यौ ॥  
 गोप बाल संग धावत तुम्हरेँ, तुम घर घर प्रति जात ।  
 दूध दहीरू मही लै हारत, चोरी माखन खात ॥  
 गोपी सब मिलि पकरतिँ तुमकौँ, तुम छुड़ाइ कर भागत ।  
 सूर स्याम नित प्रति यह लीला, देखि देखि मन लागत ॥ १

श्रीकृष्ण वचन

सुनि ऊधौ मोहिँ नैकु न बिसरत वै ब्रजवासी खोग ।  
 तुम उनकौँ कह्यु भली न कीन्ही, निसि दिन दियौ वियोग ॥  
 जउ वसुदेव-देवकी मथुरा, सकल राज-सुख भोग ।  
 तद्यपि मनहिँ बसत बंसी बट, वन जमुना संजोग ॥  
 वै उत रहत प्रेम अवलंबन, इत तैँ पठ्यौ जोग ।  
 सूर उसाँस छौँडि भरि लोचन, बह्यौ विरह ज्वर सोग ॥  
 ऊधौ मोहिँ ब्रज बिसरत नाहीं ।

हृदावन गोकुल वन उपवन, सघन कुंज की छाहीं ॥  
 प्रात समय माला जसुमति अरु नंद देखि सुख पावत ।  
 माखन रोटी क्यौ सजायौ, भति द्विप साथ सवावत ॥



## द्वारिका चरित

### द्वारिका प्रयाण

बार सत्तरह जरासंध, मथुरा चढ़ि आयौ ।  
 गायौ सो सब दिन हारि, जात घर बहुत लजायौ ॥  
 तथ खिस्याइ कै कालजवन, अपनैँ संग त्याग्यौ ।  
 हरि जू कियौ विचार, सिंधु तट नगर बसायौ ॥  
 उग्रसेन सब लै कुटुंब, ता ठौर सिंघायौ ।  
 अमर पुरी तैँ अधिक, तहाँ सुख लोगनि पायौ ॥  
 कालजवन मुहुकुंदहिँ सौँ, हरि भक्त करायौ ।  
 वदुरि आइ भरमाइ, अचल रिपु ताहि जरायौ ॥  
 जरासिंधु हूँ ह्यौँ तैँ पुनि, निज देस सिंघायौ ।  
 गए द्वारिका स्याम राम, जस सूरज गायौ ॥१॥

### रुक्मिणी परिणय

हरि हरि हरि सुभिरन करौ । हरि चरनारविंद उर धरौ ॥  
 हरि सुभिरन जब रुक्मिनि कर्यौ । हरि करि कृपा ताहि तब बर्यौ  
 कह्यौँ सो कथा सुनौ चित लाइ । कहै सुने सो रहै सुख पाइ  
 कुंडिनपुर को भीषम राइ । बिरनु भक्ति कौ तिहिँ चित चाइ ।  
 रुक्म आदि ताके सुत पाँच । रुक्मिनि पुत्री हरि रँग रोच ।  
 नृपति रुक्म सौँ कह्यौ बनाइ । कुँवरि जोग बर श्री जदुराइ ।  
 रुक्म रिताइ पिता सौँ कह्यौ । जदुपति ब्रज जो चोरत मझौ ।  
 रुक्मिनि कौँ सिसुपालहिँ दीजै । करि विवाह जग मैँ जस लीजै ।  
 यह सुनि नृप नारी सौँ कह्यौ । सुनि ताकेँ अंतरगत दह्यौ ।  
 रुक्म चँदेरी बिप्र पठायौ । ब्याह काज सिसुपाल बुलायौ ।  
 सो बारात जोरि तहँ आयौ । श्री रुक्मिनि के मन नहिँ भायौ ।  
 कह्यौ मेरे पति श्री भगवान । उनहिँ बरैँ कै तजौँ परान ।  
 यह निहचै करि पत्री लिखी । बोल्यौ बिप्र सहज इक सखी ।  
 पाती दे कह्यौ बचन सुनाइ । हरि कौ दे कहियौ या भाइ ।  
 भीषम सुता रुक्मिनी बाम । सूर अपति निसि दिन तुब नाम

## द्वारिका चरित

द्विज पाती वै कहियौ श्यामहिँ ।

कुंडिनपुर की कुँवरि रुकमिनी, जपति तिहारे नामहिँ ।  
पालागौँ तुम जाहु द्वारिका, नंद-नँदन के धामहिँ ॥  
कंचन, चीर-पटंबर देखैँ, कर कंकन जुं इनामहिँ ।  
यह सिसुपाल अस्सुचि अज्ञानी, हरत पराई बामहिँ ॥  
सूर श्याम-प्रभु तुम्हरोँ भरोसौ, लाज करौ किन नामहिँ ॥३॥

द्विज कहियौ जदुपति सौँ बात ।

बेद बिरुद्ध होत कुंडिनपुर, हंस के अंस काग नियरात ॥  
जनि हमरे अपराध बिचारहु, कन्या लिख्यौ मेदि गुरु तात ।  
तन आतमा समरथ्यौ तुमकौँ, उपजि परी तातैँ यह बात ॥  
कृपा करहु उठे बेगि चढ़हु रथ, लगन समै आवहु परभात ।  
कृपन सिंह बजि धरी तुम्हारी, लैबे कौँ जंबुक अकुजात ॥  
तातैँ मैँ द्विज बेगि पठायौ, नेम धरम मरजादा जात ।  
सूरदास सिसुपाल पानि गहै, पावक रचौँ करौँ अपघात ॥४॥

सुनत हरि रुकमिनि कौ संदेस ।

चढ़ि रथ चले बिप्र कौँ संग लै, कियौ न गोह प्रवेश ॥  
बारंबार बिप्र कौँ पूछत, कुँवरि बचन सो सुनावत ।  
देनबंधु करुना निधान सुनि, नैन नीर भरि आवत ॥  
कह्यौ हलधर सौँ आवहु दल लै, मैँ पहुँचत हैँ धाइ ।  
सूरज प्रभु कुंडिनपुर आय, बिप्र सो जाइ सुनाइ ॥५॥

रुकमिनि देवी-मंदिर आई ।

धूप दीप पूजा-सामग्री, अली संग सब लयाई ॥  
रखवारी कौँ बहुत महाभट, दीन्हे रुकम पठाई ।  
ते सब सावधान भए चहुँ दिसि, पंछी तइँ न जाई ॥  
कुँवरि पूजि गौरी बिधती करी, वर देउ जादवराई ।  
मैँ पूजा कीन्ही इहिँ कारन, गौरी सुनि सुसकाई ॥  
पाइ प्रसाद अंबिका-मंदिर, रुकमिनि बाहर आई ।  
सुभट देखि सुंदरता मोहे, धरनि गिरे सुरकाई ॥  
इहिँ अंतर जादौपति आय, रुकमिनि रथ बैठाई ।  
सूरज-प्रभु पहुँचे दल अपनैँ, तब सुभटनि सुधि पाई ॥६॥

आवहु री मिखि मंगल गावहु ।

हरि रुक्मिणी लिए आवत है, यह आनंद जदुकुलहि सुनावहु ॥  
 बाँधहु बंदनवार मनोहर, कनक कलस भरि नीर धरावहु ।  
 दधि अच्युत फल फूल परम रुचि, अँगन चंदन चौक पुरावहु ॥  
 कदली जूथ अनूप किसल दल, सुरंग सुमन लै मंडल छावहु ।  
 हरद दूब केसर मग छिरकहु, भेरी मृदंग निसान बजावहु ॥  
 जरासंध सिमुपाल नृपति तै, जीते है उठि अरघ घडावहु ।  
 बल समेत तन कुसल सूर प्रभु, आय है आरती बनावहु ॥७॥

बलभद्र ब्रज यात्रा

स्थाम राम के गुन नित माऊँ । स्थाम राम ही सौँ चित लाऊँ ॥  
 एक बार हरि निज पुर छुए । हलधर जी वृंदावन नए ॥  
 रथ देखत लोगनि सुख पाए । जान्यौ स्थाम राम दोउ आए ॥  
 नंद जसोमति जत्र सुधि पाई । देह गेह की सुरति मुलाई ॥  
 आगे ह्वै लैबे कौँ धाए । हलधर दौरि घरन लपटाए ॥  
 बल कौँ हित करि गरै लगाए । दे असीस बोले या भाए ॥  
 सुम तौ भली करी बलराम । कहाँ रहे मन मोहन स्थाम ॥  
 देखौ कान्हर की निठुराई । कबहूँ पाती हू न पडाई ॥  
 आपु जाइ ह्वौ राजा भए । हमकौँ विछुरि बहुत दुख दए ॥  
 कहाँ कबहूँ हमरी सुधि करत । हम तौ उन बिनु बहु दुख भरत ॥  
 कहाँ करै ह्वौ कोउ न जात । उन बिनु पल पल जुग सम जात ॥  
 इहि अंतर आए सब ग्वार । भँटे सबनि जथा ब्यौहार ॥  
 नमस्कार काहूँ कौँ कियो । काहूँ कौँ अंकम भरि लियो ॥  
 पुनि गोपी जुरि मिलि सब आई । तिन हित साथ असीस सुनाई ॥  
 हरि सुधि करि सुधि बुधि बिसराई । तिनकौँ प्रेम कहाँ नहिँ जाई ॥  
 कोउ कहै हरि व्याही बहु नार । तिनकौँ बढ़यो बहुत परिवार ॥  
 उनकौँ यह हम देति असीस । सुख सौँ जीवै कोटि बरीस ॥  
 कोउ कहै हरि नाही हम चीन्हौ । बिनु चीन्है उनकौँ मन दीन्हौ ॥  
 निसि दिन रोवत हमै बिहाइ । कहाँ करै अब कश उपाइ ॥  
 कोउ कहै इहाँ चरावत गाइ । राजा भए द्वारिका जाइ ॥  
 काहे कौँ वै आवै इहाँ । भोग बिलास करत नित उहाँ ॥  
 कोऊ कहै हरि रिपु छै किए । अरु मित्रनि कौ बहु सुख दिए ॥

विरह हमारौ कहँ रहि गयौ । जिन हमकौँ अति हीँ दुख दयौ ॥  
 कोउ कहै जे हरि की रानी । कौन भौँति हरि कौँ पतियानी ॥  
 कोऊ चतुर नारि जो होइ । करै नहाँ पतिआरौ सोइ ॥  
 कोउ कहै हम तुम कत पतियाईँ । उनकैँ हित कुल लाज गवाईँ ॥  
 हरि कछु ऐसौ टोना जानत । सबकौँ मन अपनैँ बस आनत ॥  
 कोउ कहै हरि हम सब बिसराईँ । कहा कहैँ कछु कछौँ न जाईँ ॥  
 हरिकौँ सुमिरि नयन जल टारैँ । नैँकु नहीँ मन धीरज धारैँ ॥  
 हरिकौँ सुमिरि नयन जल टारैँ । नैँकु नहीँ मन धीरज धारैँ ॥  
 यह सुनि हलधर धीरज धारि । कछौँ आइइँ हरि निरधारि ॥  
 जब बल यह संदेस सुनायौ । तब कछु इक मन धीरज आयौ ॥  
 बल तहँ बहुरि रहे द्वैँ मास । ब्रज वासिनि सौँ करत बिलास ॥  
 सब सौँ मिलि पुनि निजपुर आए । सूरदास हरि के गुन गाए ॥८॥

सुदामा चरित

कंत सिधारौ मधुसूदन पै सुनियत हैँ वे मीत तुम्हारे ।  
 बाल-सखा अरु विपति विभंजन, संकट हरन मुकुंद मुरारे ॥  
 और जु अतिसय प्रीति देखिये, निज तन मन की प्रीति बिसारे ।  
 सरवस रीक्ति देस भक्तनि कौँ, रंक भूपति काहूँ न बिचारे ॥  
 जद्यपि तुम संतोष भजत हौ, दरसन सुख तैँ होत जु न्यारे ।  
 सूरदास प्रभु मिलेँ सुदामा, सब सुख वैँ पुनि अटल न टारे ॥९॥

सुदामा सोचत पंथ चले ।

कैँसैँ करि मिलिहैँ मोहिँ श्रीपति, भाए तब सगुन भले ॥  
 पहुँच्यौ जाइ राजद्वारे पर, काहूँ नहिँ अटकायौ ।  
 इत उत चितैँ देख्यौ मंदिर भैँ, हरि कौँ दरसन पायौ ॥  
 मन मैँ अति आनंद कियौ हरि, बाल-मीत पहिचान ।  
 धाए मिलन नगन पग आतुर, सूरज-प्रभु भगवान ॥१०॥  
 तूरिहैँ तैँ देख्यौ बलवीर ।

अपने बालसखा जु सुदामा, मलिन बसन अरु छीन सरीर ॥  
 पौढ़े हे परजंक परम रुचि, रुकमिनि बैँर दुलावति तीर ।  
 उक्ति अकुलाइ अगमने लीन्हैँ, मिलत नैन भरि आए नीर ॥  
 निज आसन बैँडारि स्याम-धन, पूछी कुलल कछौँ मनि धीर ।  
 क्याए हौ सु बेहु किन हमकौँ कहा दुरावन लागे वीर ॥

दरस परस हम भए सभागे, रही न मन मैँ एकहु पीर ।  
सूर सुमति तंडुल चाबत ही, कर पकरथौ कमला भई धीर । ११॥

ऐसी प्रीति की बलि जाउँ ।

सिंहासन तजि चले मिलन कौँ, सुनत सुदामा नाउँ ॥  
कर जोरे हरि बिप्र जानि कै, हित करि चरन पखारे ।  
अंक माल दै मिले सुदामा, अर्धासन बैठारे ॥  
अर्धगी पूछति मोहन सौँ, कैसे हिनू तुन्हारे ।  
तन अति छीन मलीन देखियत, पाउँ कहुँ तैँ धारे ॥  
संदीपन कैँ हमऽरु सुदामा, पढे एक चटसार ।  
सूर स्याम की कौन चलावै, भक्तनि कृपा अपार ॥१२॥

गुरु-गृह हम जब बन कौँ जात ।

जोरत हमरे बदलैँ लकरी, सहि सब दुख निज गात ॥  
एक दिवस बरषा भई बन मैँ, रहि गए ताहीं ठौर ।  
इनकी कृपा भयो नहिँ मोहिँ स्वम, गुरु आए भएँ भोर ॥  
सो दिन मोहिँ बिसरत न सुदामा, जो कीन्हौ उपकार ।  
प्रति उपकार कहा करौँ सूरज, भाषत आप सुरार ॥१३॥

सुदामा गृह कौँ गमन कियौ ।

प्रगट बिप्र कौँ कछु न जनायौ, मन मैँ बहुत दियौ ॥  
वेई चीर कुचील वहै बिधि, मोकौँ कहा भयौ ।  
धरिहौँ कहा जायं तिय आगौँ, भरि-भरि खेत हियौ ॥  
सो संतोष मानि मन हीँ मन, आदर बहुत लियौ ।  
सूरदास कीन्हे करनी बिनु, को पतियाइ बियौ ॥१४॥

सुदामा मंदिर देखि डर्यौ ।

इहाँ हुती मेरी तनक मडैया, को नृप आनि छर्यौ ॥  
सीस धुनै दोऊ कर मीँ डै, अंतर सोच पर्यौ ।  
ठाढ़ी तिया जु मारग जाँवै ऊँचैँ, चरन धर्यौ ॥  
तोहिँ आदर्यौ त्रिभुवन कौ नाथक, अब क्यैँ जात फिर्यौ ।  
सूरदास प्रभु की यह लीला, दारिद दुःख हर्यौ ॥१५॥

हौँ फिरि बहुरि द्वारिका आयौ ।

समुक्ति न परी मोहिँ मारग की. कोउ बूमै न बतायौ ॥



कहिहैं स्याम सत्त इन छौंछ्यौ, उतौ राँक ललचायौ ।  
 तृन की छाहँ मिठी निधि माँगत कौन दुखनि सौँ छायो ॥  
 सागर नहीं समीप कुप्रति कैँ, विधि कह अंत भ्रमायौ ।  
 चितवत चित्त विचारत मेरौ, मन सपनैँ डर छायौ ॥  
 सुरतरु, दासी, दास, अरुख, राज, विभौ विनोद बनायौ ।  
 सूरज-प्रभु नंद-सुवन मित्र हँ, भकनि लाइ लड़ायौ ॥१६॥

कहा भयौ मेरौ गृह माटी कौ ।

हैं तौ रायौ गुपाखहिँ भँटन, और खरख तंडुल गौँडी कौ ।  
 बिनु प्रीवा कल सुभग न आन्यौ, हुतौ कमंडल दढ़ काठी कौ ।  
 घुनौ बाँस जुत बुनौ खटोला, काहु कौ पलँग कनक राटी कौ ॥  
 नूतन छीरोदक जुवती पै, भूपन हुतौ न लोह माटी कौ ।  
 सूरदास प्रभु कहा निहोरौ, मानत रंक त्रास टाटी कौ ॥१७॥

भूलौ द्विज देखत अपनौ घर ।

औरहिँ भाँति रची रचना रुचि, देखतही उपज्यौ हिरदै डर ॥  
 कै वह ठौर छुड़ाइ लियौ किहुँ, कोऊ आइ बस्यौ समरथ नर ।  
 कै हैं भूलि अनसहीँ आयौ, यह कैलास जहाँ सुनियल हर ॥  
 बुध-जन कहत दुषल चातक विधि, खो हम आहु लही या पटतर ।  
 ज्यौँ नलिनी बन छौँडि बसै जल, दाहै हैम जहाँ पानी-सर ॥  
 पाइँ तैँ तिय उतरि क्यौ पनि, चलिष्ट द्वार गह्यौ कर सौँ कर ।  
 सूरदास यह सब हित हरि कौ, द्वारैँ आइ भयो छु कलपतर ॥१८॥

कैसेँ मिले पिय स्याम सँवाती ।

कहियै कंत कौन विधि परसे, बसन कुचील छीन अति गाती ॥  
 उठिकैँ दौरि अंक भरि लीन्हौ, मिलि पृच्छी इत-उत कुसखाती ।  
 पटतैँ छोरि लिए कर तंडुल, हरि समीप रुकमिनी जहाँ ती ॥  
 देखि सकल तिय स्याम-सुँदर गुन, पद वैँ ओट सबैँ मुसक्याती ।  
 सूरदास प्रभु नवनिधि दीन्हौ, देते और जो तिय न रिखाती ॥१९॥

हरि बिनु कौन दरिद्र हरे ।

कहत सुदामा सुनि सुंदरि, हरि मिलन न मन बिसरै ॥  
 और मित्र ऐसी राति देखत, को पहिचान करै ।  
 विपत्ति परैँ कुसखात न बूँके कास नहीं बिचरै ॥

उठि भेटेँ हरि तंडुल लीन्हे, मोहिँ न बचन फुरै ।

सूरदास लखि दई कृपा करि, टारी निधि न टरै ॥२०॥

व्रजनारी पथिक संवाद

तब तैँ बहुरि न कोऊ आयौ ।

वहै जु एक बेर ऊधौ सौँ, कछु संदेसौ पायौ ॥

छिन छिन सुरति करत जहुपति की, परत न मन समुकायौ ।

गोकुलनाथ हमारैँ हित लागि, लिखि हू क्यौँ न पठायौ ॥

यहै विचार करौँ धौँ सजनी, इतौ गहर क्यौँ लायौ ।

सूर स्वाम अब बेगि न मिलहू, मेवनि अंबर छायौ ॥२१॥

बहुरौ हो ब्रज बात न चाली ।

वहै सु एक बेर ऊधौ कर, कमल नयन पाली दे घाली ॥

पथिक तिहारे पा लागति हैं, मथुरा जाहु जहाँ बनमाली ।

कहियौ प्रगट पुकारि द्वार है, कालिंदी फिरि आयौ काली ॥

तब वह कृपा हुती नंदनंदन रुचि रुचि रसिक प्रीति प्रतिपाली ।

माँगत कुसुम देखि ऊँचे हुम, लेत उर्धंग गोद करि आली ॥

जब वह सुरति होति उर अंतर, लागति काम जान की भाली ।

सूरदास प्रभु प्रीति पुरातन सुभिरत, दुसह सूख उर साली ॥२२॥

तुम्हरे देस काराव मसि सूटी ।

भूख प्यास अह नीँव गई सब, विरह लखौ तन लूटी ॥

दादुर मोर पपीहा बोले, अधधि भई सब झूटी ।

पाछैँ आइ तुम कहा करौंगे, जब तन जैहै लूटी ॥

राधा कहति संदेस स्वाम सौँ, भई प्रीति की हूटि ।

सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिजु, सखी करति हैं कूटि ॥२३॥

पथिक कह्यौ ब्रज जाइ, सुने हरि जात सिधु तड ।

सुनि सब अंग भए स्थित, गयौ नहिँ बज्र हियौ फट ॥

नर नारी धर-धरनि सबै यह करति विचारा ।

मिलिहैँ कैसी भौँति हमैँ अब नंद कुमारा ॥

निकट बसत हुती आस कियौ अब दूरि पयाना ।

बिना कृपा भगवान उपाइ न सूरज आना ॥२४॥

नैना भए अन्याय हमारे ।

मदनगुपाल उहाँ तैँ सजनी, सुनिमत्त कुरि सिधारे ॥

वै समुद्र हम मीन बापुरी, कैसेँ जीवैँ न्यारे ।  
हम चातक वै जलद स्याम-वन, पियतिँ सुधा रस प्यारे ॥  
मथुरा बसत आस दरसन की, जोइ नैन मग हारे ।  
सूरदास हमकोँ उलटी विधि मृतकहुँ तैँ पुनि मारे ॥२५॥

उती दूर तैँ को आवै री ।

जासौँ कहि संदेस पठाऊँ सो कहि कहन कहा पावै री ॥  
सिंधु कूल इक देस बसत है, देख्यौ सुन्यौ न मन धावै री ।  
तहँ नव-नगर जु रच्यौ नंद-सुत, द्वारावति पुरी कहावै री ॥  
कंचन के बहु भवन मनोहर, रंक तहाँ नहिँ अन छावै री ।  
हौँ के वासी लोगति कोँ क्यों, अज कोँ बसिबौ मन भावै री ॥  
बहु विधि करतिँ बिलाप विरहिनी, बहुत उपायनि चित लावैँ री ।  
कहा करौँ कहँ जाऊँ सूर प्रभु, को हरि पिय पै पहुँचावै री ॥२६॥

हौँ कैसेँ के दरसन पाऊँ ।

सुनहु पथिक उहिँ देस द्वारिका जौ तुम्हरेँ-संग जाऊँ ॥  
बाहर भीर बहुत भूपनि की, धूमत बदन-दुराऊँ ।  
भीतर भीर भोग भामिनि की, तिहि ठाँ काहि पठाऊँ ॥  
बुधि बल जुक्ति जतन करि उहिँ पुर हरि पिय पै पहुँचाऊँ ।  
अथ बन बसि निसि कुंज रसिक बिनु, कौनैँ-दसा सुनाऊँ ॥  
श्रम कै सूर जाऊँ प्रभु पासहिँ, मन मैँ भलैँ मनाऊँ ।  
नव-किसोर सुख मुरखि बिना इन नैननि कहा दिखाऊँ ॥२७॥

तातैँ अति-मरियत अपसोसनि ।

मथुरा हू तैँ-गए सखी री, अब-हरि कारे-कोसनि ॥  
—यह अचरज सु बड़ौँ मेरेँ जिय, यह छाड़नि वह पोषनि ।  
—निपट निकाम जानि हम छाँड़ी, ज्यौ कमान विन गोसनि ॥  
—इक हरि के दरसन विनु मरियत, अरु कुबिजा के ठोसनि ।  
सूर सुजरनि कहा उपजी जो, दूरि होति करि ओसनि ॥२८॥

माई री कैसेँ बनै हरि को अज आवन ।

कहियत है मधुवन तैँ सजनी-कियौ स्याम कहुँ अनत गवन ॥  
अगम सु पथ दूरि दच्छिन विसि तहँ सुनियत सखि सिंधु खवन

निकट बभ्रत मतिहीन भईँ हम, मिजिहुँ न आईँ सु त्यागि भवन ।  
सूरदास तरसत मन निसि-दिन, जटुपति लौँ लै जाइ कवन ॥  
सुनियत कहुँ द्वारिका बसाई ।

दखिछन दिसा तीर सागर कैँ, कंचन कोट गोमती खाई ॥  
पंथ न चलै सँदेस न आवै, इती दूर नर कोउ न जाई ।  
सत जोजन मथुरा तैँ कहियत, थह सुधि एक पथिक पै पाई ॥  
सब ब्रज दुखी नंद जसुदा हू, इक टक स्थाम राम लव लाई ।  
सूरदास प्रभु के दरसन बिनु, भई बिदित ब्रज काम दुहाई ॥३  
बीर बटाक पाती लीजौ ।

जब तुम जाहु द्वारिका नगरी, हमरे रसाल गुपालहिँ दीजौ ॥  
रंगभूमि रमनीक मथुरी, रजधानी ब्रज की सुधि कीजौ ।  
छार समुद्र छाँडि कित आवत, निर्मल जल जमुना कौ पीजौ ॥  
था गोकुल की सकल खालिनी, देतिँ असीस बहुत जुग जीजौ ।  
सूरदास प्रभु हमरे कोतैँ, नंद नंदन के पाईँ परीजौ ॥

रुकमिनी कृष्ण संवाद

रुकमिनि ब्रूमति हैँ गोपालहिँ ।

कहाँ बात अपने गोकुल की किलिक प्रीति ब्रजबालहिँ ॥  
तब तुम गाइ चरावन जाते, उर धरते बनमालहिँ ।  
कहा देखि रीके राधा सौँ, सुंदर नैन विसालहिँ ॥  
इतनी सुनत नैन भरि आए, प्रेम बिषस नँदलालहिँ ।  
सूरदास प्रभु रहे मौन हूँ, घोष बात जनि चालहिँ ॥३२॥

रुकमिनी मोहिँ निनेष न बिसरत, वे ब्रजबासी लोग ।  
हम उनसौँ कछु भली न कीन्ही, निसि-दिन मरत बियोग ॥  
जदपि कनक मनि रची द्वारिका, विषय सकल संभोग ।  
तथपि मन जु हरत वंसी-बध, ललिता कैँ संजोग ॥  
मैँ ऊधौ पठ्यौ गोपिनि पै, दैन सँदेसौँ जोग ।  
सूरदास देखत उनकी गति, किहिँ उपदेसैँ सोग ॥३३॥

रुकमिनि मोहिँ ब्रज बिसरत नाहीं ।

वह श्रीड़ा वह केलि जमुन तट, सघन कदम की छाहीं ॥  
गोप बहुनि की मुजा कंध धरि, बिहरत कुंजनि माहीं ॥  
और बिनोद कहुँ जगि बरनाँ, बनत बरनि न आहीं ॥

जद्यपि सुख निधान द्वारावति, गोकुल के सम नाही ।  
सूरदास धन स्याम मनोहर, सुमिरि-सुमिरि पछिताही ॥३४॥  
रुकमिनि चली जन्म भूमि जाहि ।

जद्यपि तुम्हरी विभव द्वारिका, मथुरा केँ सम नाहिँ ॥  
जमुना केँ तट गाइ चरावत, अमृत जल अँचवाहिँ ।  
कुंज केलि अरु भुजा कंध धरि, सीतल द्रुम की छौँहिँ ॥  
सरस सुगंध मंद मलयानिल, बिहरत कुंजन माहिँ ।  
जो श्रीड़ा श्री वृंदावन मैँ, तिहूँ लोक मैँ नाहिँ ॥  
सुरभी ग्वाल नंद अरु जसुमति, मम चित तैँ नट राहिँ ।  
सूरदास प्रभु चतुर सिरोमनि, तिनकी सेव कराहिँ ॥३५॥  
पे कृष्ण-व्रजवासी भेंट

व्रज वासिनि कौँ हेत, हृदय मैँ राखि मुरारी ।  
सब जादव सौँ कहीँ, बैठि कैँ सभा मन्तारी ।  
बदौ परब रवि-अहन, कहा कहाँ तासु बड़ाई ।  
चली सकल कुरुखेत, तहाँ मिलि न्हैयै जाई ॥  
तात, मात निज नारि लिए, हरि जू सब संगी ।  
घले नगर केँ लोग, साजि रथ तरल तुरंगा ॥  
कुरुच्छेत्र मैँ आइ, दियोँ इक दूत पठाई ।  
नंद जसोमति गोपि ग्वाल सब सूर बुन्दाई ॥३६॥  
हौँ इहाँ तेरेहिँ कारन आयौ ।

तेरी सौँ सुनि जननि जसोदा, मोहिँ गोपाल पढायौ ॥  
कहा भयोँ जो लोग कहत हैं, देवकि माता जायो ।  
खान-पान परिधान सबै सुख, तैँ हीँ लाइ खड़ायो ॥  
इतौ हमारौँ राज द्वारिका, मों जी कछू न भायो ।  
जब-जब सुरति होति उहिँ हित की, बिछुरि बच्छ ज्यों धायौ ॥  
अब हरि कुरुच्छेत्र मैँ आए, सो मैँ तुम्हैँ सुनायो ।  
सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु, हित करि उहाँ बुलायो ॥३७॥  
यस गहगाहात सुनि सुंदरि, बानी विमल पूबँ दिसि बोली ।  
राजु मिलावा होइ स्याम कौँ, तू सुनि सखी राधिका भोली ॥  
भुज नैन अधर फरकत हैं, बिनहिँ बात अंचल ध्वज डोली ।  
च निवारि करौँ मन आनंद, मानौँ भाग दसा विधि खोली ॥

सुनत बात सजनी के मुख की, पुलकित प्रेम तरकि गई जो।  
सूरदास अभिलाष नंदसुत, हरषी सुभग नारि अनभो

राधा नैन नीर भरि आए।

कब धौँ मिलैँ स्याम सुंदर सखि, जदपि निकट हैँ आए।  
कश करौँ किहिँ भौँति जाहुँ अब, पंख नहींँ तन पाए।  
सूर स्याम सुंदर घन दरसैँ, तन के ताप नसाए।

अब हरि आइहैँ जनि सोचैँ।

सुनु बिधुमुखी बारि नैननि तैँ, अब नू काहैँ मोचे ॥  
लैँ लेखनि भसि लिखि अपन, संदेशहिँ छौँदि सँकोचे।  
सूर सु विरह जनाउ करत कत, प्रवज मइन रिपु पोचे ॥

पथिक, कहियौ हरि सौँ यह बात।

भक्त बड़ल हैँ विरद तुम्हारौ, हम सब किभू सनाथ।  
पान हमारे संग तिहारैँ, हमहूँ हैँ अब आवत।  
सूर स्याम सौँ कहत सँदेसौ, नैनन नीर बहावत।

नंद जसोदा सब ब्रजबासी।

अपने-अपने सकट साजिकै, मिलन चले अविनासी ॥  
कोउ गावत कोउ बेनु बजावत, कोउ उतावल धावत।  
हरि दरसन की आसा कारन, बिविध मुदित सब आवत ॥  
दरसन कियौ आइ हरि जू कौ, कहत स्वप्न कै सौँची।  
प्रेम मगन कछु सुधि न रही अँगा, रहे स्याम रँग रौँची ॥  
जासौँ जैसी भौँति चाहियैँ, ताहि मिले त्यौँ धाइ।  
देस-देस के नृपति देखि यह, प्रीति रहे अरगाइ ॥  
उमँग्यौ प्रेम समुद्र दुहूँ दिसि, परिभिति कही न जाइ।  
सूरदास यह सुख सो जानै, जाकैँ हृदय समाइ।

तेरी जीवन मूरि मिलहि किन माई।

महाराज जदुनाथ कहावत, सबहिँ हुते सिसु कुँवर कन्हारै  
पानि परे भुज धरे कमल मुख, पेखत पूरब कथा चला  
परम उदार पानि अवलोकत, हीन जानि कछु कहत न जाई  
फिरि-फिरि अब सनमुख ही चित्तवति, प्रीति सकुच जानी जदुरा  
अब हँसि भेँटहु कदि मोहिँ निज-जन, बाल सिद्धारौ नंद कुहारै

## द्वारिका चरित

रोम पुलक गद गद तन तीक्ष्ण, जलधारा नैननि बरषाई ॥  
मिले सु तात, मात, बांधव सब, कुसल-कुसल करि प्रमन चलाई ।  
आसन देइ बहुत करी बिनसी, सुन धोखे तब बुद्धि हिराई ॥  
सूरदास प्रभु कृपा करी अब, चितहिँ धरे पुनि करी बड़ाई ॥४३॥

माधव या लागि है जग जीजत ।

जातैँ हरि सौँ प्रेम पुरातन, बहुरि नयौ करि लीजत ॥  
कह ह्यौँ तुम जहुनाथ सिंधु तट, कहँ हम गोकुल बासी ।  
बह वियोग, यह मिलन कह्यौँ अब, काल चाल औरासी ॥  
कहँ रवि राहु कह्यौँ यह अवसर, विधि संजोग बनायौ ।  
उहिँ उपकार आजु इन नैननि, हरि दरसन सचुपायौ ॥  
तब अरु अब यह कठिन परम अति, निमिपहुँ पीर न जानी ।  
सूरदास प्रभु जानि आपने, सबहिनि सौँ रुचि मानी ॥४४॥

ब्रजबासिनि सौ क्यौ सबनि तैँ ब्रज-हित मरैँ  
तुमसौँ नाहीं दूरि रहत हौँ निपटहिँ नरैँ ॥  
भजै मोहिँ जो कोइ, भजौँ मैँ तेहिँ ता भाई ।  
सुकुल माहिँ उद्यौँ रूप, आपनैँ सम दरसाई ॥  
यह कहि कै समझे सकत, नैन रहे जल छाड़ ।  
सूर स्वाम कौ प्रेम कछु, मो पै क्यौ न जाइ ॥४५॥

सबहिनि तैँ हित है जन मरौ

जनम जनम सुनि सुबल सुदामा, निबहौँ यह प्रन बेरौ ॥  
ब्रह्मादिक इंद्रादिक लेऊ, जालत बल सब करौ ।  
एकहि सौँस उसास बास उडि, चलते तजि निज खेरौ ॥  
कहा भयौ जो देस द्वारिका, कीन्हौ दूर बसेरौ ।  
आपुन ही या ब्रज के कारन, करिहौँ फिरि-फिरि फेरौ ।  
इहाँ उहाँ हम फिरत साथु हित, करत अमाधु अहेरौ ।  
सूर हृदय तैँ दरत न गोकुल, अंग छुअत हौँ तरौ ॥४६॥

हम तौ इतनैँ ही सचु पायौ ।

सुंदर स्वाम कमल दल-लोचन, बहुरौ दरस दिखायौ ॥  
कहा भयौ जो लोग कहत हैँ, कान्ह द्वारिका छायाँ ।  
सुनिकै बिरह दसा गोकुल की, अति आतुर ह्यै धायौ ॥

रजक धेनु राज कंस मारि कै, कीन्हौ जन कौ भायौ ॥  
 महाराज ह्यै मानु पिता मिलि, तऊ न ब्रज बिसरायौ ।  
 गोपि गोपऽरु नंद चले मिलि, प्रेम समुद्र बढ़ायौ ॥  
 अपने बाल गुपाल निरखि मुख, नैननि नीर बहायौ ॥  
 जबापि हम सकुचे जिय अपने, हरि हित अधिक जनायौ ।  
 वैसेइ सूर बहुरि नंदनंदन, घर-घर माखन खायौ ॥४७॥

राधा कृष्ण मिलन

हरि सौँ ब्रूकति रुकमिनि इनमैँ को बृषभानु किसोरी ।  
 बारक हमैँ दिखारवहु अपने बालापन की जोरी ॥  
 जाकौ हेत निरंतर लीन्हे, डोलत ब्रज की खोरी ।  
 अति आनुर ह्यै गाइ दुहावन, जाते पर-घर चोरी ॥  
 रचते सेज स्वकर सुमननि की, नव-पल्लव पुट तोरी ।  
 बिन देखैँ ताके मन तरसै, छिन बीतै जुग कोरी ॥  
 सूर सोच सुख करि भरि लोचन, अंतर प्रीति न थोरी ।  
 सिथिल गात मुख बचन फुरत नाहीं, ह्यै जु गई मति भोरी । ४८॥

ब्रूकति है रुकमिनि पिय इनमैँ को बृषभानु किसोरी ।  
 नैँकु हमैँ दिखारवहु अपनी बालापन की जोरी ॥  
 परम चतुर जिन कीन्हे मोहन, अल्प बैस ही थोरी ।  
 वारे तैँ जिह्ँ यहै पढ़ायौ, बुधि बल कल विधि चोरी ॥  
 जाके गुन गनि अंथत भाला, कबहुँ न उर तैँ छोरी ।  
 मनसा सुमिरन, रूप ध्यान उर, दृष्टि न इत उर मोरी ॥  
 वह लखि जुवति वृंद सैँ डाढ़ी, नील बज्रन तन सोरी ।  
 सूरदास मोरौ मन वाकी, चितवनि बंक हरयौ री ॥४९॥

रुकमिनि राधा ऐसैँ भेटौ ।

जैसैँ बहुत दिननि की बिछुरी, एक बाप की बेटौ ॥  
 एक सुभाव एक वय दोऊ, दोऊ हरि कौँ प्यारी ।  
 एक प्राण मन एक दुहुनि कौ, तन करि दीसति न्यारी ॥  
 निज मंदिर लै गई रुकमिनी, पहुनाई बिधि ठानी ।  
 सूरदास प्रभु तहँ परा धारे, जहँ दोऊ ठकुरानी ॥५०॥

हरि जू इतें दिन कहाँ लगाए ।

तबहिँ अवधि मैँ कहत न समुझा, गनत अचानक आए ॥



भली करी लु बहुरि इन नैननि, सुंदर दरस दिखाए ।  
जानी कृपा राज काजहु हम, निमिष नहीं बिसराए ॥  
बिरहिनि बिकल बिलोकि सूर प्रभु, धाइ हृद करि खाए ।  
कछु इक सारथि सौं कहि पड्यौ, रथ के तुरंग छुड़ाए ॥२१॥

हरि जू तै सुख बहुरि कहौं ।

जदापि नैन निरखत वह मूरति, फिरि मन जात तहाँ ?  
मुख सुरती सिर मौर पखौवा, गर घुँघचिनि कौ द्वार ।  
आगैं धेनु रेनु तन मंडित, तिरछी चितवनि प्यार ॥  
राति दिवस सब सखा लिए संग, हँसि मिलि खेलत खात ।  
सूरदास प्रभु इत उत चितवत, कहि न सकत कछु बात ॥२२॥

राधा माधव भेट भई ।

राधा माधव, माधव राधा, क्रीट भृंग गति ह्वै लु गई ॥  
माधव राधा के रंग रौंचे, राधा माधव रंग रई ॥  
माधव राधा प्रीति निरंतर, रसना करि सो कहि न गई ॥  
बिहँसि कही हम तुम नहिं अंतर, यह कहिके उन ब्रज पठई ॥  
सूरदास प्रभु राधा माधव, ब्रज-विहार नित नई नई ॥२३॥

*(Handwritten notes in Devanagari script, including a signature 'श्री')*

## परिशिष्ट

### (क) रामचरित

रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर ।

देस-देस तैं टीकौ आयौ, रतन कनक-मनि-हीर ।  
घर-घर मंगल होत बभार्त, अति पुरबासिनि भीर ।  
आनंद-मगन भए सब डोलत, कछु न सोध सरীর ।  
माता-वंदी-सूत लुटाए, गो-गायन्द-हय-चीर ।  
देत असीस सूर, चिरजीवौ रामचन्द्र रनधीर ॥१॥

करतल-सोभित बान धनुहियाँ ।

खेलत फिरत कनकमय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ ।  
दसरथ-कौसिल्य के आगँ, लसत सुमन की छहियाँ ।  
मानौ चारि हंस सरवर तँ बैठे आइ सदेहियाँ ।  
रघुकुल-कुमुद-चंद्र चितामनि, प्रगटे भूतल महियाँ ।  
आए ओप देन रघुकुल कौँ, आनंद-निधि सब कहियाँ ।  
यह सुख तीनि लोक मै नाहीं, जो पाए प्रभु पहियाँ ।  
सूरदास हरि बोलि भक्त कौँ, निरबाहत गहि बहियाँ ॥२॥

कर कंपै, कंकन नहिँ छूटे ।

राम सिया-कर-परस मगन भए, कौमुक निरखि सखी सुख लूटे ।  
गावत नारि गारि सब दे दे, तात-आत की कौन चलावे ।  
तब कर-डोरि छुटे रघुपति जू, जब कौसिल्या माता आवे ।  
पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि घुंडी जो कनक की ।  
खेलत जूप सकल ज्वलतिनि मै, हारे रघुपति, जिती जनक की ।  
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद-अभिषेक करायौ ।  
सूर अमित आनंद जनकपुर, सोइ सुकदेव पुराननि गायौ ॥३॥

परसुराम तेहिँ औसर आए ।

कठिन पिनाक कहौ किन तोरयौ, क्रोधित वचन सुनाए ।  
बिप्र जानि रघुबीर धीर दोउ, हाथ जोरि, सिर नायौ ।  
बहुत दिननि कौ हुतौ-पुरातन, हाथ छुअत उठि आयौ ।

## परिशिष्ट

तुम तौ द्विज, कुल-पूज्य हमारे, हम-तुम कौन लराई ?  
 क्रोधवंत कछु सुन्यौ नहीं, लियौ सायक धनुष चढ़ाई ।  
 तबहूँ रघुपति क्रोध न कीन्हौ, धनुष न बान सँभार्यौ ।  
 सूरदास प्रभु रूप समुक्ति, बन परसुराम पग धार्यौ ॥४॥

काहि धैँ सखी बटाऊ को हैँ ?

अद्भुत बधू लिये संग डोलत देखत त्रिभुवन मोहैँ ।  
 परम सुसील सुलच्छन जोरी, बिधि की रची न होइ ।  
 काकी तिनकैँ उपमा दीजे, देह धरे धैँ कोइ ।  
 इनमैँ को पति आहिँ तिहारे, पुरजनि पूछैँ धाइ ।  
 राजिवनैन मेन की मूरति, सैननि दियौ बताइ ।  
 गईँ सकल मिलि संग दूरि लैँ, मन न फिरत पुर-बास ।  
 सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेतिँ उसास ॥५॥

राम धनुष अरु सायक साँधे ।

सिय-हित मृग पाछैँ उठि धाएँ, बलकला बसन, फेंट इढ़ बाँधे ।  
 नव-धन, नील-सरोज बरन बपु, विपुल बाहु, केहरि-फल काँधे ।  
 इँडु बदन, राजीव नैन बर, सीस जटा सिव-सम सिर बाँधे ।  
 पालत, सृजत, सँहारत, सैँ तत, अंड अनेक अवधि पल आधे ।  
 सूर भजन-महिमा दिखरावत, इमि अति सुगम चरन आराधे ॥६॥

सुनौ अनुज, इहिँ बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी ।  
 कछु इक अंगनि की-सहिदानी, मेरी दृष्टि परी ।  
 कटि केहरि, कोकिल कल बानी, ससि मुख-प्रभा धरी ।  
 मृग मूसी नैननि की सोभा, जाति न गुप्त करी ।  
 चंपक-बरन, चरन-कर कमलनि, दाड़िम दसन लरी ।  
 गति भराल अरु बिंब अघर-छवि, आहिँ अनूप कवरी ।  
 अति करुना रघुनाथ गुसाईँ, जुग ज्यैँ जाति धरी ।  
 सूरदास प्रभु प्रिया प्रेम-बस, निज महिमा बिसरी ॥७॥

बिछुरी मनौ संग तैँ हिरनी ।

चित्तवत रहत चकित चारैँ दिसि उपजी बिरह तन जरनी ।  
 तरुवर मूख अकेली ठाठी, दुखित राम की घरनी

कैति उसास नयन जल भरि-भरि, धुकि सो परै धरि धरनी ।  
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम की सरनी ॥१॥

सो दिन त्रिजटी, कहु कब ऐहै ?

जा दिन चरनकमल रघुपति के हरषि जानकी हृदय लगीहै ।  
कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा, माइ-माइ कहि मोहिँ सुनैहै ।  
कबहुँक कृपारंत कौशिलशा, बधू बधू कहि मोहिँ बुलैहै ।  
जा दिन कंचनपुर प्रभु ऐहै विमल ध्वजा रथ पर फहरैहै ।  
ता दिन जनम सफल करि मानौ, मेरी हृदय-कालिमा जैहै ।  
जा दिन राम रावनहिँ मारिँ, ईसहिँ लै दससीस चढ़ैहै ।  
ता दिन सूर राम पै सीता सरबस वारि बधाई दैहै ॥१॥

जननी, हौँ अलुचर रघुपति कौ ।

मति भाना करि कोप सरापै, नहिँ दानव ठग मति कौ ।  
आज्ञा होई, देउँ कर सुँदरी, कहौँ सँदेसौ पति कौ ।  
मति हिय बिजख करौ सिध, रघुबर हतिहै कुल दैयत कौ ।  
कहौ तौ लंक उखारि डारि देउँ, जहाँ पिता संपति कौ ।  
कहौ तौ मारि-सँहारि निसाचर, रावन करौँ अराति कौ ।  
सागर-तीर भीर बनचर की, देखि कटक रघुपति कौ ।  
अबै मिजाऊँ तुम्हें सूर प्रभु, राम-रोष डर अति कौ ॥१०॥

सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?

जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरथौ निमिष महीँ ।  
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीँ ।  
जिन रघुनाथ हाथ खर-दूषन-प्रान हरे सरहीँ ।  
कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गहीँ ?  
कै रघुनाथ दुखित कानन, कै नृप भए रघुकुलहीँ ।  
कै रघुनाथ अतुल बल राक्षस दसकंधर डरहीँ ?  
छाँबी नारि बिचारि पवन-सुत लंक बान बसहीँ ।  
कै हौँ कुटिल, कुचील, कुखब्बनि, तजी कंत तबहीँ !  
सूरदास-स्वामी सौँ कहियौ अब बिरमाहिँ नहीं ॥११॥

मैं परदेसिन नारि अकेली ।

बिनु रघुनाथ और नहिँ कोऊ, मातृ-पिता न सहेली ।

## परिशिष्ट

रावन भेष धरयो तपसी कौ, कत मैँ भिच्छा मेली ।  
 अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी, राम-रेख पग पेली ।  
 बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसेँ देव द्रुम बेली ।  
 सूरदास प्रभु बेनि मिलावौ प्रान जात हैँ खेली ॥१२॥

तब हैँ नगर अजोभ्या जैहैँ ।

एक बात सुनि निश्चय मेरी, राज्य विभीषन दैहैँ ।  
 कपि-दल जोरि और सब सेना, सागर सेतु बधैहैँ ।  
 काटि दसौँ सिर, बीम भुजा तब दूसरथ सुत जु कहैहैँ ।  
 छिन इक माहिँ लंक गढ़ तोरौँ, कंचन-कोट ठहैहैँ ।  
 सूरदास प्रभु कहत विभीषन, रिपु हति सीता लैहैँ ॥१३॥

दूसरँ कर वान न लैहैँ ।

सुनि सुग्रीव, प्रतिज्ञा मेरी, एकहिँ वान असुर सब दैहैँ ।  
 सिव-पूजा जिहिँ भौँति करी है, सोइ पद्धति परतच्छ दिखैहैँ ।  
 दैत्य प्रहारि पाप-फल-पेरित, सिर भाला सिव सील चढ़ैहैँ ।  
 मनौ तूल-वान परत अगिनि-मुख, जारि जइनि जअ पंथ पडैहैँ ।  
 करिहैँ नाहिँ बिलंब कछू अब, उठि रावन सम्मुख हूँ धैहैँ ।  
 इमि दमि दुष्ट देव द्विज मोचन, लंक विभीषन, तुमकौँ दैहैँ ।  
 लक्ष्मिन, सिया समेत सूर कपि, सब सुख सहित अयोध्या जैहैँ ॥

आजु अति कोपे हैँ रन राम

ब्रह्मादिक आरूढ़ विमाननि. देखत हैँ संघास ।  
 धन तन दिव्य कवच सजि करि अरु कर धारयो सारंग ।  
 सुधि करि सकल वान सूधे करि, कटि-तट कस्यौ निधंग ।  
 सुरपुर तँ आद्यौ रथ सजि कै, रघुपति भद्र सवार ।  
 काँपी भूमि कहा अब हूँ है, सुभिरत नाम सुरारि ।  
 छोभि सिंधु, सेष-सिर कंपित, पवन भयो गति पंग ।  
 इंद्र हँस्यौ, हर हिय विलखन्यौ, जानि बचन कौ भंग ।  
 धर-अंबर, दिसि-बिदिसि, बड़े अति लायक फिरन-समान ।  
 मानौ महा-प्रलय के कारन उदित उभय षट भाव ।  
 दूतत धुजा पताक छत्र-रथ, चाप-चक्र-सिरवान ।  
 अरुत सुभट जरत ज्यौँ दब द्रुम विनु साखा विनु पान ।

खानित छिछ उछरि आकासहिँ, राज-बाजिनि-सिर लागि  
 मानौ निकरि तरनि रंभ्रनि लैँ, उपजी है अति आगि  
 परि कबंध भहराइ रथनि तैँ, उठत मनौ भर जागि  
 फिरत सगाल सज्यौ सब काटत चलत सो सिर लैँ भागि  
 रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता स्वाम समीर  
 रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर  
 भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौँ ज्वाला पट चीर  
 सूरदास प्रभु आपु बाहुबल कियो निमिष मैँ कीर

बैठी जननि करति सगुनौती ।

लक्ष्मिन-राम मिलैँ अब ओकौँ, दोउ अमोलक मोती  
 इतनी कहत सुकाग उहाँ तैँ हरी डार उड़ि बैठ्यौ  
 अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ, सुख जु आनि उर पैठ्यौ  
 जब लौँ हैं जीवैँ जीवन भर, सदा नाम तब जपिहैं  
 दधि-श्रोदन दोना भरि दैहैं, अरु भाइनि मैँ थपिहैं  
 अब कैँ जौ परचौँ करि पावैँ अरु देखैँ भरि आँखि  
 सूरदास सोने कैँ पानी मढ़ौँ चोँच अरु पाँखि

हमारी जन्मभूमि यह गाउँ ।

सुनहु सखा सुप्रीव-बिभीषन, अवनि अजोध्या नाउँ  
 देखत बन-उपवन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउँ  
 अपनी प्रकृति लिए बोलत हैं, सुर पुर मैँ न रहाउँ  
 ह्यौँ के बासी अवलोकत हैं, आनंद उर न समाउँ !  
 सूरदास जौ बिधि न सँकोचै, तौ बैकुंठ न जाउँ ॥

बिनती किहिँ बिध प्रभुहिँ सुनाऊँ ?

महाराज रघुवीर धीर कौँ, समय न कबहूँ पाऊँ  
 जाम रहत जामिनि के बीतैँ, तिहिँ औसर उठि धाऊँ  
 सकुच होत सुकुमार नाँद मैँ, कैसैँ प्रभुहिँ जगाऊँ  
 दिनकर-किरनि-उदित, ब्रह्मादिक-रुद्रादिक इक ठाऊँ  
 अगनित भीरअमर-मुनि गन की, तिहिँ तैँ ठौर न पाऊँ  
 उठत सभा दिन मधि, सैनापति-भीर देखि, फिरि आऊँ  
 न्हास खात सुख करत साहिबी, कैसैँ करि अनखाऊँ ।

रजनी-मुख आबत गुन-भावत, नारद तुंडुर नाऊँ ।  
 तुमहीँ कहौ कृपा निधि रघुपति, किहि गिनतीमैँ आऊँ ?  
 एक उपाउ करौ कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ ।  
 पतित-उधारन नाम सूर प्रभु, यह हक्का पहुँचाऊँ ॥१८॥

---

— कृपा निधि रघुपति, किहि गिनतीमैँ आऊँ ?  
 एक उपाउ करौ कमलापति, कहौ तौ कहि समुझाऊँ ।  
 पतित-उधारन नाम सूर प्रभु, यह हक्का पहुँचाऊँ ॥१८॥

(ख) सूरसागर का द्वादशस्कंधी रूप

स्कंध	अवतार	पद-संख्या
१	१ व्यास (विनयपद् १-२२६)	३४३
२	(चौबीस अवतारों की सूची)	३८
३	२ सनकादि, ३ वाराह, ४ कपिलदेव	१३
४	५ दत्तात्रेय, ६ यज्ञपुरुष, ७ हरि (ध्रुववरदेन), ८ पृथु	१३
५	९ ऋषभदेव	४
६	१० अजामील उद्धार (अथवा मत्स्य)	८
७	नृसिंह, १२ नारद	८
८	१३ राजमोचन (अथवा हयग्रीव), १४ कूर्म, १५ धन्वन्तरि, १६ वामन, १७ मत्स्य	१७
९	१८ राम, १९ परशुराम,	१७४
१०	२० कृष्ण, पूर्वार्द्ध (ब्रज चरित) उत्तरार्द्ध (द्वारिका चरित)	४१६० १४६
११	२१ नारायण, २२ हंस	४
१२	२३ बुद्ध, २४ कल्कि	५
		४६३६

सूचना—इस मुख्य अवतार रेखांकित है।



## पदानुक्रमणी

अंक पद-संख्या के द्योतक हैं

संकेत-सूचना

वि०	विनय तथा भक्ति	गो०	गोकुल-लीला
वृ०	वृंदावन-लीला	रा०	राधा-कृष्ण
म०	मथुरा-नामन	उ०	उद्धव-संदेश
द्वा०	द्वारिका चरित	प०	परिशिष्ट

अँखियनि तन्न तैँ बैर धर्यौ ।	वृ०	१६६
अँखियाँ हरिदरसन की प्यासी ।	उ०	६२
अंतरजामी कुँवर कन्हई ।	उ०	१
अंतर तैँ हरि प्रगट भए ।	वृ०	६६
अखियाँ हरि कैँ हाथ विकानीँ ।	वृ०	१६८
अचंभौ इन लोगनि कौ आवै ।	वि०	४८
अति कोमल तनु धर्यौ कन्हई ।	वृ०	२६
अति मलीन बृषभानु-कुमारी ।	उ०	१५८
अद्भुत एक अनूपम बाग ।	रा०	१०६
अधर-रस मुरली लूटन लागी ।	वृ०	४३
अनत मुत गोरस कैँ कत जात ?	गो०	५७
अपने सगुन गोपालहिँ माई	उ०	११५
अपने स्वारथ के सब कोऊ ।	उ०	१३४
अपनौ गाउँ लेउ नँदरानी ।	गो०	५५
अब अति चक्रितवंत मन मेरौ ।	उ०	१६०
अब कैँ राखि लेहु गोपाल ।	वृ०	१०
अब कैँ राखि लेहु भगवान ।	वि०	१८
अब घर काहू कैँ जनि जाहु ।	गो०	६८
अब जुवतिनि सौँ प्रगटे स्थाम ।	रा०	१३४

अब तौ प्रगट भई जग जानी ।	वृ०	१३६
अब नँद गाइ लेहु सँभारि ।	म०	६
अब बरषा कौ आगम आयौ ।	म०	६२
अब मैँ जानी देह बुढानी ।	वि०	३७
अब मैँ तोसौँ कहाँ दुराऊँ	ग०	१०१
अब मैँ नाच्यौ बहुत गुपाल ।	वि०	२३
अब या तनहिँ राखि कह कीजै ।	म०	१०७
अब ये मूठहु बोलत लोग ।	गो०	४८
अब यह बरषौ बीति गई ।	म०	१०२
(अलि हौँ) कैसैँ कहाँ हरि के रूप रसहिँ ।	उ०	५६
अब वैँ बातैँ उलटि गईँ ।	म०	६६
अब हरि आइहैँ जनि सोचै ।	द्वा०	४०
अबहीँ तँ हम सबनि विसारी ।	वृ०	४४
अभिगत-गति कछु कहत न आवै ।	वि०	२
अँखिनि मैँ बसैँ, जिय मैँ बसैँ	रा०	६६
आए जोग सिखावन पाँडे ।	उ०	६८
आछौँ गात अकारथ मार्यौ ।	वि०	१६
आजु अति कोपे हँ रन राम ।	प०	१५
आजु कन्हैया बहुत बच्यौ री ।	वृ०	६
आजु कोउ नीकी बात सुनावै ।	उ०	२५
आजु घनश्याम की अनुहारि ।	म०	६७
आजु जसोदा जाइ कन्हैया महादुष्ट इक मार्यौ ।	वृ०	७
आजु नंद के द्वारैँ भीर ।	गो०	५
आजु मैँ गाइ चरावन जैहौँ ।	वृ०	३
आजु रैनि नहिँ नीद परी ।	म०	१३
आजु सखी अरुनोदय मेरे ।	रा०	६२
आजु सखी अरुनोदय मेरे नैननि कौँ धोख भयो ।	वृ०	१५७
आजु हरि अद्भुत राम उपायौ ।	वृ०	६७
आजु हौँ एक-एक टरिहौँ ।	वि०	२१
आनंदैँ आनंद बढ़्यौ अति ।	गो०	१

आपु गए हरेएँ सूनेँ घर ।	गो०	४६
आपुनपौ आपुन ही विसर्यौ ।	वि०	५३
आपुनपौ आपुन ही मैं पायौ ।	वि०	५४
आपुन भईँ सवै अब भोरी ।	हुं०	११४
आयौ घोष बड़ौ व्योपारी ।	उ०	१३२
आवत उरग नाये स्याम ।	हुं०	३४
आवत मोहन धेनु चराए ।	वृ०	१५०
आवहु मिलि मंगल गावहु ।	द्रा०	७
इक दिन नंद चलाई वात ।	म०	५३
इत उत देखत जनम गयौ ।	वि०	३४
इत तैँ राधा जाति जमुन-तट ।	रा०	६६
इतनी वात अलि कहियौ हरि सौ ,	उ०	१५०
इन अँखियन आगैँ तैँ मोहन,	गो०	४६
इनकौँ ब्रजहोँ क्यौँ न बुलावहु ।	रा०	११७
इन नैननि मोहिँ बहुत सतायौ ।	वृ०	१५६
इहिँ अंतर मधुकर इक आयौ ।	उ०	४६
इहिँ डर बहुरि न गोकुल आए ।	उ०	१४२
इहिँ डर माखन चोर गड़े ।	उ०	६६
इहिँ दुख तन तरफत मरि जैहँ ।	म०	११३
इहिँ विधि पावस सदा हमरैँ ।	उ०	१२६
इहिँ विधि वेद मारग सुनौ ।	वृ०	८२
उग्रसेन कौँ दियौ हरि राज ।	म०	२८
उठे कहि माधौ इतनी वात ।	म०	३८
उत नंदहिँ सपनौ भयौ,	म०	२
उती दूर तैँ को आवै री ।	द्वा०	२६
उनकौँ ब्रज बसियौ नहिँ भावै ।	उ०	११६
उपमा नैन न एक रही ।	उ०	६५
उपमा हरि तनु देखि लजानी ।	वृ०	१५१
उमँगौ ब्रज नारि सुभग, कान्ह बरप गाँठि उमंग,	गो०	१७

उरमा लियौ हरि कौँ लपटाइ ।	वृ०	३१
उलटि पग कैसै दीन्हौ नंद ।	म०	४०
उलटी रीति तिहारी ऊधौ,	उ०	६१
ऊधौ अँखिया अति अनुरागी ।	उ०	६६
ऊधौ इक पतिया हमरी लीजै ।	उ०	१५२
ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।	उ०	२१
ऊधौ इतनी कहियौ जाइ ।	उ०	१४७
ऊधौ इतनी कहियौ बात ।	उ०	१५६
ऊधौ कहा करै लै पाती ।	उ०	४५
ऊधौ कही सु फेरि न कहिए ।	उ०	७१
ऊधौ कही साँची बात ।	उ०	३६
ऊधौ कहौ हरि कुसलात ।	उ०	३८
ऊधौ काहे कौँ भक्त कहावत ।	उ०	१०८
ऊधौ कोठ नाहिँनँ अधिकारी ।	उ०	१२१
ऊधौ कोकिल कूजत कामन ।	उ०	१३०
ऊधौ क्यों बिसरत वह नेह ।	उ०	१४०
ऊधौ जब ब्रज पहुँचे जाइ ।	उ०	१६३
ऊधौ जात ब्रजहिँ सुने ।	उ०	१६
ऊधौ जू, कहियौ तुम हरि सौँ जाइ ।	उ०	१५१
ऊधौ जोग कहा है कीजतु ।	उ०	१३३
ऊधौ जोग जोग हम नाहीं ।	उ०	१२५
ऊधौ जोग बिसरि जनि जाहु ।	उ०	१०७
ऊधौ जौ हरि हिनू तुम्हारे ।	उ०	११२
ऊधौ तिहारे पालागति हैं ।	उ०	१५६
ऊधौ तुम ब्रज की दसा बिचारौ ।	उ०	७५
ऊधौ तुम हौ निकट के बासी ।	उ०	८४
ऊधौ तुम यह निहचै जानौ ।	उ०	६
(ऊधौ) ना हम बिरहिन ना तुम दास ।	उ०	१०६
ऊधौ पा लागति हैं कहियौ ।	उ०	१६१
ऊधौ बानी कौन दरैरौ,	उ०	७४

ऊधौ भली भई ब्रज आए ।	उ०	१०२
ऊधौ भलौ ज्ञान समुझायौ ।	उ०	१७४
ऊधौ मन अभिमान बढ़ायो ।	उ०	१०
ऊधौ मन न भए दस बीस ।	उ०	६५
ऊधौ मन नहीं हाथ हमारै ।	उ०	६४
ऊधौ मन माने की बात ।	उ०	१४१
ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाही ।	उ०	१८७
ऊधौ मोहि ब्रज बिसरत नाही ।	उ०	१८६
ऊधौ मौन साधि रहे ।	उ०	११८
ऊधौ लै चल लै चल ।	उ०	११०
ऊधौ सुधि नाही या तन की ।	उ०	१४४
ऊधौ मुनहु नैकु जो बान ।	उ०	१२४
ऊधौ हम आबु भई बड़ भागी ।	उ०	५५
ऊधौ हमरी सौ तुम जाहु ।	उ०	११७
ऊधौ हगहि न जोग सिलेवै ।	उ०	६१
ऊधौ हरि काहे के अंतरजामी ।	उ०	७६
ऊधौ हरि गुन हम चकडोर ।	ऊ०	६०
एक गाउँ के वास सखी हौं,	वृ०	१४३
एक द्यौस कुंजनि मैं माई ।	म०	११०
एक सुत नंद अहीर के ।	म०	२४
ऐसी कँवरि कहीं तुम पाई ।	रा०	११६
ऐसी प्रीति को बलि जाउँ ।	ब्रा०	१२
ऐसी बात कहौ जनि ऊधौ ।	उ०	८८
ऐसी रिष मै जो धरि पाऊँ ।	गो०	६२
ऐसे आपुस्वारथी नैन ।	वृ०	१६१
ऐसै जनि बोलहु नैद-साला ।	वृ०	११२
ऐसौ जोग न हम पै होइ ।	उ०	१०४
ऐसौ दान माँगियै नहिँ जौ,	वृ०	१११
ऐसौ सुनियत है बैसाख ।	उ०	१२८

और सकल अंगनि तै ऊँचौ,	उ०	६४
कंत सिधारौ मधुसूदन पै	छा०	६
कंस नृपति अक्रूर बुलाये ।	म०	१
कंस बध्यौ कुब्रिजा कैँ काज ।	म०	५०
कस बुलाइ दूत इक लीन्हौ ।	वृ०	२०
कन्हैया तू नहिँ मोहिँ डरात ।	गो०	५६
कपट करि ब्रजहिँ पूतना आई ।	गो०	८
कपटो नैननि तैँ कोउ नाहौँ ।	वृ०	१६५
कब्र देखैँ इहिँ भाँति कन्हई ।	म०	७०
कब्ररी मिले स्याम नहिँ जानौँ ।	रा०	५३
कबहुँ सुधि करत गुपाल हमारी ।	उ०	३३
कमल-नैन हरि करौ कलेवा ।	गो०	३२
कर कपै, कंकन नहिँ छूटै ।	प०	३
करत अचगरी नंद महर कौ ।	वृ०	११०
करत कन्ह ब्रज धरनि अचगरी ।	गो०	५४
करतल-सोभित बान धनुहियाँ ।	प०	२
करति अबसेर वृषभानु नारी ।	रा०	८८
करन दै लोगनि कौँ उपहास ।	वृ०	१४२
कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत ।	गो०	१०
करि गए थोरे दिन की प्रीति ।	म०	६१
करिहौ मोहन कहूँ सँभारि,	म०	११५
करी गोपाल की सब होइ ।	वि०	२८
कहत नंद जमुमति सौँ बात ।	गो०	४७
कहत स्याम श्रीमुख यह बानी ।	वृ०	८४
कहन लागे मोहन मैया-मैया ।	गो०	२३
कहाँ रह्यौ मेरौ मन-मोहन ।	म०	४५
कहा कहति तू मोहिँ री माई ।	वृ०	१३७
कहा तुम इतनैँ हि कौँ गरबानी ।	रा०	१४३
कहा भई धनि बाबरी, कहि तुमहिँ सुनाऊँ ।	रा०	१२२
कहा भयो जौ घर कैँ लरिका	गो०	६४

कहा भयौ मेरौ गृह माटी कौ ।	द्वा०	१७
कहा हीत जो हरि हित चित धरि	उ०	१३७
कहा हौँ ऐसै ही मरि जैहौँ ।	म०	१५
कहि धौँ री बन बेलि कहूँ तैँ देखे हैं नँद-नँदन ।	वृ०	८६
कहि धौँ सखी बटाऊ को हँ ?	प०	५
कहिबे मैँ न कछू सक राखी ।	उ०	१७७
कह्यौ कान्ह सुनि जसुदा मैया ।	उ०	३४
कहियौ जसुमति की आसीम ।	उ०	१६५
कहियौ ठकुराइति हम जानी ।	उ०	७८
कहि राधा हरि कैसे हँ ।	रा०	४५
कहि राधा ये को हँ री ।	रा०	११५
कहि राधिका बात अब सॉची ।	रा०	५२
कहै भामिनी कंत सौ, मोहिँ कंध चढ़ावहु ।	वृ०	६२
(कहौँ कहा) अंगनि की सुधि बिसरि गई ।	वृ०	३६
काकौ काकौ मुख माई बातनि कौँ गहियै ।	रा०	३१
काग-रूप हक दनुज धरयो ।	गो०	६
कान्ह कहत दधि-दान न दैहौ ?	वृ०	११७
कान्ह कह्यो बन रैनि न कीजै ।	रा०	८५
कान्ह कँवर की करहु पासनी,	गो०	१५
कान्हहिँ बरजत किन नँदरानी ।	गो०	५१
काहू के कुल तन न विचारत ।	वि०	६
काहे कौँ कहि गए आइहँ,	ग०	१२६
काहे कौँ गोपीनाथ कहावत ।	उ०	८०
काहँ कौँ पर-घर छिनु-छिनु जाति ।	रा०	३५
काहे कौँ पिय पिथहिँ रटति हौ,	म०	१०८
काहे कौँ रोकत मारग सूधौ ।	उ०	१२०
काहँ न मुरजी सौँ हरि जोरँ ।	वृ०	४६
काहँ पीठि दई हरि मोसौँ ।	मं०	७३

किते दिन हरि-सुमिरन त्रिनु खोए ।

वि० ३२

किथौँ धन गरजत नहि उन देसनि ।	म०
कियौ जिहिँ काज तप घोष-नारी ।	वृ०
कियौ सुर-काज गृह-चले ताकैँ	म०
किलकत कान्ह बुटुचवनि आवत ।	गो०
कुन्नरी पूरब तप करि राख्यौ ।	म०
कुबिजा नहिँ तुम देखी हैं ।	म०
कुल की कानि कहाँ लागि करिहैं ।	रा०
कुल की लाज अकाज कियौ ।	रा०
केहिँ मारग मैँ जाउँ सखी री,	वृ०
कैसेँ मिले पिय स्याम सँघातो ।	द्वा०
कैसेँ री यह हरि करिहैं ।	म०
कैसेँ हैं नंद-सुवन कन्हारै ।	रा०
कोउ ब्रज बँचत नाहिँन पाती ।	उ०
कोउ माई आवत है तनु स्याम ।	उ०
कोउ माई बरजै री या चंदहिँ ।	म०
कोउ माई लैहै री गोपालहिँ ।	वृ०
कोऊ सुनत न बात हमारी ।	उ०
कोकिल हरि कौ बोल सुनाउ ।	म०
कोटि करौ तनु प्रकृति न जाइ ।	म०
को माता को पिता हमारैँ ।	वृ०
कृपा विंधु हरि कृपा करौ हो ।	वृ०
खंजन नैन सुरँग रस माते ।	रा०
खेलत मैँ को काकौ गुसैयाँ ।	गो०
खेलत स्याम, सखा लिए संग ।	वृ०



१६	खेलत हरि निकसे ब्रज खोरी ।	रा०	१
२५	खेलन कैँ मिस कुँवरि राधिका,	रा०	७
३२	खेलन कौँ मैँ जाउँ नहीं ?	रा०	३६
१६	खेलन दूरि जात कत कान्हा ।	गो०	३४
३१	गई वृषभानु-सुता अपनैँ घर ।	रा०	४
४८	गए स्याम ग्वाल्लिनि घर सुनैँ ।	गो०	५३
७५	गए स्याम तिहिँ ग्वाल्लिन कैँ घर ।	गो०	४२
७२	गन गंघर्व देखि सिहात ।	वृ०	१२८
६४	गरब भयो ब्रजनारि कौँ, तत्रहीं हरि जाना ।	वृ०	८७
१६	गरुड-आस तैँ जौँ झौँ आयो ।	वृ०	३६
१६	गहसु जानि लावहु गोकुल जाइ ।	उ०	२३
४७	गह्यौ कर-स्याम भुज मल्ल अपने धाइ ।	म०	२६
३२	ग्वारनि कही ऐसी जाई ।	म०	४६
४४	ग्वारिनि जब देखे नैँद-नंदन ।	वृ०	११६
२६	गिरि जनि गिरैँ स्याम के कर तैँ ।	वृ०	७३
०५	गिरि पर बरषन लागे बादर ।	वृ०	६६
३५	गिरिवर स्याम की अनुहारि ।	वृ०	६७
७८			
०१	गुप्त मते की बात कहौँ,	उ०	१११
४६	गुरु-ग्रह हम जब बन कौँ जात ।	ब्रा०	१२
२१	गुरु बिनु ऐसी कौन करैँ ?	वि०	१३
६५	गोकुलनाथ विराजत डोल ।	रा०	१६४
४७	गोकुल प्रगट भए हरि आइ ।	गो०	३
३५	गोपाल राइ दधि माँगत अरु रोटी ।	गो०	२४
२३	गोपाल राइ निरतत फन-प्रति ऐसै ।	वृ०	३५
	गोपाल राइ हौँ न चरन तजि जैहौँ ।	म०	३६
	गोपालहिँ पावौँ धौँ किहिँ देस ।	म०	७१

गोपालहिँ माखन खान दै ।	गो०	४४
गोपी कहति धन्य हम नारी ।	वृ०	१२७
गोपी सुनहु हरि सदेस ।	उ०	३६
गोपी सुनहु हरि संदेस ।	उ०	८७
घट भरि दियौ स्याम उठाइ ।	वृ०	१०६
घर घर इहँ सव्द परचौ ।	उ०	२८
घरनि-वरनि ब्रज होति ब्रधार्ई ।	वृ०	७५
घरहिँ जाति मन हरष बढ़ायौ ।	रा०	२६
घरही के बाढ़े रावरे ।	उ०	७२
चकई री, चलि चरन-सरोवर,	वि०	४६
चरन-कमल अंदौ हरि-राइ	वि०	१
चलत गुपाल के सब चले ।	म०	६०
चलत जानि चितवतिँ ब्रज-जुवती,	म०	५
चलत देखि जमुमति सुख पावै ।	गो०	२१
चलन चलन स्याम कहत,	म०	४
चली बन बेनु सुनत जब धाइ ।	वृ०	८०
चलौ किन मानिनि कुंज-कुटीर ।	रा०	१२५
चितवनि रोकैँ हूँ न रही ।	रा०	४२
चितवनि रोकैँ हूँ न रही ।	वृ०	१५२
चूक परी हरि की सेवकाई ।	म०	५४
चोरी करत कान्ह धरि पाए ।	गो०	५०
चैँकि परी तन की सुख आई ।	वृ०	२७
जटुपति जानि उद्धव रीति ।	उ०	२
जटुपति लख्यौ तिहिँँ मुसुकात ।	उ०	६

जननी, हैं अनुचर रघुपति कौ ।	प०	१०
जनि कोउ काहू कैँ बस होहि ।	म०	८६
जब ऊधौ यह बात कही ।	उ०	८
जब तैँ प्रीति स्याम सौँ कीन्ही ।	रा०	५७
जब तैँ सुन्दर धदन निहारयौ ।	उ०	६३
जब मैं हहाँ तैँ जु गयौ ।	उ०	१६७
जब हरि मुरली अधर धरत ।	कुं०	३८
जबहिँ कह्यौ ये स्याम नहीँ ।	उ०	३०
जबहिँ चले ऊधौ मधुवन तैँ ,	उ०	२४
जबहिँ बन मुरली लयन परी ।	कुं०	७६
जबहिँ स्याम तन, अति विस्तारयौ ।	कुं०	३२
जबहीँ रथ अक्रूर चढ़े ।	म०	१०
जमुना-जल विहराते ब्रज-नारी ।	रा०	४१
जमुना-तट देखे नैँ नंदन ।	वृ०	५७
जसुदा कहँ लौँ कीजै कानि ।	गो०	४५
जसुदा कान्ह-कान्ह कैँ बूझै ।	म०	४३
जसुमति अतिहीँ भई विहाल ।	म०	७
जसुमति करति मोकौँ हेत ।	उ०	१४
जसुमति कहति कान्ह मेरे प्यारे,	गो०	७२
जसुमति जबहिँ कह्यौ अन्हवावन,	गो०	२८
जसुमति डेरत कुँवर कन्हैया ।	वृ०	२८
जसुमति तेरौ बारौ कान्ह अतिहीँ जु अचगरी ,	गो०	६१
जसुमति मन अभिलाप करै ।	गो०	१२
जसुमति राधा कुँवरि सँवारति ।	रा०	६
जसोदा हरि पालनैँ भुलावै	गो०	७
जाइ सबै कंसहिँ गुहरावहु ।	वृ०	११८
जागि उठे तब कुँवर कन्हैया ।	वृ०	१७
जागौ जागौ हो गोपाल ।	गो०	३१
जा दिन तैँ गोपाल चले ।	उ०	८५
जा दिन तैँ हरि दृष्टि परे री ।	रा०	५६

जा दिन मन पंछी उडि जैहै ।	वि०	३६
जा दिन संत पाहुने आवत ।	वि०	५०
जान जु पाए हौं हरि नीकै ।	गो०	४७
जानि करि बावरी जनि होहु ।	उ०	५६
जापर दीनानाथ दरै ।	वि०	१०
जीवन मुख देखे कौ नीकौ ।	उ०	११४
जुवति इक आवति देखी स्याम ।	वृ०	१०५
जेवत कान्ह नंद इकठौरे ।	गो०	३७
जैसै तुम गज कौ पाउँ छुड़ावै ।	वि०	६
जैहै कहाँ मोतिसरि मोरी ।	रा०	८१
जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै ।	उ०	८२
जो जन ऊधौ मोहि न बिसारत ।	उ०	१८८
जो पै हिरदै माँक हरी ।	उ०	१०३
जो सुख होत गुपालहिँ गाएँ ।	वि०	१६
जौ कोउ बिरहिनि कौ दुख जाने ।	उ०	१४३
जौ तुमही हौ सत्रके राजा ।	वृ०	१२३
जौ देखै द्रुम के तरै, मुरझी सुकुमारी ।	वृ०	६३
जौ विधना अपवस करि पाऊँ ।	रा०	५१
जौ लौँ मन-कामना न छूटै ।	वि०	५२
ज्ञान बिना कहँवे सुख नाही ।	उ०	७०
झिक्कि कै नारि, दै गारि गिरधारि तब,	वृ०	३०
झूँमक सारी तन गोरै हो ।	रा०	१५६

भूलत स्याम स्यामा संग ।	रा०	१५८
ठाढी अजिर जसोदा अपनैँ,	गो०	२६
ढोटा नंद कौ यह री ।	म०	१६
तजौ मन, हरि त्रिसुखन कौ संग ।	वि०	४४
तब ऊधौ हरि निकट बुलायौ ।	उ०	१६
तब तुम मेरैँ काहे कौँ आए ।	उ०	१६२
तब तैँ इन सबहिनि सजु पायौ ।	उ०	१८१
तब तैँ छीन सररी सुबाहु ।	उ०	१६४
तब तैँ नैन रहे इकटकहीँ ।	वृ०	१६३
तब तैँ बहुरि न कोऊ आयौ ।	द्वा०	२१
तब तैँ मिटे सब आनंद ।	म०	५२
तब नागरि जिय गर्ब बढ़ायौ ।	वृ०	६१
तब नागरि मन हरष भई ।	रा०	२४
तब बसुदेव हरपित गात ।	म०	२६
तब रिस क्रियौ महावत भारी ।	म०	२३
तब हरि कौँ टेरत नंदरानी ।	रा०	१४
तब हौँ नगर अजोध्या वैहौँ ।	प०	१३
तबहिँ लपँग-सुत आइ गए ।	उ०	४
तबहिँ स्याम इक बुद्धि उपाई ।	गो०	६७
तबहौँ तैँ हरि हाथ बिकानी ।	रा०	५५
तरुनी स्याम-नस मतवारि ।	वृ०	१३४
तातैँ अति मरियत अनसोसनि ।	द्वा०	२८
तातैँ सेइयै श्री जदुराइ ।	वि०	३१
विहारौ कृष्ण कहत कह जात ?	वि०	४०

तुम कहुँ देखे स्याम त्रिसाली ।	वृ०	८८
तुम कुल बधू निलज जनि हूँ हौ ।	रा०	६७
तुम जानति राधा है छोटी ।	रा०	६३
तुम पठवत गोकुल कौँ जैहौँ ।	उ०	११
तुम पावत हम घोष न जाहिँ ।	वृ०	८३
तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत ।	वि०	२०
तुम सौँ कहा कहैँ सुंदर घन ।	रा०	१६
तुमहिँ बिना मन धिक अरु विक घर ।	वृ०	१३२
तुम्हरे देस कागद मसि खूटी ।	द्वा०	२३४
तुरत ब्रज जाहु उपँग-सुत आबु ।	उ०	१२
तेरी जीवन मूरि मिलहि किन माई ।	द्वा०	४३
तेरैँ आवैँगे आबु सखी हरि ।	रा०	१६१
(तेरैँ) भुजनि बहुत बल होइ कन्हैया ।	वृ०	७६
तेहि किन रुठन सिखई प्यारी ।	रा०	१५१
तैँ कत तोरयो हार नौसरि कौ ।	वृ०	११३
तैँ ही स्याम भले पहिचाने ।	रा०	४८
तोहिँ स्याम हम कहा दिखावैँ ।	रा०	६५
तौ तू उड़ि न जाइ रे काग ।	उ०	२६
तौ हम मानैँ बात तुम्हारी ।	उ०	१०६
दिन दस घोष चन्हु गोपाल ।	उ०	१७३
द्विज कहियौ जदुपति सौँ बात ।	द्वा०	४
द्विज पातो कहियौ स्यामहिँ ।	द्वा०	३
दौजे कान्ह काँधे कौ कंबर ?	रा०	८४
दूरहिँ तैँ देख्यौ बलवीर ।	द्वा०	११

दूरि करहि बीना कर धरिबौ ।	म०	१०४
दूसरै कर बान न लैहौ ।	प०	६४
देखत नंद कान्ह अति सोवत ।	वृ०	१६
देखियति कालिंदी अतिकारी ।	म०	६४
देखि सखी उत है वह गाँउ ।	म०	८१
देखौ माई सुंदरता कौ सागर ।	वृ०	१४५
देन आए ऊधो मत नीकौ ।	उ०	५२
देवकी मन मन चकित भई ।	गो०	२
देह धरे कौ कारन सोई ।	रा०	२५
द्वै मैं एकौ तौ न भई ।	वि०	२६
दोउ टोटा गोकुल-नायक मेरे ।	म०	४१
धन्य धन्य ब्रजभानु-कुमारी ।	रा०	१४
धन्य धन्य वृषभानु-कुमारी,	रा०	१४८
धनि धनि यह कामरि मोहन त्याम की ।	वृ०	५४
धनि वृषभानु-सुता बड़ भागिनि ।	रा०	१२०
धनि यह वृदावन की रेनु ।	वृ०	१४
धनुष साला चले नन्दलाला ।	म०	२१
धीर धरहु फल पावहुगे ।	रा०	१३०
धोखैं ही धोखैं डहकायौ ।	वि०	४२
नँद-नँदन तिय-छत्रि तनु काछे ।	रा०	११२
नँद-नँदन सुखदायक हैं ।	रा०	१३२
नँद-नन्दन हँसे नागरी-मुख चितै,	रा०	१२०
नन्द करत पूजा, हरि देखत ।	गो०	३८
नद कहौ बी कहँ छाँड़े हरि ।	म०	४२

नन्द गण खरिकहि हरि लीन्हे ।	रा०
नंद जसोदा सब ब्रजवासी ।	द्वा०
नन्द जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ ।	गो०
नंद-नंदन वृषभानु-किसोरी,	रा०
नंद नंदन सौँ इतनी कहियौ ।	उ०
नन्द ब्रजा की बात सुनौ हरि ।	रा०
नंद भिदा होइ घोष विधारौ ।	म०
नन्द-महर-धर के पिछवारैँ,	रा०
नन्दलाल सौँ मेरो मन मान्यौ,	वृ०
नन्द-सुवन गारुड़ी बुलावहु ।	रा०
नंद हरि तुमसौँ कहा क्यौ ।	म०
नटवर-बेष धरे ब्रज आवत ।	वृ०
नर तैँ जनम पाइ कह कीनो ?	त्रि०
नवल नंद नंदन रंग भूमि राजैँ ?	म०

ना जानौँ तबहीं तैँ मोकौँ,	रा०
नाथ अनाथनि की सुधि लीजै ।	म०
नाथत व्याल विलम्ब न कीन्हौ ।	वृ०
नाना रँग उपजावत स्याम ।	रा०
नाम कहा तेरो री प्यारी ।	रा०
नारद ऋषि नृप सौँ यौँ भापत ।	वृ०

नित्य धाम वृंदावन स्याम ।	रा०
निरखत ऊधौ कौँ सुख पायौ ।	उ०
निरखतिँ अंक स्याम सुंदर के	उ०
निरखि पिय-रूप तिय चकित भारी ।	रा०
निरगुन कौन देस कौ बासी ?	उ०
निसि दिन बरषत नैन हमारे ।	म०

नीकैँ तप कियौ तनु गारी ।	वृ०
नीकैँ देहु न मेरी गिँडुरी ।	वृ०



५	नीकैँ रहियौ जसुमति मैया ।	उ०	२२
४२			
२२	नैँ कु निकुंज कृपा करि आइयै ।	रा०	१३६
३२	नैन करैँ सुख, हम दुख पावैँ ।	वृ०	१६०
५४	नैन चपलता कहौँ गँवाई ।	रा०	१३७
६	नैन न मेरे हाथ रहे ।	वृ०	१५८
३५	नैन भए वष मोहन तैँ ।	वृ०	१६२
८२	नैन सलोने स्याम, बहुरि कव आवाहिँगे ।	म०	८६
४१	नैना धूँवट मैँ न समात ।	वृ०	१६६
१२	नैना भए अनाथ हमारे ।	द्व०	२५
४४	नैननि सौँ भगारौँ करिहौँ री ।	वृ०	१६४
४६			
३३	पंथी इतनी कहियौ वात ।	म०	५७
२७	पथिक कह्यौ ब्रज जाइ,	द्व०	२४
	पथिक, कहियौ हरि सौँ यह बात ।	द्व०	४१
५८	पनघट रोके रहत कन्हारै ।	वृ०	१०४
६३	परम चतुर वृषभानु दुलारी ।	रा०	६०
३३	परसुराम तेहिँ औसर आए ।	प०	४
३३	परी पुकार द्वार गृह गृह तैँ ।	उ०	५१
८	परेखौ कौन बोल कौ कीजै ।	म०	६५
१६	पहिलैँ प्रनाम नँद्राइ सौँ	उ०	२०
५६	पाती बाँचत नंद डराने ।	वृ०	२१
३२	पाती मधुवन तैँ आई ।	उ०	४२
४१	पाती मधुवन ही तैँ आई ।	उ०	४०
११			
७७			
७६	पिय तेरैँ बस यौँ री माई ।	रा०	६७
	पिय प्यारी खेलैँ जमुन-तीर ।	रा०	१६०
६	पिय विनु नागिनि कारी रात ।	म०	८४
७	पियहिँ निरखि प्यारी हँसि दीन्हौ ।	रा०	१२३

पुनि-पुनि कहति हैं ब्रज-नारी ।	रा०	४७
पूछी जाइ तात सौँ बात ।	हुं०	२२
प्रकृति जो जाकेँ अंग परी ।	उ०	५३
प्रथम करी हरि माखन-चोरी ।	गो०	४३
प्रथम सनेह दुहुँनि मन जान्यौ ।	रा०	३
प्रभु कौ देखौ एक मुभाइ ।	वि०	४
प्रभु, हौँ सत्र पतितन कौ डोकौ ।	वि०	२२
प्राननाथ हो मेरी सुरति किन करौ ।	रा०	७६
प्रीति करि काहू सुख न लखौ ।	म०	८७
प्रीति करि दोन्ही गरैँ छुरी ।	म०	६२
प्रीति के बस्य ये हैं मुरारी ।	रा०	६१
प्रीति तो मरिबौऊ न बिचारै ।	म०	८८
प्रेम न रुकत हमारे बूतैँ ।	उ०	१२३
फिरि फिरि कहा सिखावल मौन ।	उ०	६०
फिरि ब्रज बसौ गोकुलनाथ ।	म०	७२
फिरि ब्रज बसौ नंद कुमार ।	उ०	१७१
फँट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा ।	हुं०	२५
बंदोँ चरन-सरोज तिहारै ।	वि०	१७
बृंदावन देख्यौ नँद-नँदन,	वृ०	४
बड़ी है राम नाम की ओट ।	त्रि०	१५
बड़ौ मंत्र कियो कुँवर कन्हाई ।	रा०	६८

बनत नशैँ जमुना कौ ऐबो ।	वृ०	५८
बन तैँ आवत घेनु चराए ।	वृ०	११
बनावत रास-मंडल प्यारौ ।	वृ०	६८
बरनौँ बाल-बेष मुरारि ।	गो०	२५
ब्रज के बिरही लोग दुखारे ।	उ०	१६६
ब्रज के लोग फिरत बितसाने ।	वृ०	७०
ब्रज-घर-घर यह बात चलावत ।	वृ०	१०६
ब्रज घर-घर सब होति बधाइ ।	उ०	३७
ब्रज-जुवती रस-रास पर्गीँ ।	वृ०	१०२
ब्रज तैँ द्वैँ रितु पै न गई ।	उ०	१७२
ब्रज पर बदरा आए गाजन ।	म०	६४
ब्रज बसि काके बोल सहौँ ।	रा०	२२
ब्रज बसि काके बोल सहौँ ।	म०	७६
ब्रज बामिनि कौ हेत, हृदय में राखि मुरारी ।	द्वि०	३६
ब्रज बासिनि मोकौँ बिसरायौ ।	वृ०	६८
ब्रज बासिनि सौ कखौँ सबनि तैँ ब्रज हित मेरैँ	द्वि०	४५
ब्रजवासी सत्र सोवत पाए ।	वृ०	१०१
ब्रज मै एक अचंबौँ देख्यौ ।	उ०	१८४
ब्रज मै एकै धरम रख्यौ ।	उ०	१८०
ब्रज मै को उपज्यौ यह भैया ।	वृ०	६
ब्रज मै संभ्रम मोहि भयौ ।	उ०	१८३
ब्रजहिँ बसैँ आपुहिँ बिसरायौ ।	रा०	२३
ब्रत पूरन कियौ नंद-कुमार ।	वृ०	६३
ब्रह्म जिनहिँ यह आवसु दीन्ह्यौ ।	वृ०	१२६
ब्रह्मा बालक-बच्छ हरे ।	वृ०	८
बभन हरे सब कदम चढ़ाए ।	वृ०	६०
बसुद्यौ कुज ब्याहार त्रिचारि ।	म०	३०
बहुरि पपीहा बोल्यौ माई ।	म०	६६
बहुरि हरि आवहिँगे किहि ५ म	म०	६५

बहुरौ देखिनौ इहिँ भाँति ।	म०	६६
बहुरौ हो ब्रज बात न चाली ।	द्वा०	२२
बातैँ सुनहु तौ स्याम सुनाऊँ ।	उ०	१७६
बाँधौँ आजु कौन तोहिँ छोरे ।	गो०	६३
बाँसुरी बजाइ आछे, रंग सौँ सुरारी ।	वृ०	४१
वाजति नंद-अवात बधाई ।	वृ०	६४
बायस गहगहात सुनि मुंदरि,	द्वा०	३८
बारक जाइयौ मिलि माधौ ।	म०	७४
बार-बार मग जोवति माता ।	म०	३६
बार सत्तरह जरासंध, मथुरा चढ़ि आयौ ।	द्वा०	१
बासुदेव की बड़ी बड़ाई ।	वि०	३
बिछुरत श्री ब्रजराज आजु,	म०	१२
बिछुरी मनौ संग तैँ हिरनी ।	पं०	८
बिछुरे री मेरे बाल-सँघाती ।	म०	१०६
बिनती किहिँ बिधि प्रभुहिँ सुनाऊँ ?	प०	१८
बिनती सुनौ दान की चित दै, कैसे तुव गुन गावै ?	वि०	११
बिनु गुपाल बैरिनि भँई कुजैँ ।	उ०	१५५
बिप्र बुलाइ लिए नंदराइ ।	वृ०	६६
बिलग जनि मानौ ऊधौँ कारे ।	उ०	१०१
बिलग हम मानैँ ऊधौँ काकौ ।	उ०	११३
बिहँसि राधा कृष्ण अंक लोन्ही ।	रा०	७८
बिहारी लाल, आवहु, आई छोक ।	वृ०	५
बीर बटाऊ पती लीजौ ।	द्वा०	३१
बूझत जननि कहाँ हुती प्यारी ।	रा०	१०
बूझत स्याम कौन तू गोरी ।	रा०	२
बूझति हैँ अकूरहिँ स्याम ।	म०	१६
बूझति हैँ रकुमिनि पिय इनमैँ	द्वा०	४६

बेगि ब्रज कौं फिरिए नँदराइ ।	म०	३४
बेरस कीजै नाहिँ भाभिनी,	रा०	१५५
बैठी जननि करति सगुनौती ।	प०	१२६
बैठी मानिनि महि मौन ।	रा०	१४०
भए सखि नैन सनाथ हमारे ।	म०	२०
भक्त हंत अवतार धरौँ ।	वृ०	१२२
भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ ।	वि०	४३
भजन विनु कूकर-सूकर जैसौ ।	वि०	४६
भली भई हरि सुरति करी ।	उ०	३१
भवन रवन सबही बिसरायौ ।	वृ०	५६
भावी काहू सीँ न टरै ।	वि०	३०
भुज भरि लई हिरदय लाइ ।	रा०	१०७
भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हे ।	रा०	७०
भूलौ भयौ आपु भेरी चारौ ।	गो०	६६
भूलि नहीं अब मान करौँ री ।	रा०	१०४
भूलौ द्विज देखत अपनौ घर ।	द्वि०	१८
मथुरा जाति हौँ वेचन दहियौ ।	गो०	५२
मथुरा तौँ ये आई हौँ ।	रा०	११६
मथुरा दिन-दिन अधिक बिराजै ।	म०	३२
मथुरा पुर मैँ सोर पर्यौ ।	म०	१८
मथुरा मैँ बस बास तुम्हारौँ ?	रा०	११८
मथुरा हरषित आनु भई ।	म०	१७
मथुकर आपुन होहिँ बिराने ।	उ०	१३८
मथुकर कहिए काहि सुनाइ ।	उ०	५८
मथुकर प्रीति किये पछितानी ।	उ०	१३५

मधुकर भली करी तुम आए ।	उ०	११६
मधुकर स्याम हमारे ईस ।	उ०	६२
मधुकर स्याम हमारे चोर ।	उ०	६८
मधुकर हम न होहिँ वै वेलि ।	उ०	४६
( मधुन तुम ) कही कहाँ तैँ आए हो ।	उ०	४७
मधुवन तुम क्यों रहत हरे ।	म०	६८
मधुवन लोगनि को पतियाई ।	उ०	६८
मन तोसोँ किती कही समुझाइ ।	वि०	४१
मन मैँ रख्यौ नाहिँन ठौर ।	उ०	६७
मनहिँ मन रीभति महतारी ।	रा०	३७
महर-महरि कैँ मन यह आइ ।	वृ०	१
महरि, गारुडाँ कुँवर कन्हाई ।	रा०	१३
महरि तैँ बड़ी कृपन है भाई ।	गो०	५६
महरि मुदित उलटाइ कैँ मुख चूमन लागी	गो०	११
महा बिरह-वन माँझ परी ।	रा०	६६
माई कृष्ण-नाम जब तैँ खवन सुन्यौ है री	रा०	६१
माई भेरो मन पिय सौँ यो लाग्यौ,	रा०	१०५
माई मोकौँ चंद लग्यौ दुख दैन ।	म०	१०६
माई री कैसैँ बनै हरि कौ ब्रज आवन ।	द्वा०	२६
मातु पिता अति त्रास दिखावत ।	रा०	७३
मातु पिता इनके नाहिँ कोइ ।	वृ०	७७
मातु-पिता तुम्हरे धौँ नाहीं ।	वृ०	८१
माधौ जू कहा कहीँ उनकी गति ।	उ०	१७६
माधौ जू मैँ अतिही सच्चुपायौ ।	उ०	१८२
माधव या लगिहै जग जीजत ।	द्वा०	४४
मान करौ तुम और सवाई ।	रा०	१२४
मानौ माई वन घन अंतर दामिनि ।	वृ०	८६
मिलि बिछुरन की वेदन न्यारी ।	म०	६७
मीठी बातनि मैँ कहा लीजै ।	उ०	८३

मुख पर चंद डारौँ वारि	वृ०	१५६
मुरलिया कपट चतुरई ठानी ।	वृ०	४७
मुरलिया मोकौँ लागति प्यारी ।	वृ०	५३
मुरली कहै सु स्याम करैँ री ।	वृ०	४९
मुरली को सरि कौन करे ।	वृ०	४५
मुरली तक गुपालहिँ भावति ।	वृ०	४२
मुरली-धुनि खवन सुनत, भवन रहि न परै ।	वृ०	४०
मुरली स्याम बजावन दै री ।	वृ०	५२
मेघनि जाइ कही पुकारि ।	वृ०	७४
मेरे कुँवर कान्ह बिनु सब कुछ वैमहिँ धर्यौ रहे ।	म०	५९
(मेरे) कमल नैन प्राननि तैँ प्यारे ।	म०	६
मेरे कहे मैँ कोउ नाहिँ ।	वृ०	१३८
मेरे दधि कौ हरि स्वाद न पायौ ।	वृ०	१२६
मेरे दुख कौ ओर नहीं ।	वृ०	५०
(मेरे) नैना बिरह की बेलि बई ।	म०	७८
मेरे मन इतनी सूल रही ।	म०	१११
(मेरे) मोहन तुमहिँ बिना नहिँ जैहौँ ।	म०	३७
मेरो कह्यौ सत्य करि जानौ ।	वृ०	६५
मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै ।	वि०	२५
मैँ अपनी सी बहुत करी री ।	रा०	१०३
मैँ अपनैँ जिय गर्ब किथौ ।	रा०	६८
मैँ अपनौ मन हरत न जान्यौ !	रा०	५९
मैँ दुहिहौँ मोहिँ दुहन सिखावहु ।	वृ०	२
मैँ परदेतिन नारि अकेली ।	प०	१२
मैँ ब्रजनासिन की बलिहारी ।	उ०	१४६
मैँ बरज्यो जमुना-तट जात ।	वृ०	१८
मैँ बलि जाउँ कन्हैया की ।	रा०	८६
मैँ बलि जाउँ स्याम-मुख-छबि पर ।	ग्रं०	१४८
मैँ समुझाई अति अपनौ सौ ।	उ०	१७५

मैँ हरि सैँ ही मान कियौ री ।	रा०	१३१
मैया कबहिँ बढैगी चोटी ?	गो०	२६
मैया बहुत बुरो बलदाऊ ।	वृ०	१२
मैया मैँ नहिँ माखन खायौ ।	गो०	६०
मैया मोहिँ दाऊ बहुत खिभायौ ।	गो०	३३
मैया री, मोहिँ माखन भावै ।	गो०	४१
मैवा द्रौँ न चरैहौँ गाह ।	वृ०	१३
मोंकौँ माई जमुना जम हूँ रही ।	म०	८५
मोहन कहैँ न उगिलौ माटी ।	गो०	३८
मोसौँ कहा दुरावनि राधा ।	रा०	२७
मोसौँ वात सुनहु ब्रज-नारी ।	वृ०	११६
(मोहन) अपनी मैयाँ घेरि लै ।	उ०	१६३
मोहिँ कहतिँ जुवती सब चोर ।	गो०	७०
मोहिँ छुवौँ जनि दूर रहौँ जू ।	रा०	१२१
यह ऋतु रूसिबे की नाहीँ ।	रा०	१५०
यह कमरी कमरी करि जानति ।	वृ०	५५
यह कहि कै तिय धाम गई ।	रा०	१३८
यह गोकुल गोपाल-उपासी ।	उ०	१२७
यह जानति तुम नक्षमहर-सुत ।	वृ०	१२०
यह वृजभानु-सुता वह को है ।	रा०	११४
यह बल केतिक जादौँ राई ।	रा०	७१
यह महिमा येई पै जानैँ ।	वृ०	१३०
यह सुनि कै हँसि मौन रहीँ री ।	रा०	६८
यह सुनि कै हलधर तहँ घाए ।	गो०	६६
ये दिन रूसिबे के नाहीँ ।	म०	६१
ये नैना मेरे ढीठ भए री ।	वृ०	१६७



रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर ।	प०	१
रहि री मानिनि कान न कौजै ।	रा०	१४४
रही जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ीं ।	म०	११
रहु रे मधुकर मधु मतवारे ।	उ०	४८
राखि लेहु अत्र नंद किसोर ।	वृ०	७१
राखौ पत गिरिवर गिरि-भारी ।	वि०	२७
राधा अतिहिँ चतुर प्रवीन ।	रा०	८७
राधा चलहु भवनहिँ जाँहिँ ।	रा०	४४
राधा जल बिहरति सखियनि सँग ।	ग०	४०
राधा डर डराति घर आई ।	रा०	८६
राधा तै हरि कै रँग राँची ।	रा०	६२
राधा नैद-नंदन अनुरागी ।	रा०	६५
राधा नैन नीर भरि आए ।	द्वा०	३६
राधा परम निर्मल नारि ।	रा०	४८
राधा विनय करति मनहीँ मन,	रा०	३६
राधा-भवन सखी मिलि आई ।	रा०	११०
राधा माधव भेंट भई ।	द्वा०	५३
राधा सखी देखि हरषानी ।	रा०	१४५
राधा स्याम की प्यारी ।	ग०	५०
राधा सौँ माखन हरि माँगत ।	वृ०	१२५
राधिका गोह हरि-देह-वासी ।	रा०	१३५
राधिका बस्य करि स्याम पाए ।	रा०	१५७
राधिका हृदय तैँ धोख टारौ ।	रा०	६३
राधे तेरौ वदन बिराजत नीकौ ।	रा०	३०
राधे हरि तेरौ नाम बिचारैँ ।	रा०	१४२
राधेहिँ मिलेहुँ प्रतीति न आवति ।	रा०	१०६
राधेहिँ स्याम देखी आई ।	रा०	१४६
राम धनुष अरु सायक साँधे ।	प०	६
राम भक्त बत्सल निज बानौँ ।	वि०	५
रस रस लीला गाइ सुनाऊँ ।	वृ०	१०३

रास रस स्खमित भईं ब्रजबाल ।	वृ०
रिस करि लीन्ही फेंट छुड़ाइ ।	वृ०
रीती मट्टकी सीस धरैँ ।	ग्रं०
री मोहिँ भवन भयानक लागे,	म०
रुकमिनि चलौ जन्मभूमि जाहिँ ।	द्वा०
रुकमिनि देवी-मंदिर आई ;	द्वा०
रुकमिनि बूझति हैँ गोपालाहिँ ।	द्वा०
रुकमिनि मोहिँ निमेष न बिसरत,	द्वा०
रुकमिनि मोहिँ ब्रज बिसरत नाहीँ ।	द्वा०
रुकमिनि राधा ऐसैँ भेँटी ।	द्वा०
रे मन मूरख जनम गंवार्यौ ।	वि०
रोवति महरि फिरति बिनतानी ।	रा०
लरि कोई कौ प्रेम कहौ अलि कैमैँ छूटत ।	उ०
ललकत स्याम मन ललचात ।	वृ०
ललिता प्रेम-बिबस भई भारी ।	रा०
लाज ओट यह दूरि करौ ।	वृ०
लाल हैँ वारी तेरे मुख पर ।	गो०
लिखि आई ब्रजनाथ की छाप ।	उ०
लिखि नहिँ पठवत हैँ द्वै बोल ।	म०
लै आवहु गोकुल गोपालहिँ ।	म०
लोक-सकुच कुल-कनि तजो ?	वृ०

लोचन दए कुँवरि उधारि ।	ग०	१७
वे हरि सकल ठौर के बाम्नी ।	उ०	११६
वै कह जानैँ पीर पराई ।	म०	५१
वै बातैँ जमुना-तीर की ।	उ०	१२२
सँग राजति वृषभानु कुमारी ।	रा०	१२८
सँदेसनि मधुवन कूप भरे ।	म०	६३
सँदेसौ देवकी सौँ कहियौ ।	म०	५८
संग मिलि कहीं कासौँ बात ।	उ०	३
सखी मुनि एक मेरी बात ।	उ०	७
सखि मोहिँ हरिदरस रस प्याइ ।	बृ०	१४०
सखियनि मिलि राधा घर लाईँ ।	रा०	११
सखी इन नैननि तैँ धन हारे ।	म०	७५
सखी री चातक मोहिँ जियावत ।	म०	१००
सखी री स्याम सबैँ इक सार ।	उ०	१००
सतगुरु-चरन भजे त्रिनु विद्या,	उ०	६३
सब खांटे मधुवन के लोग ।	उ०	६७
सब तजि भजिऐ नद-कुमार ।	वि०	३८
सब दिन एकहिँ से नहिँ होते ।	उ०	६६
सबहिनि तैँ हित हैँ जन मेरौ ।	द्रा०	४६
सबैँ दिन गएँ विषय के हँत ।	वि०	३५
सबैँ सुख लैँ जु गएँ ब्रजनाथ ।	म०	११४
समुक्ति न परति तिहारी ऊधौ ।	उ०	५४
सरद समैँ हूँ स्याम न आएँ ।	म०	१०३
सरन गएँ को को न उबरथौ ।	वि०	७
सम करिहौँ जब मेरी सी ।	बृ०	५१
सहस सकट भरि कमल चलाएँ	वृ०	३७

साँवरौ साँवरौ रैनि कौ जायौ,	उ०	८१
सुंदर स्याम कमल-दल लोचन ।	रा०	७४
सुत-सुख देखि जसोदा फूली ।	गो०	१३
सुता लए जननी समुभावति ।	रा०	३८
सुदामा यह कौं गमन कियौ ।	द्वा०	१४
सुदामा मंदिर देखि डरयौ ।	द्वा०	१५
सुदामा सोचत पंथ चले ।	द्वा०	१०
सुनत हरि रुक्मिनि कौ भंदेस ।	द्वा०	५
सुनहु बात सुवती इक भेरी ।	वृ०	१३१
सुनहु महरि तेरौ लाडिलौ,	वृ०	१०८
सुनहु सखी राधा की बातें ।	रा०	२६
सुनहु सखी राधा की बानी ।	रा०	३३
सुनहु सखी राधा सरि को है ।	रा०	६४
सुनहु स्याम वै सब ब्रज बनिता,	उ०	१७०
सुनि ऊधौ मोहिँ नैकु न बिसरत	उ०	१८५
सुनियै ब्रज की दसा गुसाईँ ।	उ०	१६८
सुनियत ऊधौ लए सँदेसौ,	उ०	१८
सुनियत कहँ द्वारिका बसाई ।	द्वा०	३०
सुनि राधा अब तोहिँ पत्यैहैं ।	रा०	८०
सुनि राधा यह कहा बिचारै ।	रा०	६६
सुनि राधे तोहिँ स्याम दिखैहँ ।	रा०	३४
सुनि री मैया कालिह हीँ, मोतीसरी गँवाई ।	रा०	७६
सुनि री सयानी तिय रुसिबे कौ नेम लियौ,	रा०	१५३
सुनि सुत, एक कथा कहैं प्यारी ।	गो०	३०
सुनि सुनि ऊधौ आवति हाँसी ।	उ०	७९
सुनिहि महावत बात हमारी ।	म०	२२
सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?	प०	११
सुने हैं स्याम मधुपुरी जात ।	म०	८
सुनौ अनुज, इहि बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी ।	प०	७
सुनौ गोपी हरि कौ संदेस ।	उ०	५०

सुनौ हो बीर मुष्टिक चानूर सबै ।	म०	२५
सुपनैँ हरि आएँ हैं किलकी ।	म०	८३
सुफलक सुत हरि दरसन पायौ ।	म०	३
सुरगन सहित इंद्र ब्रज आवत ।	वृ०	७८
सुवा, चलि ता बन कौ रस पीजै ।	वि०	४७
स्याम-अंग जुवती निरखि भुलानीँ ।	वृ०	१४७
स्याम कमल पद-नख की मोभा ।	वृ०	१५४
स्याम कर पत्री लिखी बनाइ ।	उ०	१५
स्याम करत हैं मन की चोरी ।	रा०	६०
स्याम कौन कारे की गोरे ।	रा०	२८
स्याम गरीबनि हूँ के गाहक ।	वि०	८
स्याम तिधा सन्मुख नहिँ जोबत ।	रा०	१३६
स्याम तू अति स्यामहिँ भावै ।	रा०	१४१
स्याम नारि कैँ बिरह भरे ।	रा०	१२६
स्याम भए राधा बस ऐसैँ ।	रा०	११०
स्याम भुजनि की सुंदरताई ।	वृ०	१४६
स्याम मिले मोहिँ ऐसैँ माई ।	रा०	५४
स्याम लियौ गिरेराज उटाइ ;	वृ०	७२
स्याम यह तुमसैं क्यौँ न कहौँ ।	रा०	२०
स्याम राम के गुन नित गाऊँ ।	द्वि०	८
स्याम सखा कौँ गोद चलाई ।	वृ०	२४
स्याम सखि नीकैँ देखे नाहिँ ।	रा०	४६
स्याम सबनि कौँ देखहीँ, वै देखतिँ नाहीं ।	वृ०	६०
स्याम सुख-रासि, रस रासि भारी ।	वृ०	१५३
स्याम-हृदय जल-सुत की माला, अतिहिँ अनूपम छाजै	वृ०	१५५
स्यामहिँ दोष कहा कहि दीजै ।	वृ०	४८
स्यामा स्याम कुंज बन आवत ।	रा०	११३
स्वामी पहिलौ प्रेम सँभारी ।	उ०	१४६
खिखवति चलन जसोदा मैया ।	गो०	२०

सैन दै नागरी गई बन कौ ।	ग०	८३
सो दिन त्रिजटी, कहु कच ऐहै ?	प०	६
सोभा सिधु न अंत रही री ।	गो०	६
सोभित कर नवनीत लिए ।	गो०	१८
सोअत नौद आइ गई स्यामाहिँ ।	वृ०	१५
हँसत सखनि यह कहत कन्हाई ।	वृ०	११५
हँसि बोले गिरिधर रस बानी ।	ग०	२१
हमकौँ हरि की कथा सुनाउ ।	उ०	७३
हमतैँ कछु सेवा न भई ।	उ०	३५
हमतैँ हरि कवहुँ न उदास ।	उ०	१३१
हम तौ इतनैँ ही सचु पायौ ।	द्व०	५७
हम तौ कान्ह केलि को भूखी ।	उ०	८६
हम तौ नंद-धोप के वाली ।	उ०	१२६
हम तौ सत्र बातनि सचु पायौ ।	उ०	५७
हम पर काहैँ भुक्तिँ ब्रजनारी ।	उ०	१७
हम पर हेत किये रहिवौ ।	उ०	१४८
हम भति हीन कहा कछु जानैँ,	उ०	१५३
हप्ररी सुरति बिसारी बनवारी,	ग०	१०२
हमसौँ उनसौँ कौन सगाई ।	उ०	१०५
हमहिँ और सो रोकैँ कौन ।	वृ०	१२४
हमहिँ बख्यौ हो स्याम दिखावहु ।	ग०	४३
हमारी जन्मभूमि यह गाउँ ।	प०	१७
हमारे अंबर देहु सुरारी ।	वृ०	६१
हमारे निर्धन के धन राम ।	वि०	१४
हमारे प्रभु, औगुन चित न धरौ ।	वि०	२४
हमारे माई मोखा बैर परे ।	म०	६८
हमरैँ हरि हारिल की लकरी ।	उ०	१३६
हमैँ नँदनँदन मोल लिये ।	वि०	२६

हरपि स्वाम निय बौंह गही ।	२१०	१०६
हरि अपनैँ आँगन कुछु गावत ।	२१०	२०
हरि किलकत जमुमति की कनियौ ।	२१०	१०
हरि कौँ ठेरति है नँद रानी ।	२१०	३०
हरि कौ मारग दिन प्रति जोवति ।	२१०	११२
हरि गावड़ी तहाँ तत्र आए ।	२१०	१३
हरि गोकुल की प्रीति चलाई ।	२१०	५
हरि जू हते दिन कहाँ लगाए ।	२१०	१११
हरि जू वै सुख बहुरि कहाँ !	२१०	५०
हरि तेरौ भजन कियौ न जाइ ।	२१०	१०
हरि तैँ भलो सुपति सीता कौ ।	२१०	१०१
हरि दरसन कौ तरसतिँ अँखिषौँ ।	२१०	१०
हरि परदेस बहुत दिन लाए ।	२१०	१०
हरि त्रिनु कौन दरिद्र हरै ।	२१०	२०
हरि मुख राधा-राधा वानी,	२१०	१३३
हरि-रस तौँडव जाइ कहूँ लहियै ।	२१०	१३
हरि लँग खेलत है सब फाग ।	२१०	१३३
हरि सब भाजन फोरि पराने ।	२१०	५२
हरि सौँ भूक्ति रुकमिनि ।	२१०	१०५
हरि हरि हरि सुमिरन करौ ।	२१०	२
हलधर कहत प्रीति जसुमति की ।	२१०	१३
हलधर सौँ कहि ग्वालि सुनायौ ।	२१०	६५
है कोउ वैसी ही अनुहारि ।	२१०	२७
हो, ता दिन कजरा मैं दैहौँ ।	२१०	१०
होत सो जो रघुनाथ ठटै ।	२१०	२२
हौँ इक नई बात सुनि आई ।	२१०	४
हौँ इन मोरनि की बलिहारी ।	२१०	१४०
हौँ इहाँ तेरेहि कारन आयौ ।	२१०	३३

हौँ कैसैँ के दरसन पाऊँ ।	द्रा०	२७
हौँ तो माई मथुरा ही पै जैहौँ ।	म०	५६
हौँ फिरि बहुरि द्वारिका आयौ ।	द्रा०	१६
हौँ संग साँवरे के जैहौँ ।	दृ०	१४४
हौँ या माया ही लागी तुम कत तोरत ।	ग०	७७